वैज्ञानिक महावीर

द्रव्य संरक्षण नियम, रिलेटिविटि, क्वांटम थ्यौरी
तथा
बायलाजिकल एवल्युशन के मूल सूत्रधार

Mahavir
The Pioneering Multidisciplinary Scientist

(Theory of Creation, Law of Conservation of Mass & Energy, Space Quantum Field, Theory of Relativity, Quantum Atom, Biological Evolution etc.)

लेखक

डा. एम बी मोदी

(रक्षा अनुसंधान तथा विकास संघटन से सेवानिवृत्त वैज्ञानिक)

© कापी राईट के सर्व अधिकार © DR. M.B. Modi, Ex. Scientist (DRDO) के अधिन है। लेखक के अनुमति बीना इस ग्रन्थ का कोई भी भाग प्रकाशित नही किया जाएगा।

प्रथम संस्करणः ई. सन 2014
ISBN:

पुस्तक प्राप्ति स्थलः
(i) डा. एम. बी. मोदी
बी 5/24 पहली मंजिल, सेक्टर–15
रोहिणी, दिल्ली–110089
फोन–011–27296861
मोबाईल–09968252218
ई–मेल (i) lightquanta@yahoo.co.in

(ii) श्री अरिंजय जैन, श्री तथागत जैन
F-3, ग्रीन पार्क मेन
नई देहली–110016
Delhi 011.26521678
Mumbai 022.26238352

मूल्यः रु. 600.00

आभार
(Aknowledgement)

जिनवाणी के प्रचार-प्रसार में निरंतर व्यस्थ तथा अनेकान्त शोध पत्रिका के सम्पादक एवं दिल्ली विश्व विद्यालय से सेवा निवृत्त प्रोफेसर एम. एल. जैन का इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रेरणात्मक एवं भावनात्मक सहयोग रहा है। प्रो. जैन का सदा आग्रह रहा है कि जैन विज्ञान को सरल और सुबोध भाषा में जैन समुदाय एवं जैन सुशिक्षित युवा वर्ग को उपलब्ध कराया जाय। आपकी इस भावना को ध्यान में रखकर लेखन के विषय, नुतन वैज्ञानिक लेखन शैली एवं संदर्भ के साथ भगवान महावीर के महत्वपूर्ण सिद्धातों को विज्ञान के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। आपके अनमोल सुझाव, प्रेरणा, तथा पुस्तक प्रकाशन में सयोग के लिये हम आपके हृदय से आभारी है।

परम पुज्यनिया साध्वि सम्बोधि श्री जी म. सा. ने पुस्तक के प्रत्येक अध्याय का पठण किया और अध्याय के मर्म को कविता के रुप में संकलित किया। प्रत्येक अध्याय के आरंभ में जो कविता लिखी गई है, वह आप श्री जी की ही कृति है। इस अद्भूत महत्वपूर्ण योगदान के लिये हम आप श्री जी को नतमस्तक वंदना करते है एवं हृदय से आभार प्रकट करते है।

पुस्तक के प्रकाशन में सुश्रावक श्री अरिंजय जैन तथा आपके भ्राता अभिमन्यु जैन और श्री तथागत जैन का आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है। आप तीनो जैन धर्म के मुर्धन्य विद्वान पंडित श्री सुखमाल चंद जी जैन के सुपुत्र है। यह आर्थिक सहयोग आपके पिताश्री के पावन स्मृति में किया गया है। दोनों जैन बंधु, देश-विदेशों में

साहित्य वितरण द्वारा जैन सिध्यान्तों के प्रचार–प्रसार भी कर रहे है। देश–विदेश में हुए अपने अनुभवों के आधार पर आपने प्रस्तुत पुस्तक की उपयोगिता एवं लोक प्रियता बढ़ाने हेतु अनेक सुझाव भी दिये जिन्हे स्वीकार कर लिया गया है। इन धर्मानुरागी जैन बन्धुओं के प्रति हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते है।

अन्त में पाठकों से विनम्र विनती है कि वे अपने सुझाव हमें अवश्व भेजे जिन पर अगले संस्करण में विचार किया जायेगा।

डा. एम. बी. मोदी
lightquanta@yahoo.co.in
Ph. 011-27296861, 0998252218

महावीर का आत्म विज्ञान

मनुज जन्म पाया है हमने, करने को आतम उत्थान।
अब क्या करना, ये जानो पढ़कर जैन महावीर का आत्म विज्ञान।।

लोक-अलोक के भेद खुलेंगे इस पुस्तक के भीतर।
नव तत्वों और षड् द्रव्यों को समझाया है सरल बनाकर।।

जो कहे जैनधर्म वही आधुनिक विज्ञान के स्वर भी बोल रहे।
सदियोंसे अनावृत भेद सभी इन पृष्टों में हम खोल रहें।।

सर्वज्ञ महावीर के वैज्ञानिक सिद्धान्त

Mahavir's Scientific Contribution

केवलज्ञान प्राप्ति के पश्चात, सर्वज्ञ देव की देह से शब्द रहित दिव्य ध्यनि प्रकट हुई, जिसे ग्रहण कर गौतम गणधर ने निम्न सिद्धान्तों का कथन किया। वर्तमान समय में यही विज्ञान के मूल सिद्धान्त भी कहलाते हैं।

१. **विश्व सिद्धान्त (Law of Universe)**

विश्व ईश्वर द्वारा निर्मित नही है, अपितु परमाणु तथा जीव द्वारा निर्मित, आकाश में दिखाई देनेवाला द्रव्य समुह है।

२. **ब्रम्हाण्ड का लोक-अलोक स्वरुप (Observable Space and Empty Space)**

आकाश में सुसंगठीत द्रव्य समुह सिमित है। यह लोकाकाश है। अनन्त तथा असीम आकाश, द्रव्यरहित रहीत है। यह अलोकाकाश है।

(अलोक के अस्तित्व का ज्ञान महावीर की सर्वज्ञला का एक उदाहरण है जिसकी कल्पना भी किसी अवतार पुरुष ने, देवों ने, ईश्वर के दुतों ने अथवा स्वयं ईश्वर ने भी नही की। केवल आईन्स्टाईन ने ई. सन 1915 में अलोक की घोषणा की और वह विश्व के सर्वश्रेष्ट वैज्ञानिक बन गये।)

३. **अवगाहन गुणोंवाला आकाश द्रव्य (General Theory of Relativity)**

खोखला, रिक्त दिखाई देनेवाला आकाश भी एक अवगाहन गुनोंवाला अनादि असीम द्रव्य है। सभी जीव-अजीव पदार्थ आकाश में अवगाहित है।

ई. सन 1915 में सर्वप्रथम आईन्स्टाईन ने स्विकार किया कि आकाश (अंतरिक्ष) एक असीम गुरुत्वाकर्षण शक्ति का क्षेत्र है जिसका प्रभाव प्रकाश की किरणों पर पड़ता है और प्रकाश तथा आकाश में बक्रता आती है। आकाश की गुरुत्वाकर्षण शक्ति के क्षेत्र में परमाणु तथा एनार्जी के गति नियमों को 'जनरल थ्यौरी आफ रिलेटिविटी' कहा जाता है। यही गति नियम महावीर ने धर्म-अधर्म द्रव्य के रुप में दिये हैं।

४. अनन्त प्रदेशी आकाशास्तिकाय तथा असंख्यात प्रदेशी पंचास्तिकाय का सिद्धान्त (Four Dimensional Space-Time Continuum and Vacuum Quantum Fields)

आकाशास्तिकाय अनन्त प्रदेशी तथा लोकाकाश असंख्यात प्रदेशी द्रव्य है। लोकाकाश में पांच अस्तिकाय द्रव्यों का अस्तित्व है। जीव (Observer) को ये पांच अस्तिकाय द्रव्य पांच भिन्न-भिन्न द्रव्यों के रुप में दिखाई देते है जो इस प्रकार है-धर्म, अधर्म, आकाश, जीव और पुदगल।

द्रव्यों के मूल 'अस्तिकाय' स्वरुप को विज्ञान में 'क्वांटम फील्ड' कहते है। विज्ञान के अनुसार सभी द्रव्यों का मूल स्वरुप क्वांटम फील्ड है। जीव (Observer) को क्वांटम फील्ड की अनुभूति क्वांटा, पार्टिकल अथवा परमाणु के रुप में होती है।

ई. सन 1915 में आईन्स्टाईन ने आकाशास्तिकाय को 'स्पेस-टाईम' का चार आयामी क्षेत्र कहा था। वर्तमान समय में वैज्ञानिक इसे व्याकुम क्यांटम फील्ड (Vacuum Quantum Field) भी कहते है।

५. संख्यात, असंख्यात तथा अनन्त आकाश प्रदेशी जीव-अजीव का सिद्धान्त (Theory of Everything अथवा Unified Field Theory)

परमाणु एक आकाश प्रदेशी है। जीव तथा अजीव असंख्यात प्रदेशी द्रव्य है। आकाश अनन्त प्रदेशी द्रव्य है। आकाश प्रदेशों में भेद नहीं होता, उनसे बनी द्रव्य काया में भेद होता है।

आईन्स्टाईन, हिग्ज आदि वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया कि जब कोई परमाणु (पार्टिकल) आकाश प्रदेश में प्रवेश करता है तो उसमें प्रदेशों के गुरुत्वकर्षन शक्ति के कारण भार (Mass) का अनुभव होता है। यह आकाश प्रदेश हिग्ज बोझान अथवा गॉड पार्टिकल कहलाता है और भार प्रदान करने का सिद्धान्त युनिफाईड फील्ड थ्यौरी अथवा थ्यौरी आफ एवरिथींग कहलाती है।

६. **'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' का द्रव्य संरक्षण नियम (Law of Conservation of Mass and Energy)**

द्रव्य का न उत्पाद होता है और न विनाश होता है। लोक में द्रव्य की कुल मात्रा नियत (Constant) है।

परमाणु तथा जीव का न उत्पाद होता है और न ही विनाश। उनमें केवल परिवर्तन होते है और उनकी नयी-नयी पर्यायें बनती है। इस प्रकार संसार मे जीव और परमाणु की संख्या नियत रहती है।

विज्ञान में यह संसार का मूल सिद्धान्त माना गया है जिसके अंतर्गत पदार्थो की उत्पत्ति तथा विनाश होता है। इसे Theory of Closed Universe अर्थात 'ससीम लोक' भी कहा जाता है।

७. **'सत्यासत्य' का सिद्धान्त (Specific Theory of Relativity)**

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार संत् में परिवर्तन होते है। अतः 'सत्', 'असत्' सा प्रतित होता है। 'सत' का शाश्वत स्वरुप 'निरेपेक्ष सत्' है। 'सत्' का बदलता स्वरुप 'असत्'

अथवा सापेक्ष सत् है। निरपेक्ष सत् का ज्ञान केवल सर्वज्ञ को होता है। संसारी जीव को केवल सापेक्ष सत् का ज्ञान होता है। उपरोक्त कथन विज्ञान में Theory of Relativity अथवा सापेक्षता का सिद्धान्त कहलाता है। विज्ञान मे सत् को Absolute Truth और असत् को Relative Truth कहा जाता है।

८. **परमाणु के 'प्रदेश' स्वरूप का सिद्धान्त (Principle of Dual Nature of Matter)**

आगमिक मान्यता है कि पुद्‌गल द्रव्य का सूक्ष्म तथा अंतिम खण्ड अविभाजित परमाणु है, जिसका कोई आयाम (Dimensions) नहीं है। तथापि एक परमाणु एक आकाश प्रदेश में फैला है। एक परमाणु एक आकाश प्रदेश व्याप्त करता है परंतु उसी आकाश प्रदेश पर अनेक परमाणु भी रह सकते है।

विज्ञान में यह सिद्धान्त डयुल नेचर आफ मैटर कहलाता है। इसके अनुसार द्रव्यों का मूल स्वरुप क्वांटम फील्ड है जिसकी प्रतिति पार्टिकल और वेव (Wave) दोनों रुप में हो सकती है। परमाणु का मूल स्वरुप वेव है परंतु जीव (Observer) को उसकी प्रतिती पार्टिकल के रुप में होती है। समान्यतः जिस स्थानपर एक परमाणु है उस स्थान पर दूसरा परमाणु नहीं रह सकता, परंतु यदि परमाणु वेव अथवा तंरग के रुप में है तो एक स्थान पर अनेक वेव रुपी परमाणु रह सकते है।

९. **रुक्ष, स्निग्ध, शित तथा उष्ण स्पर्शोवाला परमाणु तथा उसके उपकार (Quantum Atom and Quantum Theory)**

अविभाज्य, अच्छेद्य, अभेद्य, अदात्य, अग्राह्य परमाणु में चार स्पर्श तथा अनेक प्रकार की गति होती है। ध्वनि, उष्णता,

प्रकाश, अंधकार, छाया, आतप आदि परमाणु के उपकार है। उपरोक्त गुणोंवाले परमाणु को विज्ञान में क्वांटम एटम अथवा वेक्टर एटम कहा जाता है, जिसकी खोज ई. सन 1913 में निल्स बोहर द्वारा हुई थी। रुक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण स्पर्शो के कारण परमाणु अनेक क्वांटम एनर्जी स्टेट में होता है और ध्यनि (Lattice Vibration), उष्णता (Heat), प्रकाश (Light) आदि का उत्सर्जन करता है।

१०. पुरुषार्थ द्वारा एकेन्द्रिय जीव का मनुष्य भव तक क्रम विकास का सिद्धान्त (Darwin's Theory of Biological Evolution)

एकेन्द्रिय जीव पुरुषार्थ द्वारा शरीर विकास करते हुए मनुष्य भव को प्राप्त होता है। इस विकास के फल स्वरुप जीव के ज्ञान में और गुण स्थानों में वृद्धि होती है। चौदह गुणस्थानोंवाला जीव सिद्ध जीव कहलाता है।

ई. सन 1850 में डार्विन ने इसी प्रकार के जीव क्रम विकास का सिद्धान्त दिया था जिसे Theory of Biological Evolution कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार एक कोशिका जीव अथवा एकेन्द्रिय जीव विपरित परिस्थितियों में जिवित रहने के लिए अन्य इन्द्रियों का विकास करता हुआ मनुष्य भाव को प्राप्त करता है।

प्रस्तुत पुस्तक में सर्वज्ञ द्वारा घोषित उपरोक्त सिद्धान्तों का संक्षिप्त वर्णन है। लेखक द्वारा लिखित- **'जैन विज्ञान'** नामक पुस्तक में इनका विस्तृत वर्णन दिया गया है।

Sacred Quotes
(1-8)

(1)

I searched for God and I found myself
I searched for myself and I found God

(2)

Evils can not be curbed by stringent laws, Severe punishments or exhaustive moral lessons but by becoming aware of the working of the Universe and the laws of Karma.

(3)

The Universe is a closed system.
Nothing can be added and,
Nothing can be extracted from it.
The Universe gives you back,
What you have given to it.
It is up to you how to use the Universal law
of Karma for your spiritual evolution.

(4)

Karma means action
Action comes from desire
Desire comes from thoughts
Thoughts come from body requirements.
Inculcate knowledge and the habit of
Aparigraha (Renunciation) far liberation

(5)

Two distinct and seemingly inconsistent elements of reality coexist in a complimentary way. Material Atom and non-material Consciousness coexist in Panchastikaya or five material quantum fields known as Loka, the universe.

(6)

Reduction in Entropy (disorder) leads to Supreme Order

-Third law of Thermodynamics

Supreme Order is a State of Vacuum

-Quantum physics

It is a State of Nirvana, says Bhagwan Mahavir

(7)

Right (Rational) Vision,
Right (Rational) Knowledge and
Right (Rational) Conduct are leads for liberation

(8)

Empty Space devoid of matter is not empty but contains Akash Dravya having Awagahan Guna.

–Mahavir

Empty space is a Four Dimensional Infinite Gravitation Field.

–Einstein

विषय अनुक्रमणिका

प्राथमिक कथन *xxxi*

Foreword *xxxv*

1. आगम शोध कार्य का संक्षिप्त परिचय एवं निष्कर्ष 1
   (Agam Research Objective and Conclusion)
2. आदि वैज्ञानिक श्री महावीर 19
   (Mahavir: The Pioneering Scientist)
3. प्राचीन जिनवाणी का अर्वाचीन स्वरूप 55
   (Relavance of Jainism to Modern Age)
4. जैन 'सत्यासत्य' का सिद्धान्त तथा
   आईन्स्टाईन का सापेक्षतावाद 89
   (Jain Principle of Satya-Satya Vs Einstein's
   Theory of Relativity)
5. विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में धर्मास्तिकाय तथा
   अधर्मास्तिकाय द्रव्य 133
   (Jain Concepts of Potential Fields,
   Atomic & Wave Motion)
6. जैन दर्शन में बायलाजिकल एवल्युशन
   तथा बायोसेन्ट्रिजम् की अवधारणा 171
   (Jain Concepts of Biocentrism
   & Biological Evolution)
7. जैन आगमों में क्वांटम फील्ड थ्यौरी तथा
   क्वांटम फिजिक्स 213
   (Jain Concepts of Quantum Field
   & Quantum Phenomena)

परिशिष्ट 250

प्राथमिक कथन

जैन धर्म अन्य धर्मो से भिन्न है। जैन धर्म के अनुसार 'ईश्वर प्राप्ति' अथवा 'स्वर्ग प्राप्ति' मोक्ष नही है। मोक्ष केवलज्ञान अथवा सर्वज्ञ की अवस्था है जो स्वाध्याय एवं सम्यग् आचरण द्वारा प्राप्त होती है। अरिहंत देवो ने जीव-अजीव पदार्थो के सम्यग् ज्ञान पर देशना दी है। सम्यग् ज्ञान प्राप्त होने पर जीव का आचरण स्वयं सम्यग् हो जाता है। इस पुस्तक में जैन धर्म के ज्ञानपक्ष पर प्रकाश डाला गया है।

जैन दर्शन का जितना महत्व 2600 वर्ष पूर्व था, उससे अनेक गुणा अधिक महत्व, वर्तमान समय में है क्योकि केवल जैन धर्म में विज्ञान सम्मत आचरण का संदेश दिया गया है। भगवान महावीर ने धर्म तथा अध्यात्मिकता की देशना विज्ञान के सिद्धान्तों के माध्यम से दी है। इसके विपरित अन्य धर्मो में यह कार्य ईश्वर आराधना, पुजापाठ,श्रद्धा, कर्मकाण्ड आदि के माध्यम से किया गया है। अहिंसा, अपरिग्रह, कर्म सिद्धान्त, अनेकान्त, स्याद्वाद, श्रावक धर्म, मुनि धर्म, सामाजिक समरसता, पर्यावरण संरक्षण आदि जैन मान्यतायें ठोस वैज्ञानिक सिद्धांतो पर आधारित है और यही वर्तमान सायन्स तथा टेकनालाजी युग की आवश्यकता भी है। **दुर्भाग्यवश भारत की सुशिक्षित युवा पीढ़ी में यह धारणा बढ़ती जा रही है कि 'पश्चिम' से जो ज्ञान आता है, वह 'विज्ञान' है ओर 'पूर्व' का ज्ञान केवल 'सुपरस्टिशन' अर्थात 'अंधविश्वास है। इस भ्रम को दूर करना आत्यावश्यक है। युवा वर्ग के साथ-साथ हमारे आचार्य, मुनि, साधु, साध्वियों, आदि को भी महावीर के विज्ञान से तथा वर्तमान सायन्स से अवगत कराना भी आवश्यक है।**

भगवान महावीर ने 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यं के रुप में द्रव्य संरक्षण नियम', सत्यासत्य के माध्यम से स्पेसिफिक रिलेटिविटी (Specific Relativity), 'आकाशास्तीकाय' द्वारा जनरल रिलेटिविटी (General Relativity) 'पंचास्तिकाय लोक' के रुप में मेटरियल क्वांटम फील्ड (Material Quatum Field), रुक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण स्पर्शवाले परमाणु द्वारा क्वांटम एटम (Quatum Atom) परमाणु के प्रदेश स्वरुप डयुएल नेचर आफ मैटर (Dual Nature of Matter), पुरुषार्थ द्वारा एकेन्द्रिय जीव का मनुष्य भवतक विकास के माध्यम से डार्विन के सिद्धान्त का कथन किया है। अज्ञानता, गरिबी, अकाल, राजकिय अव्यबस्था, सेकड़ो वर्षों की गुलामी, साम्प्रदायिक झगड़े आदि अनेक कारणों से महावीर के विज्ञान का स्वरुप विकृत एवं धुमिल हो गया है और जैन धर्म की वैज्ञानिकता खो गई है। भगवान महावीर के दिव्य वाणी को मूल वैज्ञानिक स्वरुप में प्रस्तुत करने का यह एक लघु प्रयास है। आशा है, पाठक इसे स्वीकार करेंगें और जैन धर्म के गरिमा में चार चांद लगाने में सहायक होगे।

सभी प्रकार की साम्प्रदायिक मान्यता, धार्मिक परम्परा, विभिन्न विद्वानों एवं टिकाकारो द्वारा साम्प्रदायिक वातावरण में किये गये मूल सूत्रो का अथवा गाथाओं का शब्दार्थ आदि से अप्रभावित यह मौलिक शोध कार्य सिद्ध करता है कि भगवान महावीर विश्व के आदि वैज्ञानिक है जिन्होने 'ईश्वर द्वारा निर्मित' विश्व को अस्विकार किया और परमाणु तथा जीव द्वारा निर्मित विश्व की घोषणा की। सर्वज्ञ देव ने विश्व निर्माण के प्राकृतिक नियमों की भी घोषणा की जो वर्तमान विज्ञान के मूल सिद्धान्तों के समान है। हमारा विश्वास है कि आगम तथा अन्य जैन शास्त्रों के मूल सूत्रों का वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण प्रस्तुत करने का यह पहला प्रयास है। पुस्तक की लेखन शैली भी आधुनिक है।

जैन धर्म के वैज्ञानिक सिद्धान्तों को हम ने 'जैन विज्ञान' नामक अपनी पहली पुस्तक में विस्तृत रुप में प्रस्तुत किया है। जिस में निम्न विषयों पर आधुनिक विज्ञान के परिपेक्ष में प्रकाश डाला गया है।

(1) Glimses of Modern Science in Jain Agams.

(2) जैन आगमों में ईश्वर और विश्व की अवधारणा

(3) जैन अंतरिक्ष विज्ञान

(4) जैन द्रव्य विज्ञान

(5) जैन गति विज्ञान

(6) जैन परमाणु तथा स्कन्ध विज्ञान

(7) जैन जीव विज्ञान

(8) जैन कर्म विज्ञान

(9) जैन विज्ञान और आधुनिक विज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन

पाठकों से अनुरोध है कि भगवान की सर्वज्ञता एवं वैज्ञानिकता को ग्रहण करने हेतु उपरोक्त पुस्तक का अवश्य पठन करे।

डा. एम. बी. मोदी

Preview

Teachings of Bhagwan Mahavir are more relevant today, than they were 2600 years ago. Whatever Mahavir said: how to sit, how to stand, how to eat, when to fast so on and so forth, all have scientific reasoning. Lot many things which Mahavir said, are being rediscovered today through Modern Scientific Research. **Unfortunately the elite indians feel that, if something comes from the 'West', it is science but if it comes from the 'East', then it is superstition. Jain religion indeed has science component which is being distorted beyond recognition because of sectarian approach, famine, poverty, ignorance and lack of contextual misunderstanding.**

It is our endeavor to bring out clearly the original Science of Creation, Relativity, Quantum Physics and Biological Evolution as preached by Mahavir which are now being endorsed by the modern scientists.

Bhagwan Mahavir exhibited his 'Omniscient Supreme Self' and 'Cosmic Form' by achieving the highest level of enlightenment– the Kewalgyana. Like a quantum physicist he says, the universe imbibes extreme opposite but complimentary properties and compatible qualities. His basic concepts of 'Creation, Creator God, Absolute and Relative Truth, Dual Nature of Matter, Atomic Motion, Radiation Emission, Biological and Spiritual Evolution etc. resemble the theories proposed by great Scientists like Einstein, Max Born, Schrondinger, Neil's Bohr, De-Brolie, Darwin and Wilzeck.

'The laws and forces of nature created the universe and the human being. The seed has software of the entire tree and Karman Sharira has the software to design and build the human body.' This is the science of Mahavir which is being rediscovered as Genomics in the present times.

"The primary Source of everything is Akashastikaya, an infinite gravity field. The basic space element called Akash Pradesh is the basic unit of everything physical that exists in the universe, says Mahavir. Now physicists are developing theory of everything similar to that of Mahavir's theory which is based on the basic cosmic element what the scientists call Higg's Boson or God particle. Psychologists also started regarding human beings more than Social Animal as Mahavir did.

This book establishes beyond doubt that Jainism is a religion of the past and the religion of the future as well. Jainism is the science of Absolutism, science of Atoms and evolving Souls. It enables a person to see atoms building the universe, Consciousness embedding the matter and all merging in one Panchastikaya what the modern scientists call as Material Quantum Fields.

Scientists say there is a primitive mind and there is a developed mind and Mahavir refers them as primitive consciousness and developed consciousness. The so called mind perishes with the body but Mahavir's 'Consciousness' leaves the body on death and aspires for higher level of enlightenment through the process of Biological Evaluation.

Mahavir addressed the basic question of human existence and advised his followers to understand the universe, analyses the problems and arrive at solutions. You can change your fate. You will find a Guru within yourself and become spiritual even if you go about your domestic duties but do not get attached,' says Mahavir.

अध्याय 1

आगम शोध कार्य का संक्षिप्त परिचय एवं निष्कर्ष

Agam Research Objectives and Conclusion

विषय अनुक्रमणिका

विषय	पेज न.
1. मोक्षमार्ग, कविता	3
2. Research Objectives	5
3. आगम शोध कार्य का संक्षिप्त परिचय एवं निष्कर्ष	9

मोक्षमार्ग

मोक्षमार्ग पर चलने के इच्छुक सुनलो कानों को खोल
इस अध्याय में हीरे मोती मणियाँ बिखरी है अनमोल

जन्म मरण का अंत है करना, मुक्त दुःखो से होना है
दुर्लभ नरभव मिला इसे यों भोगों में नहीं खोना है

वैज्ञानिक महावीर ने जो कुछ कहा आचरण हम कर ले
अन्य कही पर मोक्ष न ढूंढे, यही मुक्ति सुख हम कर ले

धर्म और विज्ञान का बिल्कुल सही समन्वय हो जाये
इस पुस्तक से मोक्ष मार्ग का सरल उपाय सभी पाये।

Research Objective

Jainism is the most progressive religion, yet, it is the most misunderstood and most mispracticed religion mainly because of its rigid code of conduct and negligence its scientific foundation. Unlike other religion, Mahavir believed in the 'Cosmic Origin' of the universe and talked about the Absolute and Relative Truth, Energetically closed Universe, Conservation of Matter, Quantum Physics and Biological Evolution which were hardly understood by the **faithful** and the common man. **Over the long period of history, the science preached by Mahavir, got distorted beyond recognition.**

Our intense research on Jain Agams and Old Jain Scriptures prove beyond doubt that Mahavir's Spiritualism is based on the principles of Material Science. He preached that the Universe is 'Eternal but Evolutionary' in nature. The total quantity of matter in the universe is constant and that the Evolution is carried in cyclic form in accordance with the natural law, '**Upneiva-Vigneiva-Drueiva**', which is known as Conservation Law in the modern science.

Unlike other religious leaders, Mahavir made a distinction between 'Perceived Reality' and 'Absolute Truth'. He says what we see, hear, taste, smell and feel is a 'Reality' but not the 'Truth'. The 'Reality' is perceived in 'Space-Time' reference system while the Truth exists in the 'Time-less' space. The human being is capable of raising the level of his Consciousness (Atman) so that he can see the

'Absolute Truth'. This is the state of Kewalgyana or Omniscience Jain religion is all about acquiring 'Omniscience' through Rational Vision; Right Knowledge and 'Rational Conduct' called 'Samyag Acharan'.

'Non material consciousness is a fundamental feature of the Cosmic Space, because it is fundamentally different from everything physical that we know', says Mahavir. The consciousness takes different forms and identities like trees, animals, human beings, God, etc. The human being has all faculties and means to achieve the highest level of consciousness that of God. Jains call this level of consciousness as Fourteenth Guna Sthana (Fourteen Nine Digit Purity), Sidha or Kewalgyana which is nothing but state of pure knowledge.

After carefully scanning the old Jain Scriptures and analyzing the original verses we conclude that Mahavir is instrumental in discovering the following scientific principles of modern science.

1. The Universe has the 'Cosmic Origin' and not the Divine Origin.
2. The Universe is a closed system and total quantity of its contents remain constant.
3. Akashstikaya (Cosmos) is not an empty space but an infinite gravity field.
4. An atom is the smallest material particle having wave like characterstics (Akash Pradesh).
5. Atoms unite to form molecules in accordance with the law of conservation of mass and

energy. Substances are collections of molecules, but in this process atoms are neither created not destroyed.

6. Atoms have electric charges (Snigdha and Ruksha Sparsha) as well as Quantum Energy States (Sheet and Ushna Sparsha) leading to emission of radiations like heat, light ect.

7. All types of physical, verbal and emotional actions are particulate (atomic) in nature. They can be assumed to be made of Karman Parmanu what the Scientists call as Phonon Particles.

8. Consciousness can influence and control atoms. The universe owes its form to the existence of Jiva or the observer. (Accordingly the Universe may also become Multi-verse)

9. The objective of life is to evolve to the highest level of consciousness. One sense organism can evolve to five sense organism and may ultimately evolve to human being.

10. Human being with creative abilities, powers of comprehension, cognition and reasoning can further evolve to the level of Omniscience or Kewalgyani or Parmatma or God.

Mahavir thus addressed the basic question of human existence and advised his followers to understand the world, analyses the problems and arrive at right solutions.

आगम शोधा कार्य का संक्षिप्त परिचय एवं निष्कर्ष

जैन आगमो में अभिव्यक्तित विज्ञान पर किए गये हमारे शोध कार्य का सार इस पुस्तक में प्रस्तुत है। शोध कार्य के प्रमुख संदर्भ ग्रन्थ इस प्रकार है।

1. श्वेताम्बर जैन आगम विशेष रूप से भगवती सून्न, उत्तराध्ययन सूत्र स्थानांग सूत्र, व्याख्यापज्ञति सूत्र तथा द्रव्यानुयोग।
2. दिगम्बर जैन ग्रंथ–तत्वार्थ सूत्र, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार तथा दव्यसंग्रह।
3. आचार्य महाप्रज्ञ, आचार्य देवेन्द्र मुनि, आचार्य नानेश, जिनेद्र वर्णी तथा अन्य विख्यात जैन दार्शनिको द्वारा रचित साहित्य।

जैनधर्म वैज्ञानिक धर्म हैं। जैन धर्म लोकवादी है, आत्मवादी है, अनेकान्तवादी है, द्वैतवादी है, अद्वैतवादी हैं, भौतिक है, अभौतिक है, नास्तिक दर्शन है और आस्तिक दर्शन भी है। **इसी लिये कहा जाता है कि जैनदर्शन ज्ञान है, विज्ञान है, केवलज्ञान है।** इसके प्रवर्तक श्रमण थे वीतरागी मुमुक्ष आत्माऐं थी, अरिहंत थे, तीर्थंकर थे जिनका सिद्धान्त था–**'अप्पा सो परमाप्पा'**, अर्थात आत्मा ही परमात्मा है। संसारी जीव ईश्वर का सेवक नही है अपितु वह स्वंय लोक में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने की क्षमता रखता है।

ज्ञान तथा आचरण को समान प्रधानता देने वाले जैन धर्म का संदेश है–**'पढमं णाणं तओ दया'** अर्थात् प्रथम ज्ञान तत्पश्चात आचरण। ज्ञान कैसा हो? भगवान कहते है–**'विन्नणे ण समागम्मा धम्मा साहण मिच्छियं,** अर्थात् ज्ञान भी धर्म सम्यग् विज्ञान होना चाहिए। जिन वाणी में विज्ञान सम्यग् धर्म देशना है जिसे आत्मसात कर अनेक मुमुक्षु आत्माएं मोक्ष को प्राप्त हुई है।

भगवान महावीर विश्व के प्रथम वैज्ञानिक हैं जिन्होंने उद्घोष किया, 'विश्व ईश्वर द्वारा निर्मित नहीं है। विश्व, जीव-अजीव द्रव्यों की एक प्राकृतिक शाश्वत परन्तु परिवर्तनशील व्यवस्था है।' जब सर्वज्ञ देव कहते है, **'जे लोयावाई से आयावाई'** अर्थात् जो लोकवादी है वही आत्मवादी है, तब भगवान का वैज्ञानिक स्वरूप झलकता है और जब वे कहते है–**'सम्यगदर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्ग'** तब भगवान की छवि तीर्थंकर की बन जाती है।

अरिहंत देवो ने उद्घोष किया कि जीव तथा जड़-परमाणु विश्व के दो शाश्वत सत् है और द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा भाव की अपेक्षा से उनमे होने वाले परिवर्तन असत् है। **द्रव्यों का यह 'सत्यासत्य' स्वरूप विज्ञान में आइंस्टाइन का सापेक्षतावाद कहलाता है।** महावीर का सत् ही आइन्स्टाईन का निरपेक्ष सत्य (Absolute Truth) है और महावीर का असत् विज्ञान का सापेक्ष सत्य (Relative Truth) है। निरपेक्ष सत्य का ज्ञान सर्वज्ञ को होता है। मनुष्य को केवल सापेक्ष सत्य का ज्ञान होता है। **परमाणु और आत्मा का ज्ञान मनुष्य को उनके अस्तित्व का आभास दिलाते है परन्तु सर्वज्ञ की भांति मनुष्य को उनका साक्षात्कार नही होता।** यही संदेश आईन्स्टाईन अपनी सापेक्षतावाद की थ्यौरी में देते है, जब वे कहते है- "Absolute truth is known only to universal observer. All laws of physics are relative".

प्रचलित धार्मिक तथा सामाजिक परम्परा, अंधविश्वास, ईश्वर उपासना, धार्मिक कर्मकांड, जाति, व्यक्ति, संप्रदाय आदि संकीर्ण विचारों से परे भगवान् महावीर ने Science of Creation and Spiritual Evolution का संदेश जनकल्याण हेतू दिया। **'णाणस्स सारो आयरो'** अर्थात ज्ञान का सार आचरण है, के

उद्घोष के साथ सर्वदर्शी सर्वज्ञ भगवान महावीर ने सहस्रों वर्ष पूर्व मानव समाज को संदेश दिया– **'उपन्नेईवा, विग्नेईवा, ध्रुवेईवा'** अर्थात् 'उत्पाद व्यय-ध्रौव्य' इस संसार का सत् है। **ईसा की सत्रहवीं शताब्दी में यह कथन विज्ञान का मूल सिद्धांत बन गया, जो द्रव्य संरक्षण नियम के नाम से जाना जाता है।**

ई॰ सन् 1785 में न्यूटन नामक वैज्ञानिक ने पृथ्वी की गुरूत्वाकर्षण शक्ति, तथा पदार्थों के गतिनियमों का आविष्कार किया जिससे यूरोप में 'मशीन तथा टेक्नोलाजी' युग और औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution) का आगमन हुआ। न्यूटन ने काल (Time) को एक स्वतंत्र ईकाई कहा और 'भूत, वर्तमान तथा भविष्य को काल की तीन निश्चित अवस्थाऐं मानी **पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव में स्थूल पदार्थ न्यूटन के गति नियमो का पालन करते है, परन्तु परमाणु की गति काल के प्रभाव से मुक्त है और वे न्यूटन के गति नियमो का पालन भी नही करते। परमाणु तथा जीव (आत्मा) आईन्स्टाईन के सापेक्षता के सिद्धांत के अनुसार स्पेस पोटेन्शियल के प्रभाव में गति करते है जिसका वर्णन आगमो में धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्यो के रूप में उपलब्ध है। ये द्रव्य गति तथा स्थिति के उदासीन माध्यम (Passive Medium) नही है अपितु सक्रिय पोटेन्शियल फील्ड (Potential Field) है। जिनके कारण पदार्थो में गति (धर्म भाव) और विश्राम अधर्मभाव उत्पन्न होते है।**

न्यूटन ने केवल पृथ्वी को गुरूत्वाकर्षण शक्ति का क्षेत्र माना था, परन्तु आईंस्टाईन ने संपूर्ण अंतरिक्ष को गुरूत्वाकर्षण शक्ति का क्षेत्र घोषित किया और इस अंतरिक्ष के गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव में परमाणु गति तथा ऊर्जा क्षेत्र के प्रसारण का अध्ययन

किया। **आइन्स्टाईन के लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने संपूर्ण आकाश को गुरूत्वाकर्षण का क्षेत्र बताया था। भगवान महावीर ने इसी आकाशास्तिकाय में मोक्षगामी आत्मा, परमाणु और संसारी आत्मा की ऋजु तथा वक्र गति का कथन किया है।** इस प्रकार काल तथा गति की आगमिक मान्यताएँ न्युटन द्वारा प्रदिपादित व्यवहारिक काल के संदर्भ में नहीं है अपितु आइन्स्टाईन द्वारा प्रतिपादित रिलेटिविस्टिक मोशन' के प्ररिप्रेक्ष्य में है।

निरपेक्ष काल का अस्तित्व नहीं है। काल का अस्तित्व द्रव्य, क्षेत्र और भाव सापेक्ष है। भगवान महावीर ने संसार और द्रव्यों के शाश्वत तथा एकत्व स्वरूप का चितंन 'बहुप्रदेशी पंचास्तिकाय' के रूप में किया है जो केवल काल के अभाव में ही संभव है। आइन्स्टाईन ने भी महावीर की तरह द्रव्यों के एकत्व को 'क्षेत्र-काल' (Space-Time) के संयुक्त क्षेत्र के रूप में दर्शाया है। विश्व का यह, वह स्वरूप है जहां द्रव्यों की भिन्नता मिट जाती है और सभी द्रव्य अस्तिकाय अथवा क्वांटम फील्ड में परिवर्तित हो जाते है। इस प्रकार भगवान महावीर ने द्रव्यो के एकत्व को 'पञ्चास्तिकाय' के रूप में प्रस्तुत किय तो आइन्स्टाईन ने उसे Space-Time का क्षेत्र कहा। **द्रव्यों के एकत्व को भगवान महावीर ने प्रदेश रूप में प्रस्तुत किया और आईन्सटाईन ने** $E = mc^2$ **के रूप में।**

आईन्स्टाईन के अनुसार सभी द्रव्य मूलतः एनर्जी है, जिसकी अनुभूति भिन्न-भिन्न प्रकार के क्वांटा (परमाणु) के रूप में होती है। **जब क्वांटा आकाश प्रदेशो में गमन करता है तो उसमें जड़त्व (Mass) का अनुभव होता है। वैज्ञानिक आकाश**

प्रदेश को गाड पार्टिकल कहते है। एक स्वतंत्र, स्वच्छंद क्वांटा (परमाणु) एक तंरग (Wave) की तरह है। इस प्रकार मुक्त क्वांटा Probability Wave है जिसकी प्रतीति जड अथवा चेतन में संभव है। **इस दृष्टि से द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप** Probability Wave **कहा जाएगा, और 'प्रदेश' जड़ अथवा चेतन क्वांटा का प्रतीक है।**

स्वभाविक जिज्ञासा होती है कि यदि सभी द्रव्य मूलतः एनर्जी वेव है तो उनमें भिन्नता क्यों है? एनर्जी वेब में भिन्नता उनकी फ्रिक्वेंसी अथवा वेव लेन्थ के कारण है। सामान्य भाषा में कहा जाएगा कि भिन्नता उनके वर्ण, रस, गंध और स्पर्श में है। प्रकाश का हरा, पीला, लाल, नीला, आदि रंग भी प्रकाश की फ्रिक्वेंसी को दर्शातें है। **आध्यात्मिक व्यक्ति, 'फ्रिक्वेंसी' अथवा वेव-लेन्थ' शब्दों का प्रयोग नहीं करते, वे भिन्न भिन्न रंगो की लेश्या तथा 'गुणस्थान' शब्दो का प्रयोग करते है। यदि जीव की लेश्या शुभ्र है तो वह चौदहवे गुण स्थान को प्राप्त कर लेता है। शुभ्र लेश्या के जीवों में भिन्नता समाप्त हो जाती है और सभी जीव जीवास्तिकाय के रूप में एक समान हो जाते है। वे सभी केवली है। इसी प्रकार यदि परमाणु के मध्य का वर्ण, रस, गंध और स्पर्श का भेद मिट जाये तो, अनंत परमाणु एक आकाश प्रदेश पर वेब के रूप में (पुदगलास्तिकाय के रूप में) रह सकते है। विज्ञान में परमाणु की इस अवस्था को बोस-आइन्स्टाईन कांडनसेट'** (Bose-Einstein Condensate) **कहते है। इस अवस्था में परमाणुओ का भेद मिट जाता है, वे सभी एक रूप हो जाते है, उनकी अपनी कोई पहचान** (Identity) **नहीं रहती ? इसी प्रकार बोस-आईन्स्टाईन कान्डनसेट जीवों में भी संभव है, जिसे आगमो में जीवास्तिकाय कहा है। अथवा सिध्द अवस्था कहा है।**

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि **जिनवाणी वस्तुतः विज्ञान है जिसका कथन तत्कालीन परंपरानुसार आध्यात्मिक शैली में किया गया है।** संसार के जड़ और चेतन स्वरूप का अध्ययन कर सर्वज्ञ प्रभु ने वर्तमान अंतरिक्ष विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, परमाणु विज्ञान, जीव विज्ञान, कर्म विज्ञान आदि के मूल सिद्धान्तों की घोषणा की। **सर्वज्ञ देव ने कोई वैज्ञानिक प्रयोग (Scienticfic Experiment) नहीं किये परन्तु उन्होंने आत्मिक और बौद्धिक चिन्तन द्वारा निरपेक्ष सत् (Absolute Truth) का अनुभव किया।** आत्मिक और बौद्धिक चिंतन वर्तमान समय में Thought Experiment के नाम से जाने जाते हैं, जिसकी सहायता से आइन्स्टाईन ने सापेक्षता के सिद्धान्त को सिद्ध किया था। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दि में वैज्ञानिकों ने महावीर द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों की पुनः खोज की और आइन्स्टीन, बोहर, हायझेन-बर्ग, मैक्स-बार्न, डीब्रोली जैसे अनेक वैज्ञानिक ई० सन 1885 के बाद नोबल पुरस्कार से सम्मनित किये गये।

हमारा विश्वास है कि भगवान महावीर की वैज्ञानिकता तथा सर्वज्ञता इन तथ्यो से सिद्ध होती है।-

1. आकाश, (लोक और अलोक) की जैन मान्यता एवं वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित Cosmic Space Observable Space और Empty Space में पूर्ण समानता है।
2. द्रव्य सत्ता, द्रव्यों की नित्यता, अनित्ययता, गुण-लक्षण द्रव्यों का परमाणु ओर प्रदेश स्वरूप, स्कन्ध, स्कन्ध निमार्ण के नियम आदि विषयों पर भी दोनों में मतैक्य है।
3. परमाणु और चेतन तत्व द्वारा जीव-अजीव पदार्थों की उत्पत्ति 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' सिद्धान्त के अनुसार वैसे ही होती हैं जैसे Atom और Energy द्वारा Law of

Conservation of Mass and Energy सिद्धान्त के अंतर्गत होती हैं।

4. द्रव्यों के अस्तिकाय, परमाणु और प्रदेश स्वरूप के कथन के द्वारा भगवान माहावीर ने Dual Nature of Matter के सिद्धान्त की और क्वांटम थ्यौरी की नींव रख दी।
5. महावीर का परमाणु, विज्ञान में 'क्वांटा' कहलाता है। अष्टस्पर्शी परमाणु विज्ञान का एटम है और चर्तुर्स्पर्शी कार्मण परमाणु विज्ञान का फोनान (Phonon) है।
6. 'परमाणु-परमाणु' बंध द्वारा स्कन्ध निर्माण की प्रक्रिया और 'परमाणु-प्रदेश' बंध के द्वारा जीव उत्पत्ति की प्रक्रिया वैज्ञानिक अवधारणा अनुसार है।
7. गर्भ द्वारा जन्म की प्रक्रिया और आयुष्य समाप्ति पर मृत्यु की प्रक्रिया का भगवान महावीर का कथन, जीव-विज्ञान की अवधारणा के अनुरूप कीया है। भगवान माहवीर का पुरुषार्थ द्वारा एकेन्द्रिय जीव का पंचेन्द्रिय जीव तक के विकास का सिद्धान्त डार्विन के सिद्धान्त से भिन्न नहीं है। भिन्नता विकास के उद्देश्य में है। जैन अवधारणानुसार इस विकास का उद्देश्य आत्म का चौदह गुण स्थान तक का विकास है परन्तु डार्विन के अनुसार शरीर विकास का उद्देश्य विपरीत परिस्थतियों में जीवित रहना है। इसलिये डार्विन के सिद्धान्त को Survival of the Fittest का सिद्धान्त भी कहा जाता है।
8. पाश्चात्य संस्कृति में 'मोक्ष और केवलज्ञान' अपरिचित शब्द है। **भगवान महावीर के अनुसार केवलज्ञान जीव की वह अवस्था है जिसमें चेतना का स्तर इतना ऊँचा होता है कि वह 'निरपेक्ष और सापेक्ष सत्' दोनों का अनुभव कर सकता है।** 'परमाणु और चेतन' संसार का निरपेक्ष 'सत्' है जो सर्वज्ञ देख पाते हैं। मनुष्य तो नश्वर संसार को देख पाता है और द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार 'सत्' का अनुभव करता है।

भगवान महावीर ने सत् का ज्ञान आत्म चिंतन द्वारा प्राप्त किया था। अर्थात भगवान का प्रतिपादित सत् आत्म सापेक्ष है और वैज्ञानिको द्वारा प्रतिपादित सत्य परमाणु सापेक्ष है। आत्मा स्थिर रहता है। अतः आत्म सापेक्ष सत्य ही निरपेक्ष सत्य है। परमाणु गतिशील है। अतः विज्ञान द्वारा जाना गया सत्य सापेक्ष सत्य है जिसको आईंस्टाईन ने सापेक्षतावाद के रूप में प्रस्तुत किया था।

विश्व, महावीर के विज्ञान से अपरिचित है। महावीर ने द्रव्य संरक्षण नियम, क्वाटंम फिजिक्स और बॉयोलोजिकल एवोलुशन आदि विषयो पर धर्म देशना दी। इसका ज्ञान कदाचित किसी बिरला व्यक्ति को ही होगा। जैन समाज और आध्यात्मिक गुरूजन भी हमारी इस अमूल्य धरोहर की उपेक्षा करते आये है। **अधिकतर व्यक्ति विज्ञान को जड़वाद और धर्म को आत्मवाद की श्रेणी में रखकर धर्म और विज्ञान की दूरी को और अधिक बढ़ा देते हैं।** धार्मिक परम्परा, रूढ़ीवाद, साम्प्रदायिक विचार आदि से प्रभावित साहित्यकार, वैज्ञानिक विचारों को तोड़-मरोड़ कर साम्प्रदायिक मान्यताओं के अनुरूप बनाने का प्रयास भी करते है। **फलस्वरूप सर्वज्ञ भगवान की सर्वज्ञता ही संदेह के घेरे में आ जाती है। सर्वज्ञ केवल सत् का कथन करते है। विज्ञान भी सत् का कथन करता है। अतः सर्वज्ञ और विज्ञान की अवधारणा में भेद नहीं हो सकता।**

महावीर निर्वाण के लगभग 900 वर्षो पश्चात लिखे गये धर्म शास्त्रों में ऐसे अनेक कथन हैं जो विज्ञान की दृष्टि से मिथ्या सिद्ध होते हैं। सर्वज्ञ की वाणी असत्य नहीं हो सकती। ग्रन्थ लेखन के समय स्मृतिदोष, पूर्वाग्रह, साम्प्रदायिक परम्परा तथा अन्य धर्मो से समन्वय स्थापित करने हेतु संभवतः ऐसे सूत्र जोड़ दिये गये हों जो वर्तमान विज्ञान के अनुकूल नहीं है और प्रबुद्ध सुशिक्षित,

विज्ञान से प्रभावित जैन युवा वर्ग और समाज को विचलित कर देते है। स्मृतिदोष तथा अन्य धर्मो से समन्वय स्थापित करने के हेतु जो तृटियां आ गई है उसे विज्ञान के आलोक में शुद्ध किया जा सकता है।

जिनवाणी में सत् का प्रतिपादन है और यही 'सत्' आज का विज्ञान है। **दिगम्बर और श्वेताम्बर सम्प्रदायों में सैद्धान्तिक और वैचारिक मतभेद नहीं है, मतभेद है अचार संहिता में। यदि जिनवाणी को विज्ञान के आलोक में ग्रहण किया जाय तो दोनों सम्प्रदायों के विचार-आचार में मैतक्य स्थापित हो सकता है। प्रस्तुत कृति में आगमिक सिद्धान्तों को सुबोध तथा सरल वैज्ञानिक शैली में प्रस्तुत किया गया है। साथ में इक्कीसवी सदी के सर्वश्रेष्ट वैज्ञानिक अनुसंधान जैसे गॉड पार्टिकल, बायोसेन्ट्रिजम बायलाजिकल तथा स्पिरिच्युअल एवल्युशन के आलोक में भगवान महावीर की सर्वज्ञता को भी स्थापित किया गया है।**

अध्याय 2

आदि वैज्ञानिक श्री महावीर

Mahavir: The Pioneering Scientist

विषय अनुक्रमणिका

विषय	पेज न.
आदि वैज्ञानिक श्री महावीर–कविता	21
Abstract	23
1. प्रस्तावना	27
2. जैन आगमों में विज्ञान की अभिव्यक्ति	31
3. सर्वज्ञ महावीर	37
4. विज्ञान स्वीकृत महावीर के सिद्धान्त	42
5. उपसंहार	52
6. संदर्भ सूचि	52

आदि वैज्ञानिक श्री महावीर

सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।
जिनके द्वारा दिए हुए सिद्धान्तों की अब हो रही पहचान।।
*'दृश्यमान लोक' को **Observable Space** अब कहते हैं सब।*
*'समयक्षेत्र अलोक' का **Space Time** अब है मतलब।।*
***Quantum Field** भरा है इसी में 'पंचास्तिकाय' बनकर।*
*संग है **Biocentrisom** जिसे 'जीवास्तिकाय' कहें सारे मुनिवर।।*
*सत्यासत्य का सिद्धान्त था वीर का बना **Relativity Theory**।*
***Quantum Physics** के रूम में 'भेदाभेद' कथन का बढ़ा सन्मान।।*
सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।।

*मैक्स बॉर्न का **Quantum Field** बहुप्रदेशी अस्तिकाय ने उपजाया।*
इसी खोज पर नोबल प्राइज था उसने पाया।।
*'सत्यासत्य' पर आधारित आईन्स्टाईन की **Relativity Theory**।*
1905 में विश्व श्रेष्ट वैज्ञानिक बनकर, इसी से उसने ख्याति बटोरी।।
*महावीर का 'चतुश्स्पर्शी परमाणु' ही बोहर का **Quantum Atom**।*
ये खोज करके पाया उसने 1913 में नोबल पुरस्कार अनुपम।।
महावीर के सिद्धान्तों के बल पर आधुनिक उत्थान।
सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।।

*इसी लोक में **Biological Evolution** भी है चलता।*
करके यहीं पुरूषार्थ एकेन्द्रिय विकसित पंचेन्द्रिय बनता।।
*'एक प्रदेशी परमाणु' का वैज्ञानिक नाम हुआ **Wave Function**।*
डिब्रोली इसी से 1930 में नोबल विजेता गया था बन।।
*'उत्पाद व्यय ध्रौव्य' की सरगम है **Law of Conservation** का गाना।*
सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।।

'वैज्ञानिक महावीर' के रूप में बन्धु! खुल गई आपकी।
कुंजी हाथ आ गई है मानो धर्म के दिव्य प्रताप की।।
सर्वज्ञ प्रभु ने जो कुछ देखा केवल ज्ञान व दर्शन में।
वैज्ञानिक वह सत्य पा रहे यंत्रो द्वारा परीक्षण में ।।
'आप्पा सो परमप्पा' ही है मानव जीवन का उदघोष।
यही ***Spiritual Evolution*** *बन रहा अखिलजगत का कोष।।*
मिलेगा पुस्तक में वह सारा जो कहता है जैन विज्ञान।
सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।।

प्रथम वैज्ञानिक तीर्थंकरों के सम्मान में सतत वंदना है।
'जैन जयति शासनम' के प्रति सर्वस्व समर्पणा है।।
महावीर का कथ्य बना है तथ्य विश्व के प्राण का।
लगा दिया बस उस पर लेबल माडर्न साइंस के नाम का।।
अनंत चौबीसी तीर्थंकर के ऋण से मुक्त हो पायें हम।
इसीलिए यह पुस्तक रचकर प्रथम प्रयास किया लघुतम।।
चौरासी का चक्र ये छूटे पायें वीर चरणों में निर्वाण।
सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।।
जिनके द्वारा दिये हुए सिद्धान्तों की अब हो रही पहचान।।

प्रभु तेरे चरणों में अर्पित ये मदन भाई मोदी चाकर।
यही कामना शुभ भावों की सरिता को मिले ध्रुव सागर।।
बुद्धि विलास मेरा बदल दे जन-जन का भ्रान्ति मानस।
स्वर्ण बने सम्बोधि सबकी पाकर के सिद्धि पारस।।
लोक अलोक के गूढ़ रहस्य खुल जायेंगे पुस्तक पढ़कर।
नवतत्वों और षड़द्रव्यों को समझाया है सरल बनाकर।।
है विश्वास गुरूजनों की कृपा से पूरे हों अरमान।
सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे इस सृष्टि के श्री महावीर भगवान।।
जिनके द्वारा दिये हुए सिद्धान्तों की अब हो रही पहचान।।

ABSTRACT

Bhagwaan Mahavir was a spiritual leader who rejected the idea of 'Creation and Creator God', hundreds of years before the dawn of renaissance and industrial revolution in Europe. With extra-ordinary conviction, all round excellence, sincerity of purpose and deep understanding of 'the Self and the Universe', Mahavir preached 'the Science of Creation and Spiritual Evolution', in then prevailing religious style. Spiritual Leaders in those days were called as saints, Bhagwan and Paramatman. Mahavir who stressed on acquiring knowledge was rightly named as Bhagwan, Kewalgyani and Spititual Master.

Mahavir would not accept which did not stand the test of reasons and logic. He developed Several analytical methods like Anekant, (Principle of Complementarity), Syadwad, (Indefiniteness), Saptbhangi (Correlation Technique) and 'Space-Time' frame of reference for evaluation of 'Truth. His concepts of God and the Universe, Truth and Reality, Life and Death, Birth & Liberation are hardly religious. They are based on hypothesis of eternal existence of Universal Consciousness and 'Bio-Centric World' formed by Atoms in accordance with the law of Conservation of Mass and Energy.

Truth is evolutionary and it is impossible for the human beings to know the Absolute Truth', says Mahavir. This is exactly what Einstein said in 1905 while formulating the Theory of Relativity. 'Awareness of existence of Universal Consciousness

(Jivastikaya) and Paramanu (Atom/Quanta) are closest to the experience of Absolute Truth. Every natural event is a probability event in which the atoms are the Key players and the consciousness is the Observer. An atom is equivalent to one Akash Pradesh (Atomic Wave Function) and does not have existence as a particle until observed by Jiva' says Mahavir. This statement is in-fact the statement of 'Principle of Uncertainty' of quantum physics.

Very much like the present day Scientist, Mahavir said the universe is a closed system made of five distinct Quantum fields (Panchastikaya) which appears to the observer (Atman) as five distinct Drayas – Akash, Dharma, Adharma, Pudgal and Jiva. Space and Time are not physical objects that we can see, feel, taste, touch or smell. They are modes of perception of reality by Jiva or animal consciousness. According to Modern Science Space and Time are the co-ordinates of the information system with which our consciousness perceive reality. Mahavir goes a step further and says, it is possible for the human being to enter into timeless region and observe the Absolute Truth-the Quantum Fields, Atoms and Atman (Soul). This state is the state of Kewalgyan or total liberation.

Mahavir says the total quantity of matter in the universe is conserved. Nothing is created and nothing is destroyed. The smallest particle of pudgala is an atom which combines with other atoms to produce Ajiva molecules. Atoms also bind with Jiva to produce varieties of Living Matter. 'Atoms and Jiva are conserved in all these transformations. Mahavir's Conservation Law— 'Upneiva-Vigneiva-

Drueveiva' is called 'Law of Conservation of 'Mass and Energy' in modern science. The most important scientific contributions of Mahavir include predictions of Vacuum Quantum Field, Discrete and Continuous Nature of Matter, Quantum Atom, Atomic Charges, and existence of Potential Energy Fields (Dhamastikaya and Adharmasti kaya) which cause atomic and molecular motions.

Jainism emerges out to be science of Absolutism, Science of Atoms and Science of the Soul or Consciousness. Mahavir says Panchastikaya' is the primary source of everything physical and consciousness is built in it from the very beginning. He developed 'Theory of Everything' using Akash Pradesh as the basic element. In modern times Frank Wilczek developed 'Theory of Everything' using Higgs Boson (God Particle) which is nothing but one Akash Pradesh. Wilczek was awarded Nobel prize for his discovery in 2004.

Biologically we are humans, yet every religion advises us to become human so that we come closure to God. Mahavir on the other hand believes that human beings are created by forces of nature and are endowed to cultivate the soul. Life can be made purposeful if we manage and conquer ego, anger, lust, desire and emotions. Inner peace and Knowledge of self reduce sufferings and raises the level of Consciousness. The human body is an instrument that, if used properly can help in raising the human consciousness to the level of Jivastikaya ofter shedding the physical form. This level is also referred to as Fourteenth Gunasthana which may click for one in a million or more.

आदि वैज्ञानिक श्री महावीर

1. प्रस्तावना

णाणस्स सारो आयरो अर्थात ज्ञान का सार आचरण है। इस उद्घोष के साथ सर्वदर्शी, सर्वज्ञ भगवान महावीर ने सहस्त्रों वर्ष पूर्व मानव समाज को संदेश दिया **'उप्पनेईवा, विग्नेईवा, ध्रुव्वेईवा'** अर्थात उत्पत्ति, विनाश और शाश्वतता' इस जगत का सत् है। भगवान के इन शब्दों में ज्ञान और साधना का इतना गूढ़ और गहरा संदेश था कि इसे ग्रहण कर गणधरों ने **चौंदह पूर्वो** की रचना कर डाली और इसी के साथ यथार्थता, शाश्वतता, तथा प्राकृतिक नियमों पर आधारित एक ऐसे धर्म की स्थापना भी हो गयी जिसमें जन्म, मृत्यु सुख दुःख तथा अन्य मानवीय समस्याओं का समाधान ईश्वर द्वारा नहीं अपितु स्वयं मानव द्वारा किया जाता है।

उपरोक्त घोषणा से भगवान महावीर विश्व के ऐसे प्रथम वैज्ञानिक बन गये जिन्होने सत्य की परिभाषा द्रव्य अस्तित्व के रूप में की। इस प्रकार जैन धर्म की प्रभावना के साथ-साथ भगवान महावीर ने उस विज्ञान की भी नीवं रख दी, जिसका उदय यूरोप में लगभग दो हजार वर्षो पश्चात हुआ। भगवान महावीर स्वयं लोकवादी थे। सर्वज्ञ देव ने लोक में पाये जाने वाले सभी द्रव्यों और पदार्थो को जीव-अजीव, आत्मा-अनात्मा में विभाजित कर उनका अध्ययन किया। आध्यात्मिकता के इस शिखर पुरूष ने अतीन्द्रिय ज्ञान द्वारा संसार की शाश्वतता को जाना और घोषणा की- **'यह विश्व ईश्वर द्वारा निर्मित नहीं है। यह विश्व, जड़ परमाणु और चेतन आत्मा द्वारा 'उपन्नेईवा विग्नेईवा**

ध्रुव्वेईवा' के नियम के अंतर्गत रचित एक प्राकृतिक व्यवस्था है जिसका ना आदि है और न अंत है'।

ईसा की सोलहवी शताब्दी में युरोप के वैज्ञानिको ने महावीर के उपरोक्त द्रव्य सिद्धान्त की खोज की और उसे 'द्रव्य संरक्षण नियम' अथवा Law of Conservation of Mass and Energy' की संज्ञा दी। इस अविष्कार के पश्चात् युरोप में एक नये युग का आंरभ हुआ जिसे विज्ञान और टेक्नालाजी का युग कहा जाता है। इसी के साथ युरोप में औद्योगिक क्रांति (Industrial Revolution) भी आ गई। इसके विपरीत ईसा पूर्व की छटी शताब्दि में भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धातं से भारत में धार्मिक तथा आध्यात्मिक क्रांति (Spiritual Revolution) का उदय हुआ और जैन धर्म विकास के पथ पर चल पड़ा। इस प्रकार **महावीर का धार्मिक क्रांतिका सिद्धान्त लगभग २००० वर्षो पश्चात् यूरोप के वैज्ञानिक और औद्योगिक क्रांति का सिद्धान्त बन गया।**

भगवान महावीर की तरह यूरोप में वैज्ञानिको ने ईसा की सोलहवी सदी में ईश्वर सत्ता के स्थान पर जड़-चेत्तन की सत्ता को स्वीकार किया। वैज्ञानिकों ने जड़ के स्थान पर Inertial Mass और चेतन के स्थानपर Energy शब्दों का प्रयोग किया। जड़ पदार्थ के सूक्ष्म शाश्वत खण्ड को यदि भगवान महावीर ने पुदगल परमाणु कहा तो वैज्ञानिकों ने उसका नामकरण Atom अथवा Quanta (क्वांटा) किया। भगवान महावीर ने जिसे चेतन तत्व कहा है, उसे वैज्ञानिक Consciousness कहते है जो प्राणियों में पाये जानेवाली एक विशेष प्रकार की विद्युत-चुम्बकिय उर्जा (Electro Magnetic Energy) है। **वैज्ञानिको के अनुसार अंतरिक्ष में 'मास और एनर्जी' के रूप में जो मैटर है वही विश्व है। मैटर ईश्वर द्वार निर्मित नहीं है अपितु अनादि शाश्वत है।** इस

वैज्ञानिक सत् से प्रभावित नित्शे' नामक एक पाश्चात्य दार्शनिक ने यहां तक कह दिया कि– God is Dead: अर्थात ईश्वर की मृत्यु हो गई है। इस वक्तव्य ने ईश्वर प्रेमी ख्रिश्चन, यहूदी और ईस्लाम समाज में खलबली मचा दी थी। नित्शे के कुछ वर्षों पश्चात आइन्स्टाईन ने 'विश्व और सत्' को सापेक्षता के सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया। **आइन्स्टाईन के सापेक्षता-सिद्धान्त में और भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित सत्यासत्य की अवधारणा में बहुत अधिक समानता है। भेद केवल भाषा और प्रस्तुति की पद्धति में है। आइनस्टाईन का कथन वैज्ञानिक भाषा में गणित के समिकरण** (Mathematical Equations) **के रूप में है परंतु सर्वज्ञ का कथन तत्कालीन लोकभाषा में सत्, असत् और सत्य, असत्य के उपदेश के रूप में है।**

विज्ञान की प्रगति का श्रेय क्वांटम फिजिक्स को जाता है जिसका विकास ई॰ सन 1890 से 1930 के काल में हुआ। क्वांटम सिद्धान्त के अनुसार मैटर की अनुभूति एनर्जी फील्ड (क्षेत्र) और पार्टिकल (परमाणु) दोनों रूप में होती है। एटम सूक्ष्म, अविभाजित द्रव्य खण्ड होते हुए भी ऐसा प्रतीत होता है मानो वह इलेक्ट्रान क्लाउड अथवा बादल की तरह कुछ क्षेत्र में फैला है। इस क्षेत्र को Wave Function कहा जाता है। इसी प्रकार एनर्जी का अनुभव पार्टीकल अथवा क्वांटा के रूप में भी होता है। मूर्त परमाणु और अमूर्त, अरूपी एनर्जी के मध्य होने वाली प्रक्रिया का विज्ञान क्वांटम फिजिक्स का क्षेत्र है। विश्व में पाये जानेवाले अनन्त पदार्थ इसी प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न होते है।

भगवान महावीर ने द्रव्यों को अस्तिकाय और लोक को पंचास्तिकाय के रूप में प्रस्तुत कर क्वांटम फिजिक्स की नींव २६०० वर्ष पूर्व रख दी और वे विश्व के प्रथम क्वांटम फिजिसिष्ट कहलाने के हकदार बन गये। इस का

ज्ञान पाश्चात्य जगत को तो है ही नहीं परंतु दुर्भाग्यवश भारतीय और जैन समाज भी इस तथ्य से अपरिचित है। भगवान महावीर ने घोषणा की- 'सभी पदार्थ परमाणु के स्कन्ध है। परमाणु एक प्रदेशी द्रव्य खण्ड है। अर्थात परमाणु में पार्टिकल और तरंग दोनो के गुण पाये जाते है। इस मूल क्वांटम फिजिक्स के सिद्धान्त के खोज के लिये ई॰ सन 1885 के बाद अनेक वैज्ञानिक नोबल पुरस्कार से सम्मानित किये गये जिसमें प्लैंक, मैक्स बार्न, हायजनबर्ग, आईन्स्टाईन, नील्स बोहर, श्रोडीन्जर आदि प्रमुख है परंतु भगवान महावीर इतिहास में वैज्ञानिक के रुप में अपना नाम भी नहीं लिखा पाये।

जन्म-मृत्यु को आत्मा और परमाणु के मध्य का 'बंध' और मोक्ष को इस 'बंध का अभाव जानकर' वैज्ञानिक महावीर ने ज्ञान पर आधारित धर्म की देसना दी। वर्तमान समय में महान वैज्ञानिक आइन्स्टाईन ने भी महावीर की भावना को इन शब्दों में प्रगट किया है– 'Science withour religion is lame and religion without Science is blind' अर्थात बिना विज्ञान धर्म पंगु है और बिना धर्म के विज्ञान अंधा है। जैन धर्म और आधुनिक विज्ञान दोनों की नींव का पत्थर एक है- उप्पनेईवा-विग्नेईवा-ध्रुव्वेईवा का सिद्धान्त।

जिनवाणी का सही मूल्यांकन उसमें कथित विज्ञान को जानने से ही संभव है। भगवान महावीर ने सत् (Truth) और यथार्थता (Reality) में वैसा ही भेद किया जैसा आइन्स्टाईन ने Absolute Truth और Relative Truth में किया है। संसार का आत्मा और अनात्मा स्वरूप सत् है जो केवल सर्वज्ञ जानते है। यही निरपेक्ष सत् अथवा 'Absolute Truth' है। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से 'सत्' में होने वाले परिवर्तन जीव की दृष्टि से यथार्थता है और वैज्ञानिक दृष्टि से Relative Truth है। इस

प्रकार भगवान महावीर के आध्यात्मिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक संदेशो में अंतरिक्ष विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, परमाणु विज्ञान, क्वांटम फील्ड थ्यौरी, जीव विज्ञान, कर्म विज्ञान आदि के मूल सिद्धान्तों का कथन भी हुआ है। **इन सिद्धान्तों को विज्ञान के नोबल पुरस्कृत सिद्धान्तों के साथ तुलनात्मक पद्धति से प्रस्तुत कर भगवान महावीर की वैज्ञानिकता को इस लेख में सिद्ध किया गया है।**

2. जैन आगमों में विज्ञान की अभिव्यक्ति

जैनधर्म प्रागैतिहासिक है और इसकी स्थापना भगवान ऋषभ देव ने उत्तर पाषाण युग में की थी। वह मानव जाति के विकास का प्रांरभिक युग था। ऋषभ देव ने जन समूह को **'असि मसि कसि'** अर्थात युद्ध कला, वाणिज्य और कृषि व्यवसाय की शिक्षा दी। कल्पवृक्ष के सहारे जीनेवाले वनवासी मानव को ऋषभदेव ने नगरवासी बनाया। जीवन के संध्याकाल में वितरागता को स्वीकार कर ऋषभ देव ने क्षमा, संतोष, वैराग्य और तप पर आधारित 'जैन-तीर्थ' की स्थापना की। उनके पश्चात उनकी परम्परा को तेईस तीर्थकरों ने आगे बढ़ाया। **अंतिम तीर्थकर भगवान महावीर ने 'जे लोयावाई से आयावाई' अर्थात जो लोकवादी है वही आत्मवादी है का संदेश जन जन तक पहुँचाया और घोषणा की जो जीव-अजीव का ज्ञाता है वही सच्चा दृष्टा, ज्ञानी और मोक्ष गामी जीव है[1]।**

अरिहंतो द्वारा प्रतिपादित ज्ञान मार्ग के विषयपर आचार्य कुन्द कुन्द[2] कहते है, 'जीव को दर्शन-ज्ञान प्रधान चारित्र से देवेन्द्र, धरणेन्द्र और चक्रवर्ती आदि के वैभव के साथ निर्वाण की प्राप्ति होती है।' भेद-अभेद दृष्टि से सभी मूर्तिक और अमूर्तिक द्रव्यों को तथा उनके वर्तमान, भूत और भविष्य की समस्त पर्यायों का सर्वांगी ज्ञान ही मोक्ष का मार्ग है[3] अर्थात पदार्थ विज्ञान (Material

Science) और जीव विज्ञान (Life Science) से ही मोक्ष के मार्ग है। अरिहंतो ने लोक में पाये जानेवाले सभी द्रव्यों और पदार्थों को जीव और अजीव (Living and Non Living) में विभाजित कर शाश्वतता, आशाश्वतता, गुण पर्याय आदि दृष्टि से उनका अध्ययन के पश्चात उद्घोष किया की जीव तत्व चेतनमय और उपयोग मय है तथा अजीव चेतना रहित जड़ द्रव्य है[4]। **अस्तित्व की दृष्टि से 'द्रव्य' सत्यासत्य है जो न तो एकान्त नित्य है, न अनित्य है अपितु वह नित्यानित्य' है।** वर्तमान समय में अरिहंतों का यह कथन सापेक्षता का सिद्धातं (Theory of Relativity) के नाम से जाना जाता है। प्रत्येक पदार्थ में 'स्व-द्रव्य' है, 'स्व-गुण' है और 'स्व-भाव' भी है जिनमें **उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य'** (Law of Conservation of Maas and Energy) नियम के अनुसार परिवर्तन होते है। अतः द्रव्य (Mass), क्षेत्र (Space), काल (Time) और भाव (Modes) के संदर्भ में पर्दाथों का विश्लेषण एवं निरूपन, 'नय' एवं 'सप्तभंगी' प्रणाली से किया जाता है। द्रव्य चिंतन की यह जैन प्रणाली विज्ञान में प्रचलित Theory of Probability और Theory of Permutation and Combination के समान है।

पदार्थों में परस्पर विरोधी गुण हो सकते है क्योंकि गुण और पर्याय सापेक्ष है। शीत-उष्ण, ऊपर-नीचे दायें-बायें, छोटा-बड़ा, सुख-दुख आदि सापेक्ष शब्द है। इस समय दिन है या रात? इस प्रश्न का उत्तर दिन और रात दोनों ही हो सकते है। भारत में रहने वाले व्यक्ति का उत्तर यदि 'दिन' है तो अमेरिका में रहने वाला व्यक्ति उसी समय कहेगा 'रात' है। इसी सापेक्षता को आइन्स्टाईन ने ई० सन 1905 में Theory of Relativity अथवा सापेक्षता के सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया था और महावीर ने इसका सत्यासत्य के सिद्धान्त के रूप में कथन किया था।

आकाश में स्थित द्रव्य समूह को जैनदर्शन में लोक, विश्व, संसार, जगत अथवा सृष्टि कहा है। द्रव्य शाश्वत है। लोक शाश्वत होते हुए भी अशाश्वत प्रतीत होता है। लोक में केवल दो प्रकार के द्रव्य है– रूपी–मूर्त और अरूपी–अमूर्त। पुदगल एक मात्र 'रूपी–मूर्त' द्रव्य है जिसे परमाणु में विभाजित किया जा सकता है। शेष पाँच द्रव्य 'अरूपी–अमूर्त' है, अखण्ड है परंतु बहुप्रदेशी है। जैन आगमों में परमाणु–विज्ञान का विस्तृत वर्णन है। आगमो ने कहा है कि मूर्त पुदगल परमाणु और अमूर्त आत्मा का बंधन ही संसार है। बंध की प्रक्रिया के साथ–साथ बंध तोड़ने के उपाय भी आगमों में वर्णित है। यह सभी विषय 'क्वाटम फिजिक्स' के क्षेत्र में आते है। **भगवती सूत्र** में परमाणु की गति, कम्पन, कार्य, उपकार, स्कंध रचना आदि का जो वर्णन है उससे सिद्ध होता है कि जैन श्रमणो को 'क्वाटम एटम' और Atomic तथा Molecular Energy Transitions का पूर्ण ज्ञान था। यह निश्चित् है कि **जैन श्रमणों द्वारा अपनायी गयी 'अस्तिकाय' तथा भेदाभेद की दृष्टि ही इक्कीसवीं सदी का क्वांटम फिजिक्स है। द्रव्यो का अस्तिकाय स्वरूप वस्तुतः क्वांटम फील्ड है और द्रव्यो का परमाणु स्वरूप वेव फंक्शन है।**

भगवती सूत्र[5] में कहा है कि परमाणु की देशांतर (Translatory) और कम्पन (Vibratory) गति के कारण परमाणु में प्रकाश, उष्णता, ताप, उद्योत आदि की उत्पत्ति होती है[6]। यही सिद्धांत नील्स बोहर नामक वैज्ञानिक का भी है जिसके लिये बोहर को 1913 में नोबेल पुरस्कार दिया गया था। **भगवती सूत्र** में यह भी कहा गया है कि परमाणु कम्पन के साथ–साथ परमाणु में स्पंदन (Simple Harmonic Motion) और आवर्तन (Rotation) भी होते है। **आज के विज्ञान के प्रगति का श्रेय परमाणु की तीन गति देशान्तर, कम्पन ओर आवर्तन की खोज**

का फल है। जैनाचार्यो ने परमाणु-गति की खोज हजारो वर्ष पूर्व की थी, परंतु इस तथ्य से संपूर्ण विश्व अनभिज्ञ है।

भगवती सूत्र के अनुसार परमाणु की गति स्वभाविक है। उसमें धर्मास्तिकाय अथवा जीव का कोई योग नही है। परमाणु चाहे मुक्त हो अथवा स्कन्ध में बंधा हो, वह गति करता है। इसी तथ्य को **गोम्मटसार जीवकाण्ड**[7] गाथा 593 में इस प्रकार कहा है– 'पुदगल द्रव्य में संख्यात, असंख्यात, अनन्त परमाणु सदा चलित रहते है।' **व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र** में कहा है कि परमाणु की गति प्रेरित और अप्रेरित (Overtones and Fundmental Vibrations) दोनों प्रकार की होती है। परमाणु गति, **परमाणु में होनेवाले परिणमन तथा परमाणु-परमाणु बंध और परमाणु-प्रदेश बंध आधुनिक क्वांटम फिजिक्स के विषय है जिसकी खोज के लिये अनेक वैज्ञानिक नोबल तथा अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किये गये है।**

आत्मा जैनदर्शन का एक प्रधान तत्व है। आत्मा शरीर से भिन्न तत्व है। शरीर जड़ है और आत्मा चेतन है। आत्मा और परमाणु का बंध संसारी जीव कहलाता है। जो अंतर प्रकाश और दीपाशिखा में है, वही अंतर आत्मा और जीव में है। **आत्मा प्रकाश की भाँति निराकार है और जीव दिपशिखा की भाँति साकार है। जीव, आत्मा जैसे शब्द विज्ञान में नही है। परंतु विज्ञान में एनर्जी** (Energy) **एक मूल तत्व है जो जड़ परमाणु से भिन्न है और शाश्वत है। एनर्जी में आत्मा के गुण, लक्षण तथा कार्यक्षमता (उपयोग गुण) है। शरीर में एनर्जी के कार्य है– ज्ञान प्राप्ति** (Acquisition), **ज्ञान संचार** (Communication) **तथा निर्देश और नियंत्रण** (Command and Control)। वैज्ञानिकों की मान्यता है कि शरीर मे चेतना

रूपी ऊर्जा (Consciousness) की उत्पत्ति बायोमालेक्युल के परिणमन से होती है।

भगवान महावीर की अंतिम गाथा श्री **उत्तराध्ययन सूत्र** का अठ्ठाईसवां अध्याय 'मोक्ष मार्ग के नाम से जाना जाता है। इसी आगम का छत्तिसवा अध्याय जीव-अजीव विभाग से सम्बन्धित है। **भगवती सूत्र, व्याख्याप्रज्ञप्ति, स्थानांग सूत्र, समवायांग सूत्र, द्रव्यानुयोग आदि जैन आगम केवल आध्यात्मिकता और वैराग्यता के उपदेश नही देते अपितु जैन दर्शन और जैन-विज्ञान का भी विस्तृत कथन करते है, जो जैन धर्माचरण का आधार है।** आचार्य कुन्द कुन्द कृत **पंचास्तिकाय** और **प्रवचनसार**, उमास्वामि द्वारा रचित **तत्वार्थ सूत्र**, कविवर दौलतराम द्वारा रचित **'छहढाला'** तथा अन्य ग्रन्थ जैसे **द्रव्य संग्रह**, **सर्वाथासिद्धी**, **तिलोयपन्नन्ति** आदि शास्त्रों में भी प्रथम तत्व जीव और अंतिम तत्व मोक्ष के साथ-साथ अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, बंध संवर और निर्जरा आदि तत्वों का विस्तार से वर्णन दिया गया है। **संक्षेप में कहा जा सकता है कि आगमों में लोक निर्माण और आत्म विकास का विज्ञान प्रस्तुत किया गया है। इस आगमिक विज्ञान का स्वरूप आध्यात्मिक है और वैज्ञानिक सिद्धांतो के साथ-साथ स्वर्ग-नरक, देव आदि की भी चर्चा है।**

दिगम्बर तथा श्वेतम्बर जैन सम्प्रदायों में सैद्धांतिक अथवा वैचारिक मतभेद नही है। मतभेद केवल धर्माचरण में है। विज्ञान सम्यग धर्माचरण में भेद क्यों है? इसका उत्तर खोजना होगा। आगम सूत्रो का शब्दार्थ करनेवाले अरिहंत देव अब हमारे मध्य नही है। आचार्यो द्वारा किये गए शब्दार्थ में कदाचित भेद है जो आचरण में भेद का कारण वन गया। **यदि जिनवाणी को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ग्रहण किया जाय तो दोनों**

सम्प्रदायों के आचार और विचार में एकता स्थापित होने की संभावाना बढ़ जाती है।

जैन धर्म अन्य धर्मो से भिन्न है। **ईश्वर प्राप्ति अथवा स्वर्ग सुख जैनधर्म का लक्ष्य नही है जो अन्य धर्म का लक्ष्य है। जैन धर्म का उद्देश्य है चौदह गुणस्थान तक आत्मा का विकास जिसे पाश्चात्य दार्शनिक** Spiritual Evolution **के नाम से जानते है। चौदह गुण स्थान, ज्ञान की वह ऊंचाई है जहां जीव को संसार की नश्वरता नही दिखाई देती केवल परमाणु और चेतन तत्व का प्रवाह दिखाई देता है जो संसार का अनादि और शाश्वत स्वरूप है। चौदह गुण स्थानों वाले जीव के लिये लोक 'पंचास्तिकाय' है, षट् द्रव्यात्मक नही है।** केवलज्ञान को जैनधर्म में मोक्ष की अवस्था माना गया है। मोक्ष की अवस्था में सभी बंधनों से मुक्त आत्मा लोकाग्रह में स्थित हो जाती है।

दो अथवा दो से अधिक परमाणु में बंध होता है। परमाणु और आत्मप्रदेश के मध्य भी बंध होता है। **जैन श्रमणों ने इस बंध-विज्ञान** (Science of Atomic Binding) **की खोज की और तप, साधना, की पाजिटिव ऊर्जा द्वारा बंध विच्छेद के विज्ञान का विकास किया। बंध विज्ञान और बंध-विच्छेद का विज्ञान, वर्तमान समय में क्वांटम फिजिक्स कहलाता है।** जैन विज्ञान का विकास आध्यात्मिक दृष्टिकोण से किया गया है और आधुनिक विज्ञान का विकास प्रकृति के रहस्य को जानने के उद्देश्य से किया गया है। अत: आगमों में स्वर्ग-नरक देव परमात्मा आदि का जो वर्णन है उसे विज्ञान स्वीकार नही करता। जैन श्रमणो ने उन वैज्ञानिक सिद्धातो की खोज की जो आत्म विकास में सहायक है। इसके विपरीत वैज्ञानिकों ने परमाणु केन्द्रित विज्ञान का विकास किया क्यों कि उनकी दृष्टि में परमाणु ही सभी जीव और अजीव पदार्थो का निर्माता है।

जैन धर्म निस्संदेह वैज्ञानिक है जो मानव समाज को ज्ञान और मुक्ति का मार्ग दिखलाता है। जिनवाणी में ज्ञान और धर्म की समान प्रधानता है परंतु प्राथमिकता ज्ञान को दी गई है। ऐसा प्रतीत होता है की आगम वाचना के समय धर्माचरण को अधिक महत्त्व दिया गया और ज्ञान पक्ष उपेक्षित रह गया। **बढ़ते हुए साम्प्रदायिक मतभेद, आत्मा की अतिशयोक्ति, उच्च पद का मोह, अन्य धर्मों का विरोध आदि कारणों से जैन विज्ञान का उचित भाषा और उचित स्वरूप में प्रस्तुतिकरण भी नहीं हो पाया है।** अतः जैन श्रमण, समाज दार्शनिक, चिंतक, विचारक आदि हमारी इस अनमोल धरोहर का उचित मूल्यांकन करने में असमर्थ है। जिनवाणी को नूतन वैज्ञानिक शैली में प्रस्तुत करने का यह एक लघु प्रयास है।

3. सर्वज्ञ महावीर

अरिहंत, तीर्थंकर तथा सर्वज्ञ श्रमण संस्कृति के शिखर पुरूष भगवान महावीर लोक नायक, समाज सुधारक और एक महान वैज्ञानिक थे। जातिवाद, व्यक्तिवाद, सम्प्रदायिकता आदि संकीर्ण विचारों से ऊपर उठकर उन्होंने ऐसे धर्म की देशना दी जिसमें विचार और आचार दोनों ही प्रधान तत्व है परंतु ज्ञान और विचार की प्राथमिकता है। ज्ञान द्वारा ही आचार की दशा और दिशा निर्धारित होती है। विचार वस्तु और वस्तु-स्वभाव का तथा नौ तत्वों का है और आचार सांसारिक जीव का है। सर्वज्ञ देव ने चिंतन, मनन, तप और ध्यान से संसार का सत् जाना। जीव का जन्म और मृत्यु क्यों होता है? सुख-दुःख का कारण क्या है? क्या जन्म, जरा और मृत्यु से मुक्ति मिल सकती है? आदि मानवीय समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन किया और संसार का व्यापक अर्थ सापेक्षता सिद्धांत के रूप में समझाया। सर्वज्ञ देव कहते है कि

मनुष्य विश्व का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। **प्रत्येक व्यक्ति 'स्व-धर्म' से भगवान है। शरीर से वह जड़ है परंतु इस जड़ शरीर में ज्ञान और चेतना का निवास है जिसका विकास कर मानव भगवान और परमात्मा बन सकता है। जैन धर्म के अनुसार संसार में जितने जीव है उतने ही भगवान हो सकते है पंरतु अन्य धर्म कहते है भगवान एक है।**

मनुष्य में चेतना और ज्ञान का स्तर ऐसा है कि वह शरीर को रक्त, मांस और हड्यिों से बनी वस्तु मानता है। वस्तुतः शरीर परमाणु से बना है जिसका अनुभव मनुष्य नही कर सकता। पुरूषार्थ द्वारा यदि मनुष्य आत्मा का विकास करते हुए चौदह गुण स्थान तक पहुंच जाता है तो दशो दिशाओ में भ्रमण करने वाले पुद्गल परमाणु तथा चेतना का प्रवाह और द्रव्यो के अस्तिकाय स्वरूप का दर्शन, वह कर सकता है। चेतना अथवा आत्मा की चौदह गुण स्थानों की शुद्ध अवस्था ही सर्वज्ञ, सिद्ध अथवा परमात्मा की अवस्था है।

उपरोक्त आगमिक कथन को विज्ञान और गणित की भाषा में भी व्यक्त किया जा सकता है जो इस प्रकार है- 'आत्मा एक शुद्ध चेतन द्रव्य है जिसमें अनादि काल से जड़ कार्मण परमाणु की अशुद्धता पाई जाती है। चौदह गुण स्थान की शुद्धिवाला आत्मा अर्थात् चौदह 9 डिजिट (99.999999999999%) प्युअर चेतन द्रव्य ही परमात्मा है और चौदह डिजिट प्युरिटी से कम का चेतन द्रव्य जीवात्मा है। भगवान महावीर ने दो डिजिट से चौदह डिजिट प्युरिटी प्राप्ति के आध्यात्मिक मार्ग बतलाये जिसे धर्माचरण कहा जाता है। सम्यग् धर्माचरण के लिये इमप्युरिटि का (बंध का) सम्यग् ज्ञान चाहिये। एटामिक इमप्युरिटि क्वांटम प्रक्रिया है। अतः सर्वज्ञ ने क्वांटम फिजिक्स का भी कथन किया है।

क्या आत्मा के गुण, चौदह स्थानों से अधिक नहीं हो सकते? क्या पंद्रह, सोलह आदि गुण स्थानों की आत्मा का अस्तित्व नहीं है? इसका समाधान क्वांटम फिजिक्स में दिया गया है। क्वांटम फिजिक्स के अनुसार इस धरती पर नौ डिजिट से अधिक शुद्धता संभव नहीं है। अधिक शुद्धता के लिये अतंरिक्ष की यात्रा अनिवार्य है। अर्थात् इसके लिये लोकाग्रह पर पहुंचना आवश्यक है। जहाँ से चौदह गुण स्थानों से अधिक शुद्धता का आकाशास्तिकाय का आरम्भ होता है। **जीवास्तिकाय एक क्वाटंम फील्ड है जिसकी शुद्धता चौदह डिजिट है। इसके पश्चात् जीवास्तिकाय की आयडेन्टिटी अर्थात् पहचान समाप्त हो जाती है और वह अलोक में विलीन हो जाता है।**

अंधविश्वास, पूर्वाग्रह, सांप्रदायिक परम्परा आदि में फंसकर मनुष्य मिथ्यात्व को 'सत्' मानता है तथा मिथ्यात्व को ही अपनी श्रद्धा का केन्द्र बनाता है। 'ईश्वर और ईश्वर द्वारा निर्मित विश्व' भी ऐसी ही एक मिथ्या अवधारणा है जिसे भगवान महावीर ने अस्वीकार किया। भगवान ने उद्घोष किया की विश्व शाश्वत सत् है जो उसके परिवर्तन स्वभाव के कारण अशाश्वत और विनाशमयी दिखाई देता है। अनन्त सजीव और निर्जीव पदार्थ, सूर्य, चंन्द्र, तारे, पृथ्वी, मनुष्य, वनस्पति, अग्नि, वायु आदि ईश्वर द्वारा निर्मित नहीं है अपितु परमाणु और चेतन तत्व के सहयोग और बंधन से निर्मित हुए है। **सापेक्षता का सिद्धान्त** (Theory of Relativity), **द्रव्यों का परमाणु ओर प्रदेश स्वरूप** (Dual Nature of Matter), **पुद्गल द्रव्य** (Mass and Energy), **आकाशस्तिकाय** (Vacuum Quantum Field), **चेतन तत्व** (Consciousness), **वर्ण, रस, गन्ध, और स्पर्श से युक्त परमाणु** (Vector Atom), **कार्मण परमाणु** (Phonon), **एकेन्द्रिय जीव का पुरूषार्थ द्वारा पचेन्द्रिय जीव तथा मनुष्य तक का विकास**

(Darwin's Theory of Biological Evolution), **आत्मा का परमात्मा तक विकास** (Biocentrism and Spiritual Evolution) **आदि युग पर्वतक क्रान्तिकारी वैज्ञानिक सिद्धान्तों के मूल प्रवक्ता भगवान महावीर ही हैं।**

उपरोक्त सिद्धांतो का प्रस्तुतिकरण जैन आगमो में आध्यात्मिक भाव से किया गया है परन्तु जैन-विज्ञान और भगवान महावीर की सर्वज्ञता का सही मूल्यांकन विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ही सम्भव है। **भगवान महावीर के सिद्धान्त संपूर्ण मानव जाति के लिये है परंतु साम्प्रदायिक कट्टरवाद के कारण सर्वज्ञ देव 'मेरे महावीर-तेरे महावीर' बन गये है।** फलस्वरूप उनके जीवन, दर्शन, सिद्धान्त, तत्व और उपदेशों का उचित प्रस्तुतिकरण भी नही हो रहा है। भगवान महावीर के विचारों और संदेश को वर्तमान समय के अनुरूप उचित भाव, भाषा ओर शैली में प्रस्तुतिकरण की आवश्यकता है जिससे सुशिक्षित ओर प्रबुद्ध जैन समाज अपनी अमूल्य सांस्कृतिक और धार्मिक धरोहर का गौरव अनुभव कर सके।

भगवान महावीर ने किसी भी प्रकार के वैज्ञानिक प्रयोग (Scientific Experiments) नही किये। चिंतन, मनन, तप ओर साधना उनके ज्ञान प्राप्ति के साधन थे। वे ब्रम्हाण्ड और जीव-अजीव द्रव्यों के परम ज्ञाता थे। उनकी साढ़े-बारह वर्षों की तप ओर साधना में वर्तमान समय के बौद्धिक परिक्षण (Mind Game) और 'थाट-एक्सपेरिमेंट' (Thought Experiment) का समावेश था। आईन्स्टाईन नें भी महावीर की तरह सापेक्षता के सिद्धान्त को थाट एक्सेरिमेंट द्वारा सिद्ध किया था। अवधि ज्ञान थाट एक्सपोरिमेन्ट के समान है। कविवर दौलतराम[8] कहते हैं अवधिज्ञानी इन्द्रियों की सहायता बिना

ही द्रव्य, क्षेत्र काल और भाव के ज्ञान से सभी पदार्थो को जानता है और केवल ज्ञानी तीनों लोक और तीनों काल के द्रव्य और उनकी पर्यायों को जानता है[9]। सर्वज्ञ भगवान को परमाणु-परमाणु और 'परमाणु-आत्मप्रदेश' के बंध का सम्यग्ज्ञ ज्ञान था। अतः वे सभी द्रव्य और उनकी अनन्त पर्योयों का अनुमान कर सकते थे।

राजगृह में मंखली गोशालक नामक व्यक्ति रहता था। वह भगवान महावीर को अपना गुरू मानता था अैर उन्ही के साथ रहता था। एक दिन गोशालक को कुछ व्यक्ति खीर पकाते हुए दिखाई दिये। गोशालक के मन में खीर खाने की इच्छा जागी। उसने महावीर से खीर खाने की आज्ञा मांगी। महावीर ने कहा तुम्हारा प्रयास व्यर्थ होगा, हांडी फूट जायेगी और खीर बिखर जायेगी।

खीर पकाने वाले व्यक्ति के पास जाकर गोशालक ने कहा, ''मेरे गुरू महान ज्ञानी और भविष्य वेत्ता है' वे कहते है तुम्हारी खीर की हांडी फूट जायेगी और खीर जमीन पर बिखर जायेगी।'' कुछ ही क्षणों में वैसा ही हुआ। अब गोशालक दौड़ा-दौड़ा भगवान महावीर के पास पहुँचा और कहने लगा ''भगवान! आपकी भविष्य वाणी सत्य हुई। हांडी फूट गई और खीर बिखर गई'' महावीर ने कहा ''गोशालक न तो मैं भविष्य वाणी करता हूँ। और न मैं कोई चमत्कार करता हूँ मैंने देखा हांडी छोटी है और उसमें थोड़ा दुध और अधिक चांवल है। मैने अनुमान लगाया चावल के फूलने से हांडी फूट जायेगी''।

इस कथानक का निष्कर्ष इतना ही है कि महावीर तंत्र, मंत्र, जादु-टोना अथवा चमत्कार नहीं करते थे। वे केवलज्ञानी थे और द्रव्य विज्ञान के नियमानुसार वे 'प्रत्यक्ष में जो होगा उसका अनुमान लगा लेते थे। महावीर में प्रत्यय परोक्ष अनुमान, प्रक्षेप, न्याय, तर्क, अनेकान्त, सप्तभंगी आदि वैज्ञानिक पद्धतिनुसार वर्तमान, भूत और

भविष्य को जानने की क्षमता थी। उनके द्वारा कथित Sound Resonance और Sympathetic Vibration के सिद्धान्त को आत्मसात कर आचार्य मानतुंग ने भक्ताम्बर स्तोत्र को लय में गाकर जेल के चालीस ताले खोल दिये थे।

महावीर की साधना का उद्देश्य संयम और आत्म विकास था। भगवान महावीर कठोर से कठोर परीषह सहते और अनेक दिनों तक आहार पानी भी नही लेते थे। तो क्या वे शरीर और भूख को मार रहे थे? नही! वे जानते थे शरीर में पीड़ा के केन्द्र कौन से है और पीड़ा को कैसे रोका जा सकता है। वे भूख शमन की विधी भी जानते थे। शरीर उनकी दृष्टि से हड्डी, मांस और रक्त से बनी अजीव वस्तु नहीं थी अपितु तीव्र गति से सभी दिशाओ में दौड़ते भागते परमाणु से बनी एक विशिष्ट आकृति थी। **भगवान ने आत्मा और परमाणु के विज्ञान को आत्मसात किया और राग, द्वेष, मोह और कषाय पर विजय प्राप्त कर केवली तथा सिद्ध बन गये। जनकल्याण हेतु भगवान ने धर्मदेशना के रूप में जीव विज्ञान, परमाणु विज्ञान और कर्म विज्ञान का कथन किया।**

4. विज्ञान स्वीकृत महावीर के सिद्धान्त

भगवान महावीर ब्रम्हाण्ड के परम ज्ञाता और जन्म-मृत्यु के रहस्य को जानने वाले सिद्धयोगी थे। ब्रम्हाण्ड का स्वरूप, जीव-अजीव द्रव्यों की उत्पत्ति तथा विनाश, द्रव्यों का परमाणु तथा अस्तिकाय स्वरूप, भेदाभेद दृष्टि से प्रकृति की विविधता आदि विषयों पर भगवान महावीर ने प्रवचन दिये। ईश्वर, विश्व और जीव से सम्बन्धित जिज्ञासाओं का वैज्ञानिक समाधान दिया। महावीर के जिन सिद्धन्तों को विज्ञान की मान्यता है, उन्हें नीचे प्रस्तुत किया है।

1. **विश्व सिद्धान्त** (Theory of Universe)

विश्व का कोई निर्माता, संचालक अथवा नियंत्रक नहीं है। आकाश में दिखाई देने वाला जीव-अजीव द्रव्यों का समूह विश्व है[10]। द्रव्यार्थिक नय से विश्व अनादि और शाश्वत है। पर्यायार्थिक नय से विश्व अशाश्वत तथा परिवर्तनशील है[11]। लोक में पांच अस्तिकाय द्रव्य हैं[12]।

विज्ञान के अनुसार विश्व का कोई निर्माता नहीं है। अंतरिक्ष एक विशाल क्वाटंम फील्ड है जिसकी परिणति मेटरियल पार्टीकल में होती है जिसे विश्व कहा जाता है।

2. **सत्यासत्य का सिद्धान्त** (Theory of Relativity)

भगवान महावीर ने सत् की परिभाषा 'द्रव्य-अस्तित्व के' रूप में की जो विज्ञान मान्य है। जीव और अजीव द्रव्यों का अस्तित्व निरपेक्ष सत् है। जो किसी भी अपेक्षा से मिथ्या नहीं हो सकता। निरपेक्ष 'सत्' का ज्ञान केवल सर्वज्ञ को होता है। सत् परिवर्तनशील है। मनुष्य को द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से सत् के परिवर्तनों का ज्ञान होता है जिसे 'असत्' अथवा सापेक्ष सत् कहा जाता है[13]। इस प्रकार 'सत्' का वास्ताविक स्वरूप 'सत्यासत्य' है। आइन्स्टाईन ने ई० सन 1905 से 1915 के मध्य 'सत्यासत्य' सिद्धान्त के अनुरूप सापेक्षता का सिद्धान्त (Theory of Relativity) प्रस्तुत किया। भगवान महावीर की तरह आइन्स्टाईन कहते है- "Absolute Truth is known only to Universal observer. We know truth only with reference to the inertial frame of reference". अर्थात् निरपेक्ष सत् का ज्ञान सर्वज्ञ को होता है। हमें सत् का ज्ञान स्पेस टाईम के सन्दर्भ में होता है।

3. **आकाशास्तिकाय का सिद्धान्त** (Four Dimensional Space and Vacuum Quantum Field)

जैन दर्शन के अनुसार आकाश खोखला रिक्त स्थान (Vaccum) नही है अपितु वह एक अरूपी अमूर्त, अनादि, अवगाहन गुणों वाला, अस्तिकाय शाश्वत द्रव्य है[14]। आकाश का दृश्यमान भाग लोक है जो सीमित है और धर्मास्तिकाय, अधर्माअस्तिकाय, जिवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तीकाय तथा आकाशास्तिकाय इन पांच अस्तिकाय द्रव्यों से बनी एक विशाल काया है[15]। असीम और अनन्त आकाश अदृश्य है और वहां आकाश के अतिरिक्त कोई अन्य द्रव्य नहीं है। यह 'अलोक' है[16]। लोक और अलोक के मध्य कोई सीमा नही है। लोक के अन्दर और बाहर सभी दिशाओ में अलोक है। दोनों एक दुसरे से जुड़े है और अखण्ड आकाश के अभिन्न अंग है। **आकाश असीम और अनन्त है, अतः आकाश में लोक के निश्चित स्थान का ज्ञान नही हो सकता।** केवल इतना ही कहा जा सकता है कि लोक लोक ही रहता है ओर अलोक अलोक ही रहता है। ऐसा कभी नहीं होता कि लोक अलोक बन जाय अथवा अलोक लोक बन जाय[17]। **अलोक की अवधारणा जैनदर्शन की विशेषता है जो विज्ञान के अतिरिक्त अन्यत्र नही पाई जाती।**

ई० सन 1910 में महान वैज्ञानिक आइनस्टाईन के द्वारा प्रस्तुत अंतरिक्ष सिद्धान्त (Theory of Cosmic Space and Universe) में और जैनदर्शन के उपरोक्त विचारों में पूर्ण समानता है। आकाश रिक्त नहीं रह सकता। अतः आईन्स्टाईन ने अलोक को डार्क मैटर और डार्क एनर्जी से भरा क्षेत्र माना। महावीर ने उसी क्षेत्र को अवगाहन गुणों वाला द्रव्य बतलाया। आकाश के अवगाहन गुण को आइस्टाईन ने गुरूत्वाकर्षण का क्षेत्र माना। आइस्टाईन के पश्चात अन्य वैज्ञानिको ने जैन अवधारणा के समान आकाश

को क्वांटम फील्ड के रूप में प्रस्तुत किया। जीव को क्वांटम फील्ड की प्रतीति परमाणु अथवा क्वांटा के रूप में होती है।

4. **जैन द्वैतवाद तथा अद्वैतवाद का सिद्धान्त** (Mass-Energy Dualism and Unified Field Theory)

जड़ चेतन की सत्ता को दार्शनिक जगत में द्वैतवाद कहा जाता है। विज्ञान में भी जड़ और चेतन तत्वों की सत्ता की स्वीकृति है। विज्ञान में जड़ के स्थान पर Mass तथा चेतन के स्थान पर Energy शब्द का प्रयोग हुआ है, जिसके अनुसार Inertial Mass और Energy विश्व के दो शाश्वत तत्व माने गये है। Inertial Mass को भारयुक्त द्रव्य और एनर्जी को भार रहित द्रव्य भी कहा जाता है। फोटान और ग्लुआन के अतिरिक्त सभी पार्टीकल भार युक्त होते है। अर्थात उनमें Mass होता है।

जैन दर्शन के अनुसार जड़ और चेतन द्रव्य अस्तिकाय है अर्थात् इनके संख्यात, असंख्यात तथा अनन्त प्रदेश होते है। अर्थात वे अस्तिकाय और बहुप्रदेशी है[18]। परमाणु भी एक प्रदेशी द्रव्य है[19]। इस प्रकार जड़ और चेतन दोनों द्रव्य मूलतः आकाश प्रदेशों की काया है। इसे जैन दर्शन का अद्वैतवाद कहा जायगा। विज्ञान में प्रदेश को प्लैंक लेन्थ' कहा जाता है। ई० सन 2012 में वैज्ञानिको ने प्रयोग द्वारा सिद्ध किया कि एक आकाश प्रदेश के क्षेत्र में गुरूत्वाकर्षण शक्ति का गाड पार्टिकल में परिवर्तन और गाड पार्टिकल की सहायता से सब एटामिक पार्टिकल का परमाणु में बंध संभव है। आकाश प्रदेश के क्षेत्र में सभी शक्तियों का अथवा बल का एक रूप हो जाना Unified Field Theory कहलाती है।

5. **द्रव्य की नित्यता तथा 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' का सिद्धान्त** (Closed Universe and Conservation Law)

लोक शाश्वत है। अर्थात द्रव्य की न तो उत्पति होती है और न ही विनाश होता है[20]। द्रव्य की मात्रा सभी प्रकार के परिवर्तनो में नियत (Constant) रहती है। न लोक में बाहर से कोई प्रवेश कर सकता है ओर न लोक से कोई बाहर जा सकता है। अनादि काल से जितने जीव थे, आज भी उतने ही है और आगे भी अनन्त काल तक उतने ही जीव रहेंगें। इसी प्रकार अनादि काल से जितने परमाणु थे अनन्त काल तक उतने ही परमाणु रहेंगे। जैन दर्शन का यह कथन विज्ञान में भी स्वीकृत है जिसे वैज्ञानिक द्रव्य सरंक्षण नियम अथवा Conservation Law कहते है। द्रव्य नित्यता के कारण विश्व को Closed Universe भी कहा जाता है। जैनदर्शन के अनुसार यद्यपि द्रव्य शाश्वत है तथापि उसकी पर्याय रूप में उत्पति होती है और पर्याय' रूप में उसका विनाश भी होता है परंतु इस प्रक्रिया में मूल जड़ अथवा चेतन तत्व शाश्वत रहते है। **एक द्रव्य दुसरे द्रव्य में परिवर्तित भी नही होता**[21]**।** अर्थात् सभी प्रकार के परिवर्तनों में जड़ की पर्यायें जड़ हो रहती और चेतन की पर्यायें चेतन ही रहती है। जीव-अजीव में तथा अजीव जीव में परिवर्तित नहीं होते। द्रव्य शाश्वतता का यह नियम आगमों में उत्पाद-व्यय-धौव्य का सिद्धान्त कहलाता है। यह विज्ञान का भी एक मूल सिद्धान्त है जिसे Law of Conservation of Mass and Energy का सिद्धांत कहा जाता है। **इस सिद्धान्त की खोज ईसा की सोलहवी शाताब्दी में हुई थी जबकि महावीर ने इसका कथन ईसापूर्व की छटी शताब्दी में किया था।**

6. **द्रव्यों का परमाणु एवं प्रदेश स्वरूप** (Particle and Field Nature of Matter)

संसारी जीव की भेद दृष्टि होती है, जिससे जीव को सभी द्रव्य संख्यात असंख्यात अथवा अनन्त परमाणु के स्कन्ध दिखाई देते है। सर्वज्ञ की अभेद दृष्टि से सभी द्रव्य अस्तिकाय अथवा एक विशाल शाश्वत काय रूपी क्षेत्र (Field) है। इस प्रकार द्रव्यों का खण्ड (Discrete) और अखण्ड (Continueous) दोनों रूप जैन दर्शन में स्वीकृत है।

विज्ञान के अनुसार सभी दव्यों का एवं पदार्थो का स्वरूप एनर्जी फील्ड है जिसे क्वांटम फील्ड भी कहा जाता है। क्वांटम फील्ड की प्रतीति पार्टिकल (क्वांटा) तथा फिल्ड एलिमेन्ट के रूप में होती है। क्वांटम फील्ड और क्वांटा की खोज के लिये प्लैंक, मैक्स बार्न, श्रोडिन्जर आदि अनेक वैज्ञानिको को नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। **एक क्वांटा से कम अथवा एक परमाणु से कम द्रव्य का अस्तित्व नहीं हैं।**

7. **परमाणु का प्रदेश स्वरूप (Wave Nature of Matter)**

सवार्थ सिद्धि में कहा है– **प्रदिश्यन्ते इतिप्रदेशः परमाणुवः** अर्थात प्रदेश का अर्थ परमाणु है। **परमाणु रूपी और मूर्त है परंतु प्रदेश अरूपी और अमूर्त है।** इस प्रकार रूपी मूर्त परमाणु भी अरूपी, अमूर्त प्रदेश के समान है। अतः व्यवहारिक नय से जड़ और चेतन द्रव्यों का सुक्ष्म खण्ड परमाणु ही है जो एक प्रदेशी होता है। विज्ञान ने इसे क्वांटा कहा है। परमाणु द्रव्य से विभक्त हो सकते हैं परंतु प्रदेश को द्रव्य से विभक्त नहीं किया जा सकता है।

उपरोक्त विचार विज्ञान में Wave Nature of Matter कहलाता है जिसकी खोज ई॰ सन् 1934 में डीब्रोली नामक वैज्ञानिक ने की थी। डिब्रोली इस खोज के लिए नोबल पुरस्कर से सम्मानित भी किये गये। विज्ञान ओर जैन अवधारणा अनुसार एटम (परमाणु) का कोई आकार नही है। उसकी कोई बाहरी सतह (Outer Surface) भी नहीं है। वह एलेक्ट्रान क्लाउड के समान है। अतः परमाणु को (Wave Function) के रूप में दर्शाया जाता है।

8. **जैन परमाणु** (Vector Atom)

जैन परमाणु में गति रस, वर्ण,गंध अस्पर्श आदि गुण होते है जो पुद्गल स्कंध के निर्माण के लिये आवश्यक है। जैन परमाणु प्रदेश रूप धारण कर आत्मप्रदेशों में भी बंध जाता है और जीव के शरीर की रचना करता है। परमाणु विश्व निर्माता भी है। जैन परमाणु एक प्रदेशी होने से उसमे Particale और Wave दोनों के गुण है। विज्ञान के परमाणु (Attom) में भी उपरोक्त सारे गुण पाये जाते है। ऐसे परमाणु को विज्ञान में क्वांटम एटम कहा जाता है। परमाणु के शीत और उष्ण स्पर्श विज्ञान में क्वांटम एनर्जी स्टेट और स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श एटामिक चार्ज अथवा एटामिक वैलेन्सी कहलाते है।

9. **परमाणु गति (** Atomic Motion)

भगवती सूत्र में परमाणु की अनेक प्रकार की गति का वर्णन है। व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र[22] में मुख्यतः देशान्तर (Translatory) कंपन (Vibration) और आवर्तन (Rotation) इन तीन प्रकार की गति का वर्णन है। इन गति के कारण परमाणु में जो परिणमन होता है उससे प्रकाश उष्णता, आतप, रेडियो वेब, मिलीमीटर वेब आदि

की उत्पत्ति होती है। परमाणु गति और उससे निर्मित्त विभिन्न प्रकार के रेडियेशन, प्रकाश, उष्णता, रेडियो वेव,एक्स- रे मिलीमीटरवेव आदि की खोज के लिये सन् 1910 से 1935 के मध्य लगभग 25-30 वैज्ञानिकों को नोबल पुरस्कार दिया गया।

10. **कर्म का परमाणु स्वरूप** (Vibration Phonons)

सभी प्रकार की शारिरीक मानसिक, वाचिक क्रिया, जैन दर्शन में चतुर्थस्पर्शी कार्मण वर्गणा के परमाणु कहलाते है। **जैन दर्शन तथा विज्ञान के अतिरिक्त अन्य किसी भी धर्म अथवा दर्शन में कर्म के परमाणु स्वरूप का कथन नही है।** विज्ञान में कर्म परमाणु को फोनान (Phonon) कहा जाता है। विज्ञान के अनुसार सभी प्रकार के कार्य एनर्जी वायब्रेशन है। चिंतन, मनन, राग-द्वेष सभी के फोनान होते है। कर्मबन्ध विज्ञान की दृष्टि से Photon-Phonon अथवा Phonon - Phonon इंटर एक्शन है जो जेनेटिक कोड के रूप में जीव के एक पीढ़ी से दुसरी पीढ़ी में ट्रान्सफर होते है।

11. **जीवोत्पत्ति का सिद्धान्त** (Life begets Life)

स्थानांग सूत्र तथा अन्य जैन आगमों में स्पष्ट शब्दों में कहा है कि जीव की उत्पति जीव द्वारा और अजीव की उत्पति अजीव द्वारा होती है। यह असंभव है कि अजीव द्रव्य जीव में परिवर्तित हो जाये अथवा जीव-अजीव में परिवर्तित हो जाय जैन दर्शन की नींव जड़ चेतन की सत्ता पर रखी गई है।

जीव विज्ञान की भी मान्यता है कि Life Begets Life अर्थात जीव ही जीव को जन्म देता है। प्रजोत्पन्त (Reproduction) जीव की विशेषता है। अतः जीव मृत्यु

से पहले अपने समान जीव को जन्म देता है। विज्ञान के अनुसार एक कोशिका जीव (Single cell) सर्वाधिक सुक्ष्म जीव है जिसकी मृत्यु नहीं होती। मृत्यु के पहले जीवित सेल दो भागों में बंट जाता है जिसे Cell-Division कहते है। सेब के ये दो भिन्न-भिन्न खण्ड दो जीवित सेल में परिवर्तित हो जाते है। इस प्रकार जीव शाश्वत रहता है। इसीलिये कहा जाता है कि Life comes from Pre-existing Life जो जैन धर्म का भी सिद्धान्त है।

जीवित प्राणियों में चेतना की उत्पत्ति कैसे होती है? इसका समाधान अभी वैज्ञानिकों के पास नहीं हैं। ई॰ सन 2006 में आर॰ लान्जा नामक जीव वैज्ञानिक ने (Universal Consciousness) के अस्तित्व की संभावना बताई है। द्रव्यों के अस्तिकाय स्वरूप अर्थात् क्वांटम फील्ड में चेतना के अंश हो सकते है, जिसे लान्जा Biocentrism (बायोसेन्ट्रिजम) कहते है। इस विषय पर खोज जारी है और निष्कर्ष रूप में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

'पिछले कुछ वर्षो से वैज्ञानिकों को अंतरिक्ष में अन्य ग्रहो पर भी सुक्ष्म जीव होने के संकेत मिले है। अब यह भी सिद्ध हो गया है कि कुछ **सुक्ष्म जीव एकहजार डीग्री तापमान पर भी जिवित रह सकते है अर्थात अग्नि में भी जीव रह सकते है।** ग्रह, उपग्रह नक्षत्र आदि पर जीव के अस्तित्व की संभावना है परंतु सूर्य और अनन्त तारोंपर जीव-अस्तित्व की संभावना नही है क्योंकि वहां का तापमान लाखों डीग्री होता है और वहां द्रव्य का अस्तित्व प्लाजमा रूप में ही रहता है। इससे जीव के लोक व्यापी अस्तित्व की सिद्धी होती है।

12. **एकेन्द्रिय जीव का पंचेद्रिय जीव तक क्रम विकास** (Darwin's theory of Biological Evolution)

जैन कर्म सिद्धान्त के अनुसार एकेन्द्रिय जीव पुरूषार्थ द्वारा पंचेन्द्रिय जीव, मनुष्य और परमात्मा तक विकास कर सकता है। इस क्रम विकास का उद्देश्य ज्ञानेन्द्रिय का विकास तथा आत्मा के गुण स्थानों में वृद्धि करना है।

जीव का शारीरिक क्रम विकास विज्ञान में Darwin's Theory of Biological Evolution कहलाता है। इस सिद्धन्त के अनुसार कठिन और विपरित परिस्थतियों में जीवित रहने के लिये एक कोशिका एकेन्द्रिय जीव विभिन्न अंगों का और बुद्धि का विकास करते हुये पंचेन्द्रिय जीव और मनुष्य बन गया। डार्विन मानते है कि जीव की जीवित रहने की तीव्र इच्छा ही शरीर विकास की प्रेरणा है। अतः विज्ञान में इस सिद्धान्त को 'Survival of the Fittest' का सिद्धान्त भी कहा जाता है। यह विकास स्वप्रयास से (D.N.A) डी. एन ए में परिवर्तन के कारण होता है। डी एन ए एक दृष्टि से कार्मण शरीर के समान है।

13. **'आत्मा से परमात्मा' का सिद्धान्त** (Theory of Evolutionary Spiritualism)

भगवान महावीर को मनुष्य में ईश्वर दिखाई देता था। अतः महावीर ने ईश्वर उपासना के स्थान पर श्रमण उपासना को महत्त्व दिया। ज्ञान संयम, तप, साधना और वीतरागता द्वारा स्व-प्रयास से मनुष्य चौदह गुण स्थान तक आत्मा का विकास कर सकता है जो आत्मा की सर्वोच्च सुद्धता और अनन्त ज्ञान की अवस्था है। इसी शुद्ध-बुद्ध अवस्था को जैन दर्शन में केवल ज्ञान की अवस्था कहा है। इस प्रकार मनुष्य रूपी आत्मा स्वयं परमात्मा बन सकता है।

वैज्ञानिक मानते है कि जीव का क्रम विकास (Biological Evolution) निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। विकास की इस प्रक्रिया द्वारा अतीत में एक कोशिका जीव ने स्व-प्रयास से मनुष्य भव प्राप्त कर लिया था। पांच इन्द्रिय मन, बुद्धि आदि साधनो से शुक्ल मनुष्य विकास करता हुआ परमात्मा का स्थान प्राप्त कर सकता है। अनके पाश्चात्य दार्शनिकों का विश्वास है कि (Biological Evolution) से (Spiritual Evolution) संभव है।

5. उपसंहार

श्रमण संस्कृति के शिखर पुरूष भगवान महावीर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी थे। **वे एक ऐसे महान वैज्ञानिक थे जिन्होने विश्व में सर्वप्रथम ईश्वर सत्ता के स्थान पर द्रव्यसत्ता का प्रतिपादन किया और विज्ञान में अत्यन्त क्रांतिकारी माने जाने वाले सिद्धान्त जैसे सापेक्षता का सिद्धान्त, डयुअल नेचर आफ मैटर, द्रव्य का क्वांटम तथा फील्ड स्वरूप जीव का क्रम विकास आदि का कथन किया।** सर्वज्ञ देव ने वस्तुत: जीव अजीव सृष्टि के उत्पत्ति का विज्ञान प्रस्तुत किया जो वर्तमान वैज्ञानिक अवधाणाओं से भिन्न नहीं है। सर्वज्ञ देव ने कोई वैज्ञानिक परिक्षण नहीं किये थे परंतु आत्मिक शक्ति और बौद्धिक तर्क द्वारा उन्होने निरपेक्ष सत् का भी अनुभव किया। जो मनुष्य के लिय असंभव है। इसीलिये भगवन केवल ज्ञानी कहलाते है।

6. संदर्भ सूचि

1. पंचास्तिकाय, गाथा 103 और 107
2. प्रवचनसार (ज्ञान तत्व प्रज्ञापनाधिकार), गाथा 6
3. प्रवचनसार (ज्ञान तत्व प्रज्ञापनाधिकार), गाथा 47

4. प्रवचनसार (ज्ञेयतत्वाधिकार), गाथा 35
5. भगवतीसूत्र उद्देशक 8, सूत्र 116, 117, 118
6. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 12
7. गोम्मटसार जीवकाण्ड, गाथा 593
8. छहढाला 4-4-53, कविवर दौलतराम कृत
9. छहढाला 4-3-52, कविवर दौलतराम कृत
10. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 2
11. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 8, 9
12. पंचास्तिकाय, गाथा 4
13. उत्तराध्ययन सूत्र अध्याय 36, सूत्र 3
14. तत्वार्थ सूत्र, 5/18
15. पंचास्तिकाय, गाथा 5
16. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 2
17. स्थानांग सूत्र, 5/170-174
18. पंचास्तिकाय, गाथा 22
19. तत्वार्थ सूत्र, 5/11
20. पंचास्तिकाय, गाथा 15
21. भगवती सूत्र, शतक 16, उद्देशक 8
22. व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र, शतक 2, उद्देश्क 1

अध्याय 3

प्राचीन जिनवाणी का अर्वाचीन स्वरूप

Relevance of Jainism to Modern Age

विषय अनुक्रमणिका

विषय	पेज न.
सर्वज्ञो की दिव्यवाणी–कविता	57
Abstract	59
1. प्रस्तावना	61
2. जिनवाणी का प्राचीन स्वरूप	63
3. धर्म और विज्ञान	69
4. जिनवाणी का अर्वाचीन स्वरूप	73
5. उपसंहार	78
6. संदर्भ सूचि	86

सर्वज्ञो की दिव्यवाणी

सर्वज्ञों की वाणी को सूत्रो में गणधर ढाल गये
प्राचीन दिव्यता को उसकी, वैज्ञानिक सहर्ष संभाल रहे

शब्द वही, भावार्थ वही, बस भाषा का थोड़ा सा है अंतर,
जिनवाणी जो प्राचीन थी उसका अर्वाचीन रुप सुन्दर

*किसी काल में **Fundamental Truth** न कभी बदले जाते।*
आज विज्ञान में जिनवाणी के सत्य हमें चौका जाते।

वैज्ञानिक महावीर नें सत्य को खोजा था चिंतन में
वे सुप्त सत्य विज्ञान ने खोले अविष्कारों के क्रम में।

ABSTRACT

Science is about knowing and the spirituality is about being. Jainism is both knowing and being, knowing 'the self' and the universe and being divine and harmonious with the 'Creation'. Bhagwan Mahavir said 'Atoms and Universal Consciousness are the two keys to the true understanding of the self and the universe. We as human beings are not evolved enough to see the Absolute Truth– the 'Atom and Consciousness'. The goal of human birth is to evolve to the highest and purest level of consciousness so that one can see the universe as 'Astikaya' or Homogenous Isotropic Quantum Field. This state also is the state of highest level of enlightenment what is called as Kawal Gyan or Moksha in Jainism.

Bhagwan Mahavir laid the foundation of modern science, when he declared that the universe is a closed system, in which the total quantity of atoms and consciousness, that is the energy of life remains constant. He said the secrete of creation lies in upneiva Vigneiva-Drueveiva' which means all creations are governed by the law of conservation of Mass and Energy. He announced several scientific principles covering fields of Cosmology, Atomic Science, Quantum Physics and Life Sciences. 'Jiva is the universal observer monitoring the creation and the atomic motion. The atomic charges provide necessary momentum and binding force', says Mahavir. This type of scientific understanding of the 'self' and the universe is fundamentally at the center of Jainism,

which is being reviewed in this article. Interestingly Mahavir describes the interacting quantum fields generated by our actions as the cause of all of our sufferings and pleasures. The Jains recognize this as Karmic Bandage.

This article briefly describes the scientific nature of Jainism and its relevance to modern times.

प्राचीन जिनवाणी का अर्वाचीन स्वरूप

1. प्रस्तावना

जैन संस्कृति श्रमण संस्कृति है। जैन धर्म अति प्राचीन है, प्रगौतिहासिक है, परंतु इसका स्वरूप अर्वाचिन (नुतन) है। जैन धर्म रूढ़ीवादी नही है अपितु प्रगतिशील है। विचार की दृष्टि से विज्ञान और आचार की दृष्टि से आत्म साधना का मार्ग है। जैन श्रमण को न स्वर्ग सुख की लालसा है और न ही ईश्वर प्राप्ति की इच्छा। उसका लक्ष्य है ज्ञान, विज्ञान और केवल ज्ञान। जिनवाणी में ईश्वर उपासना के स्थान पर श्रमण उपासना का उपदेश है। ईश्वर आराधना, पूजा-पाठ यज्ञ आदि कर्मकाण्ड को त्यागकर ज्ञान, तप, साधना को महत्व दिया गया है।

भगवान महावीर ने ज्ञान और चारित्र दोनों को समान प्रधानता दी परंतु प्राथमिकता की दृष्टि से ज्ञान को प्रथम स्थान दिया और ज्ञान विहीन तप साधना व्यर्थ माना[1]।

जैन दर्शन की मान्यता है कि 'वस्तु-अस्तित्व' सत् है[2] और सत् के प्रति जागरूकता धर्म है। साधक की दृष्टि के अनुसार सत् का स्वरूप भी बदलता है। अतः धर्म के अनेक रूप हो जाते है। 'सत्' का प्रतिपादन करने वाले सर्वज्ञ देव आज हमारे मध्य नहीं है। परंतु आगम तथा अन्य धर्म-शास्त्रों के रूप में उनकी वाणी उपलब्ध है। **आगम सूत्र एक है परंतु उसके वाचक और शब्दार्थ करने वाले अनेक है। 'जैसी धारणा वैसा धर्म' की कहावत के अनुसार जैन समाज सुत्रों के शब्दार्थ के अनुसार अनेक सम्प्रदायों में बट गया।** क्योंकि जिनवाणी में विज्ञान और धर्माचरण दोनों का समागम है, वर्तमान विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में आगम सूत्रों

का सही शब्दार्थ किया जा सकता है और विभिन्न सम्प्रदायों के धर्माचरण में मैतक्य भी स्थापित हो सकता है।

सर्वज्ञ देव ने उद्घोष किया कि जड़-चेतन विश्व के दो शाश्वत तत्व है मोक्ष प्राप्ति के लिए इन दो तत्वों के विज्ञान को जानना होगा। सर्वज्ञ देव ने आत्म विज्ञान और परमाणु विज्ञान पर देशना दी। महावीर का सिद्धांत है कि परमाणु-परमाणु बंध से निर्जीव पदार्थो की उत्पत्ति होती है और परमाणु-आत्म प्रदेश के बंध से सजिव सृष्टि का निर्माण होता है।

जिन वाणी का स्वरूप वैज्ञानिक होते हुए भी वह आध्यात्मिक और धार्मिक प्रतीत होता है क्योंकि उसमें आत्मा, बंध, मोक्ष निर्वाण, स्वर्ग, नरक, देव, दानव, तिर्यंच तथा वैरागी जीवन का कथन भी है। महावीर निर्वाण के लगभग 800-900 वर्षो पश्चात् लिपीबद्ध किये गये जैन शास्त्रों में आचार पक्ष को अधिक प्रधानता दि गई और जिनवाणी का विज्ञान पक्ष उपेक्षित रह गया। साम्प्रदायिक मोह, अन्य धर्मो का प्रतिरोध आदि अनेक कारणों से महावीर का विज्ञान सत् का मौलिक स्वरूप होते हुए भी उचित शव्दों में और उचित संदर्भ में आलेकित नहीं हो पाया। **फलस्वरूप अरिहंतों के जीवन की प्रयोगशाला में तपकर प्रगट हुआ सत्, उपेक्षित रह गया।**

भगवान महावीर ने किसी धर्म की स्थापना नही की अपितु भगवान ऋषभ देव द्वारा स्थापित श्रमण परम्परा को गतिशील किया। सर्वज्ञ देव ने **'अप्पा से परमाप्पा'** का संदेश दिया और छः द्रव्य तथा सात तत्वों के विज्ञान का कथन किया। भगवान ने उद्घोष किया कि कर्मो से बंधा जीव, कर्मो को भोगने के लिए बार-बार जन्म लेता है। कर्मो के अनुसार जीव एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय और त्रस तथा स्थावर आदि भिन्न भिन्न प्रकार के शरीर धारण करता

है। जीवन का उद्देश्य आत्म विकास है और पुरूषार्थ तप और साधना द्वारा जीव विकास कते हुए जब तक चौहवे गुण स्थान तक नहीं पहुँचता है, तब तक जन्म-मृत्यु का चक्र चलता रहता है। जीव-अजीव का सम्यग्-ज्ञान प्राप्त कर **'परस्परोपग्रहो'**[3] के भाव से जीवन जीना ही जिनवाणी का मूल संदेश है।

2. जिनवाणी का प्राचीन स्वरूप

उन्तरी पाषण युग के अंतिम चरण में भोग भूमि का अंत और कर्मभूमि का प्रारंभ माना जाता है। इस काल में भगवान ऋषभ देव ने कुलकर व्यवस्था को समाप्त कर राज्य व्यवस्था स्थापित की और अपनी प्रजा का युद्ध कला, वाणिज्य तथा कृषि व्यवसाय में निपुण किया। जीवन के सध्यांकाल में अपने ज्येष्ठ पुत्र भरत को उत्तराधिकारी घोषित कर ऋषभ देव ने आत्म कल्याण हेतु जिन दिक्षा ग्रहण की। केवल ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात महाश्रमण ऋषभ देव ने टपनी समवशरण सभा में देव, दानव, मनुष्य तथा विभिन्न जाति के जिवों एवं वनस्पति को सम्बोधित कर जैन तीर्थ की स्थापना की। ऋषभ देव की परम्परा को तेविस तीर्थंकरो ने आगे बढ़ाया। अंतिम तिर्थिकर भगवान महावीर के समय जैन धर्म सर्वोच्च शिखर पर था। इतिहासकार भगवान महावीर को ही जैन धर्म का संस्थापक मानते है। भगवान ऋषभ देव ने भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के आदर्श स्थापित किये जो जैन जीवन शैली बन गई।

भगवान महावीर का समय ईसा से लगभग 560 वर्ष पूर्वका है। उस समय देश में ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इस वर्ण व्यवस्था का वर्चस्व था। सर्वत्र हिंसा, यज्ञ, पशुबली, जातिपाति, स्त्री-गुलामी आदि कुप्रथाओं का बोल-बाला था। इन सामाजिक कुरीतियों से भगवान महावीर दुखी और व्याकुल रहते थे। अतः

सुखी और समृद्ध जीवन के लिऐ भगवान ने सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक आचार संहिता स्थापित की जो जैन धर्म बन गया। जैन जीवन शैली से अनाचार पर सदाचार का प्रतिष्ठाण हो गया। ईश्वर के नाम पर होनेवाले सामजिक दुराचार को दूर करने के लिए जैन श्रमणों ने ज्ञान मार्ग को अपनाया और घोषणा की 'ईश्वर कही बाहर नही है, अपितु वह अपने भीतर है'। आत्मा ही ईश्वर है, परमात्मा है और सिद्ध-बुद्ध है। ज्ञान, संयम, तप, साधना द्वारा विकास करते हुए आत्मा जब चौदहवे गुणस्थान पर पहुँचती है तो वह केवल ज्ञानी तथा परमात्मा बन जाती है।

महावीर कहते है- 'अज्ञानता और मिथ्यात्व सभी दुखों की जननी है। अज्ञानता और परम्परा में फंसकर मनुष्य असत् को 'सत' मानता है और अंधश्रद्धा का शिकार हो जाता है। यह संसार दुःखमय है जहां जीव क्लेश पाते है। जन्म, जरा, रोग और मृत्यु सभी दुःख है[4]। काम, क्रोध, लोभ, कपट मनुष्य के सबसे बड़े शुत्र है और वे ही दुख के कारण है[5]। ज्ञान, संयम, तप और पुरूषार्थ द्वारा सभी कष्टों को नष्ट किया जा सकता है[6]।' **अतः महावीर ने तथा जैन आचार्यो ने श्रद्धा (Faith) के स्थानपर सम्यग् दर्शन (Right Vision) ईश्वर के स्थान पर सम्यग् ज्ञान (Right Knowledge) और ईश्वर आराधना तथा कर्मकाण्ड के स्थानपर सम्यग् आचार (Right Conduct) को मोक्ष का मार्ग बतलाया[7,8]।**

आचार्य कुन्दकुन्द[9] कहते है जीव-अजीव पदार्थो पर श्रद्धा करना सम्यग् दर्शन है, उनका ज्ञान सम्यग् ज्ञान है और पंचेन्द्रियों के इष्ट-अनिष्ट विषयों पर समभाव रखना सम्यग् चारित्र है। ज्ञान के प्रति **प्रवचनसार** की गाथा 47 में कहा है-

जं तक्कालियामिदरं जाणादि जुगवं समंतदो सव्वं।
अत्यं विचितविसयं तं णाणं खाइय भणियं॥

– प्रवचनसार, (ज्ञानतत्व प्रज्ञापनाधिकार गाथा 47)

अर्थात् भेद-अभेद दृष्टि से सभी मूर्तिक-अमूर्तिक द्रव्यों का तथा उनकी वर्तमान, मूल और भविष्य की पर्यायों का संर्वागी ज्ञान ही मोक्षमार्ग है। दर्शन, ज्ञान और चारित्र का परस्पर संबंध को उत्तराध्यायन सूत्र में इस प्रकार दर्शाया है।

णादंसणिस्स णाणं, णणेण विणा ण हुंति चरणगुणा।
अगुणिरस णत्थि मोक्खो, णत्थि आमेक्खस्स णिव्वाणं॥

उत्तराध्ययन सूत्र 28/30

अर्थात दर्शन रहित को ज्ञान नहीं होता, ज्ञान के बिना चारित्र के गुण नहीं होते, चरित्रगुण से रहित को मोक्ष नहीं होता और मोक्ष के बिना निर्वाण प्राप्त नहीं होता।

सत्, असत्, मिथ्यात्व आदि का स्वरूप, ब्रम्हाण्ड और अब्रम्हाण्ड का वर्णन, जीव-अजीव द्रव्यों का नित्या-नित्य स्वभाव, द्रव्यों का परमाणु और अस्तिकाय स्वरूप आदि ज्ञान के विषय है जिनपर सर्वज्ञ देव ने प्रवचन दिये जो सिद्ध करता है कि **आत्मवादी जैनधर्म मूलतः भौतिकवादी और लोकवादी** है। **जीव-अजीव के सम्यग्ज्ञान द्वारा साधक निर्वाण की ओर अग्रसर होता है।** जीव-अजीव की प्ररूपणा द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा भाव से होती है[10]। जीव और कार्मण परमाणु में बंध होता है और यही बंध संसार और जन्म-मृत्यु का कारण है। बंध क्यों होता है? कैसे होता है? बंध को कैसे रोका जा सकता है? आदि प्रश्न के समाधान हेतु भगवान

महावीर ने बंध के नियम खोज निकाले जो **स्थानांग सूत्र** में इस प्रकार दिये गये है–

1. **जीव का जीव के साथ बंध नही होता परंतु जीव का अजीव के साथ और अजीव का जीव के साथ बंध होता है।** 'परमाणु–परमाणु' बंध से अजीव स्कंध और अजीव सृष्टि की उत्पति होती है। परमाणु–आत्मप्रदेश' बंध से भिन्न–भिन्न प्रकार के प्राणी जन्म लेते है। इस बंध की विविधता ही शरीर की विविधता का कारण है जो जीव पूर्व में किये कर्मो को भोगने के लिए धारण करता है।
2. कार्मण पुदगलों के ग्रहण एवं बन्ध के कारण आत्मा में योग और कषाय के अनुसार प्रकृतिबन्ध स्थितिबन्ध, अनुभाग बन्ध और प्रदेशबन्ध ये चार अवस्थाऐं निष्पन्न होती है[11,12,13]।
3. कर्म के अनुरूप फल मिलता है[14]। परंतु मनुष्य पुरूषार्थ अथवा पराक्रम द्वारा कर्मो के फल को बदल सकता है और कर्म की शृंखला को भी तोड़ सकता है अत: जैन दर्शन में पुरुषार्थ द्वारा भाग्य को बदलने का प्रोत्साहन दिया गया है।
4. बंधो के कारणों का अभाव और समस्त कर्मो की निर्जरा ही मोक्ष है[15]। समस्त कर्मो के नष्ट हो जाने के पश्चात मुक्त जीव लोक के अग्र स्थान पर स्थित हो जाता है।

कर्म की चर्चा लगभग सभी धर्म और दर्शन करते है परंतु कर्म को परमाणु के रूप में प्रस्तुत करना जैन धर्म की मौलिकता है। सभी प्रकार की शारीरिक, मानसिक और वाचिक कार्य कार्मण वर्गणा के परमाणु है ऐसा कथन केवल जैनदर्शन में और आधुनिक विज्ञान में पाया जाता है।

यह स्पष्ट है कि भगवान महावीर के आध्यात्मिक और धार्मिक विचार धारा का प्रवाह भौतिक विज्ञान के तत्वों से और नियमों से आरंभ होकर लोकान्त में स्थिर हो जाता है। यह स्थिरता विज्ञान के अनुसार 'झीरो एन्ट्रोपी' की अवस्था है जिसे प्राप्त करना कठिन ही नही अपितु अंभव सा है। इसीलिये जैनाचार्य भी कहते है कि वर्तमान समय में मोक्ष अथवा निर्वाण असंभव है। **झीरो एन्ट्रोपी की अवस्था क्वांटम फिजिक्स के अनुसार व्याकूम क्वांटम फिल्ड है और जैन धर्म के अनुसार यही निर्वाण की अवस्था है।** अन्य भारतीय दर्शनों में आत्मा की अवधारणा है परंतु 'केवलज्ञान' की स्वीकृति नही है। पाश्चात्य दर्शन 'केवलज्ञान' शब्द से अनभिज्ञ है। गत कुछ वर्षों से पाश्चात्य जगत में भी 'आत्मविकास' अथवा Evolutionary Spiritualism पर विचार मंथन हो रहा है जो चेतना की सर्वोत्कृष्ट स्थिति है। अर्थात केवल ज्ञान की अवस्था है।

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि जिनवाणी में 'सत्' का कथन तथा निरूपण वैज्ञानिक पद्धति से किया गया है, जो इस प्रकार है।

1. लोक सत् है। अलोक सत् है। जीव सत् है। अजीव सत् है।
2. लोक आकाश है। अलोक भी आकाश है। आकाश के जिस क्षेत्र में छः द्रव्यों का अवगाहन है, वह लोक है। आकाश के जिस क्षेत्र में केवल आकाश है, वह अलोक है। लोक सीमित है और अलोक असीम है।
3. असीम अलोक ससीम लोक नही बन सकता। लोक भी अलोक नही बन सकता। आत्मा शरीर नही बन सकता। शरीर आत्मा नही बन सकता।
4. सिद्ध, देव, नारक, मनुष्य और तिर्यंच सभी लोक में रहते है। लोक से बाहर कोई नही रहता। पदार्थो का यह सह जीवन सत् है।

5. लोक पंचास्तिकाय है। पांच बहु प्रदेशी अस्तिकाय द्रव्यों की एक शाश्वत काया है।

6. द्रव्य की अपेक्षा से लोक शाश्वत है परंतु परिवर्तनो के कारण अशाश्वत प्रतीत होता है। काल, प्रलय, महाप्रलय अथवा ईश्वर लोक का अस्तित्व नही मिटा सकते। लोक का संपूर्ण विनाश असंभव है।

7. जड़ और चेतन द्रव्य शाश्वत है और संसार के निर्माता है। यह निरपेक्ष सत् है। संसार में परिवर्तन 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्या सिद्धान्त के अनुसार होते है।

8. द्रव्य नित्यानित्य है। आत्मा नित्य है परंतु उसकी पर्यायें अनित्य है। परमाणु नित्य है परंतु परमाणु से बने स्कन्ध अनित्य है।

9. **'एगे आया' एगे पयये, एगे परमाणु'** अर्थात आत्मा एक है, प्रदेश एक है और परमाणु भी एक है। वे अविभाजित है और द्रव्यों की ईकाई है।

10. परमाणु में स्वभाविक गति है। आत्मा स्थिर है। आत्मा को गति पुद्गल से मिलती है। सिद्ध एक स्थानपर स्थित है क्यों कि उनके साथ पुद्गल नहीं है।

11. सभी शारीरिक, मानसिक, वाचिक क्रियाएं जैसे हिलना डुलना, चलना, राग द्वेष, ध्वनि, शब्द आदि परमाणु रूप है। उनके परमाणु चतुर्स्पर्शी होते है और वे स्कन्ध बनाने वाले अष्ट स्पर्शी परमाणु से भिन्न है।

12. उष्णता, प्रकाश, अंधकार, छाया, आतप आदि परमाणु के उपकार है।

13. दो अथवा दो से अधिक परमाणु के बंध से अजीव स्कन्धों की उत्पत्ति होती है। जीव और परमाणु बंध से सजीव सृष्टि की उत्पति होती है।

14. सुख-दुख, जन्म-मृत्यु आदि का कारण जीव के स्वयं के कर्म है। कर्म चतुर्स्पर्शी परमाणु है। वे जीव से बंधकर सूक्ष्म कार्मण शरीर की रचना करते है। अतः कर्म परमाणु को कार्मण वर्गणा के परमाणु भी कहा जाता है। कर्मो को भोगने के लिये जीव भिन्न भिन्न योनियों में जन्म लेता है।
15. मनुष्य स्वंय अपना भाग्य विधाता है। नियति, काल आदि का सहयोग इस कार्य में सम्भव है। स्वप्रयास से एकेन्द्रिय जीव पंचेन्द्रिय और मनुष्य भव तक विकास कर सकता है।
16. मोक्ष केवल मनुष्य भव से संभव है। देवताओं को भी मोक्ष हेतु मनुष्य जन्म लेना है क्योंकि मनुष्य भव में ज्ञान तप, साधना संयम द्वारा 'केवलज्ञान' की प्राप्ति संभव है।

    इस प्रकार भगवान महावीर ने सत् (Absolute Truth), असत् (Relative Truth), जीव आजीव और सात तत्वों का वर्णन आध्यात्मिक, व्यवहारिक और सैद्धान्तिक दृष्टियों से किया है।

3. धर्म और विज्ञान

'मूर्त की खोज विज्ञान है। अमूर्त का अनुभव धर्म है'। परम्परा तथा रूढ़ीवाद से प्रभावित विद्वानों के मुख से प्रायः ऐसे शब्द सुनाई देते है। इसके विपरित सुशिक्षित, प्रबुद्ध, विज्ञान से प्रभावित व्यक्ति मानते है कि धर्म एक प्रकार का 'मिथ' (Mythe) है। अर्थात अंध विश्वास, अज्ञानता और मनोवैज्ञानिक दुर्बलता का चिन्ह है। कार्ल मार्क्स जैसे दार्शनिक मानते है कि भोले भाले लोगो को लुभाने और उनका शोषण करने का मार्ग धर्म है। चीन, जापान, रूस जैसे विकसित देशों से तो धर्म लगभग लुप्त हो गया है। ऐसे विचारों के लोग कट्टरपन्थी होते है जो भावनाओं की गंगा में बहकर पथभ्रष्ट हो जाते है। ऐसे व्याक्ति न तो धर्म को जानते है, न विज्ञान को,

न स्वयं को न इस संसार को। धर्म वस्तु स्वभाव है। मनुष्य की प्रकृति उसका धर्म है और विज्ञान प्रकृति का ज्ञान है अर्थात धर्म का ज्ञान है। धर्म और विज्ञान प्रतिस्पर्धी नही है अपितु एक दूसरे के सहायक है। अतः अरिहंतो ने मनुष्य को परस्परोपग्रहो के भाव से जीवनयापन करने का उपदेश दिया। स्वधर्म का पालन करते हुए धार्मिक व्यक्ति विज्ञान की ओर अपने कदम बढ़ाता है। कालांतर में यही स्वभाव जीव की संस्कृति बन जाती है जिसे वैज्ञानिक जेनेटिक कोड कहते है।

विज्ञान और टेक्नालाजी के वर्तमान युग में लोगों की धर्म ओर ईश्वर के प्रति आस्था घटती जा रही है। विज्ञान धर्म के लिये एक चुनौती बन गया है। आज का युवक धार्मिक विधियों पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। वह धर्म को विज्ञान की कसौटी पर परखना चाहता है क्योंकि विज्ञान इस शताब्दी का निर्विवाद 'सत्' है। विज्ञान के चमत्कार ईश्वरीय चमत्कार से कम नही है। ईश्वर और देवताओं की भांति मनुष्य भी अंतरिक्ष यान में बैठ कर सम्पूर्ण लोक की यात्रा कर सकता है। वह दिन दूर नही है जब मनुष्य दूर दराज के ग्रह, तारे, चांद, सूर्य आदि पर अपने यान और स्वयं को उतार पायेगा। यदि महाबली रावण मंगल, शनी आदि ग्रहों पर विजय पाने में समर्थ था तो आज मनुष्य भी इन ग्रहों से मिट्टी, तथा खनिज पदार्थ पृथ्वी पर लाने में समर्थ है। मायक्रोबायोलाजी, जिनोमिक्स और स्टेम सेल रिसर्च द्वारा जीव-जगत में क्रांतिकारी परिवर्तन संभव हो गये है। बिना किसी पुरूष से संबंध बनाये नारी स्वयं के स्टेम सेल्स से संतान प्राप्त कर सकती है जैसे पौराणिक कथाओं में गणेशजी के जन्म के विषय में कहा जाता है। टेलीमर रिसर्च से मनुष्य की आयु हजारों वर्षों की हो सकती है जैसे भगवान ऋषभ के समय थी। नैनोटेक्नालजी से ऐसे वस्त्र बनाये जा सकते है जिसे पहनकर व्यक्ति अदृश्य हो सकता है।

जैन आगमों में भी कुछ चमत्कारिक घटनाओं का उल्लेख है। जैसे भक्ताम्बर स्त्रोत के उच्चार से लोहे की जंजीरे और तालों का टूटना। वास्तवत: जैन श्रमण मानतुंग ध्वनि विज्ञान के विद्वान थे और ध्वनि की रेजोनेन्स तथा सिम्पथेटिक वायब्रेशन (Acoustic Resonance and Sympathetic Vibration) की प्रक्रिया द्वारा उन्होंने स्वयं को लोहे की जंजीरों से मुक्त किया था। यह सर्व विदित है कि नदी-नालो पर बने पुल पर चलते समय, सैनिको को आदेश दिया जाता है कि वे मार्च की रिद्म में ना चले। रीद्म में चलने से भारी-भरकम पूल के टूटने की संभावना रहती है। यही रेजोनेंस की प्रक्रिया कहलाती है जिसमे पुल भी सैनिको के कदमो के अनुसार वाइब्रेट करता है।

जैन आगमों में आचार्य बाहुभद्र का भी कथानक है जिसमें कहा गया है कि आचार्य बाहुभद्र **चौदह पूर्वो** के ज्ञाता थे। इन **पूर्वो** के ज्ञान की सहायता से उन्होंने स्वयं को सिंह में परिवर्तित कर अपनी बहन को डराने का प्रयास किया था। यह कोई चमत्कार नही था। अपितु मानव शरीर के स्कन्धो को सिंह के शरीर के स्कन्धो में परिवर्तित करने की कला थी। जीव का शरीर परमाणु की रचना है अत: परमाणु की रचना में परिवर्तन कर जीव मनचाहा शरीर धारण कर सकता है।

उपरोक्त कथानक से यह सिद्ध होता है कि जैन श्रमण ईश्वरीय चमत्कार में विश्वास नहीं करते थे परंतु वे वैज्ञानिक चमत्कार से परिचित थे। भेदाभेद, सत्यासत्य, नित्यानित्य, स्यादवाद, तथा सप्तभंगी आदि विष्लेशन पद्धति से वे सत् असत और मिथ्यात्व में भेद करने में निपुण थे। उनकी मान्यता थी कि किसी भी जिज्ञासा अथवा प्रश्न का उतर एकान्त 'हां' अथवा एकान्त 'ना' नहीं हो सकता अपितु इसका समाधान केवल अनेकान्त दृष्टि से ही

किया जा सकता है। जैन श्रमणो को ईश्वर, तंत्र-मंत्र, जादु-टोना चमत्कार तथा पूजा-आराधना, कर्मकाण्ड से न कोई लगाव था और ना नास्तिकता का भय था और ना ही विज्ञान से अलगाव था।

जैनधर्म वस्तुतः वर्तमान भाग-दौड़ की जिदंगी के योग्य है। पांच अणुव्रतों का पालन करो, गुरू का आदर करो और अपनी दिनचर्या में सयंम के साथ लीन हो जीवो। बस। यही जैनधर्म है। यह साधक का निर्णय है कि उसे नरक में जाना है, देव लोक प्राप्त करना है, मनुष्य अथवा तिर्यंच योनि में जन्म लेना है अथवा परमात्मा बनकर अक्षय आनंद में लीन हो जाना है। जैन धर्म की यही विशेषताऐं जिनवाणी के अर्वाचीन रुप में प्रस्तुत है। दैनिक जीवन में धर्म को ईश्वर श्रद्धा, आस्था, स्वर्ग, नरक, आदि से जोड़ा जाता है जो तर्क, ज्ञान और विज्ञान की कसोटी पर सत् नही पाए जाते। उदाहरण स्वरुप ईश्वर और मनुष्य में तीन प्रकार के संबंध सम्भव है-

1. ईश्वर ने मनुष्य को बनाया
2. मनुष्य ने ईश्वर को बनाया
3. मनुष्य में स्वयं ईश्वर बनने की क्षमता है।

जैन तथा बुद्ध धर्म के अतिरिक्त लगभग अन्य सभी धर्म पहले विकल्प के पक्ष में है। दूसरा विकल्प विज्ञान का है और दूसरा तथा तीसरा विकल्प जैनधर्म का है। विज्ञान पहले मत का विरोधी है और तीसरे मत के पक्ष में उसके सकारात्मक विचार है। बायोसेंन्ट्रिजम तथा स्पिरिच्युअल एवल्युशन (Biocentrism and Spiritual Evolution) इसी दिशा में हो रही प्रगति के उदाहरण हैं।

4. जिनवाणी का अर्वाचीन स्वरूप

विज्ञान तथा सम्यग् धर्मचरण द्वारा मानव उत्थान और आत्म विकास प्राप्त करना ही जैन आध्यात्मिकता है– जीनवाणी का मन्तव्य है कि जीव-अजीव के सम्यग् ज्ञान द्वारा ही अर्थात जीव विज्ञान (Life Sciences) तथा पदार्थ विज्ञान (Material Science) द्वारा ही विश्व का और स्वयं का 'सत्' जाना जा सकता है। **भगवती सूत्र** में दिये गये भगवान महावीर और गौतम स्वामि के मध्य के संवाद से यह सरलता से समझा जा सकता है।

प्रश्नः के आयं लोगे?
(यह लोक क्या है?)

उत्तरः जीवच्चेव, अजीवच्चेव।
(जीव और अजीव ही लोक है।)

प्रश्नः के अनन्ता लोगे?
(लोक में अनन्त क्या है?)

उत्तरः जीवच्चेव, अजीवच्चेव।
(जीव और अजीव ही अनन्त है।)

प्रश्नः के सासया लोगे?
(लोक में शाश्वत क्या है?)

उत्तरः जीवच्चेव, अजीवच्चेव।
(जीव और अजीव ही शाश्वत है।)

प्रश्नः जिवाणो भंते! किं वड्ढंति, हांयति, अवढिठया
(भंते! जीव घटते है, बढते है अथवा अवस्थित रहते है।)

उत्तरः गोयमा! जीवणो बडढंति णो, हार्यंति, अवटिठया!
(गौतमा! जीव न घटते है न बढ़ते है, वे अवस्थित रहते है।)

प्रश्नः अजीवाणं भंते! कि बड़्ढंति णो, हांयलि, अवटिठया?

(क्या अजीव घटते है, बढते है अथवा अवस्थित रहते है?)

उत्तरः गोयमा! अजीव भी अवस्थित रहते है।

प्रश्नः रूबी अजीवदव्वा णं भंते! कहविहा पण्णता?

(भगवन! रूपी अजीव द्रव्य कितने प्रकार के है?)

उत्तरः चउविहां पण्णता तं जहा–खंधा, खंधादेश स्वंधाप्पया, परमाणु पोग्गला।

(रूपी अजीव चार प्रकार है–स्कन्ध, स्कन्ध देश, स्कन्ध प्रदेश तथा परमाणु पुद्गल।)

प्रश्नः परमाणु पोग्गलेणं भंत्ते। कि सासए, असासए?

(भगवन! परमाणु पुद्गल शाश्वत है अथवा अशाश्वत?)

उत्तरः दव्वदव्याण सासए, वाणपज्जेव हि जाव फास पज्जवें ही आसासऐ! (द्रव्य की दृष्टि शाश्वत है परंतु वर्ण, स्पर्श आदि पर्यायदृष्टि से अशाश्वत है।)

प्रश्नः बंधणपरिणा में भंते! कई विहे पण्णते?

(परमाणु बंध किस कारण होते है?)

उत्तरः स्निग्ध रूक्षत्वाद बन्ध!

(परमाणु रूक्षता, स्निग्धता के कारण स्कन्ध में बंधते है।)

उपरोक्त संवाद में भगवान महावीर ने व्यवहारिक भाषा में तीन वैज्ञानिक सिद्धान्तों का कथन किया है।

1. **लोक (विश्व) ईश्वर निर्मित नहीं है अपितु शाश्वत जीव-अजीव द्रव्यों का समूह है।**
2. **जीव और अजीव द्रव्य न घटते है न बढ़ते है अपितु अवस्थित रहते है।** अर्थात अनादि काल से लोक में जितना द्रव्य था आज भी उतना ही है और अनन्त काल तक उतना

ही रहेगा। गणघरों ने इस तथ्य को 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' का सिद्धान्त कहा और वैज्ञानिक इसे Law of Conservation of mass and Energy कहते है।

3. **परमाणु शाश्वत है। जो वस्तु शाश्वत है, उसका विभाजन नहीं होता।** स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श के कारण दो अथवा दो से अधिक परमाणु में बंध होता है। जिसमें अजीव स्कन्धों की निमिति होती है।

यह स्पष्ट है कि जैन दर्शन वर्तमान विज्ञान युग के अनुरूप है। **कुरूक्षेत्र की रणभूमि में अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण के मुख में विराट विश्व का स्वरूप देखा था परंतु भगवान महावीर ने ब्रम्हाण्ड के भूत, वर्तमान और भविष्य के स्वरूप को परमाणु तथा आत्मा की पर्यायों के रूप में देखा। यही महावीर की वैज्ञानिक दृष्टि है।** कविवर दौलतराम कहते है-

सकल द्रव्य के गुण अनन्त, पर्याय अनन्ता।
जाने एकै काल प्रगट केवलि भगवन्ता।।

-छहढाला, ढाल 4, गाथा 4-4-52

अर्थात केवली भगवान समस्त द्रव्य के अनन्त गुण और अनन्त पर्यायों को एक ही समय में जानते है। सर्वज्ञ देव ने सत् को जानने के लिए जिस दृष्टि को अपनाने का उपदेश दिया वह दृष्टि आध्यात्मिक जगत में अनेकान्त और स्याद्वाद के नाम से जानी जाती है। ई० सन 1905 में विश्व के सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक अलबर्ट आइंन्सटाइन ने जैन धर्म के भांति द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से 'सत्' का अध्ययन किया और सत् तथा सत् में होने वाले परिवर्तनों को सापेक्षता का सिद्धान्त अथवा Theory of Relativity के रूप में प्रस्तुत किया। सत् को जानने के लिये

जैन श्रमणों ने किसी प्रकार के वैज्ञानिक प्रयोग नहीं किए। सूक्ष्म और तीक्ष्ण दृष्टि, लक्ष्य केन्द्रित चिंतन, मनन और ध्यान उनके ज्ञान प्राप्ति के साधन थे जो वर्तमान युग में Mind Games और Thought Experiments कहलाते है।

भगवान महावीर ने कहा पुद्गल द्रव्य का अंतिम सूक्ष्म खण्ड परमाणु है। परमाणु के बाद पुद्गल का अस्तित्व नहीं है। इसी प्रकार वैज्ञानिक भी कहते है कि मैटर का अंतिम सुक्ष्मता खण्ड एटम अथवा क्वांटा है और एटम के पश्चात मैटर का अस्तित्व नही है। संसार मे शेष रह जाती है ऊर्जा, केवल ऊर्जा। इलेक्ट्रान, प्रोटान, न्युट्रान आदि फन्डामेन्टल पार्टिकल मैटर नही है अपितु ऊर्जा की न्यूनतम मात्रा है जिसे एनर्जी क्वांटा अथवा एनर्जी पार्टिकल भी कहा जाता है। **विज्ञान के एटम में और महावीर के परमाणु में भेद नही है। जो शाश्वत है वह अविभाजित होता है। अतः एटम और परमाणु पुद्गल दोनो ही अविभाजित है।**

आगमिग मान्यतानुसार परमाणु अनेक प्रकार की गति करता है। उसमें उष्ण, शीत, रूक्ष और स्निग्ध से चार स्पर्श है। नील्स बोहर द्वारा ई० सन 1913 में खोज किये परमाणु के भी यही गुण है। परमाणु के उष्ण तथा शीत स्पर्श परमाणु के एनर्जी स्टेट्स (Atomic Energy State) है। और रूक्ष तथा स्निग्ध स्पर्श पाजिटिव/निगेटिव चार्ज है।

प्रायः कहा जाता है कि विज्ञान में आत्मा के अस्तित्व की स्वीकृति नही है। यह सच है कि आत्मा के आध्यात्मिक भाव के प्रति विज्ञान उदासीन है परंतु विज्ञान में चेतना (Consciousness) की स्वीकृत है। विद्युत चुम्बकीय उर्जा में Information Acquisition

(ज्ञान प्राप्ति), Command और Control (कार्यक्षमता तथा कार्य नियंत्रण) की क्षमता है। **आगमों में इस क्षमता को ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग अथवा आत्मा का उपयोग गुण कहा है।** बायो मालेक्युल अथवा विस्रसा स्कन्धों (Organic molecules) में विधृत-चुम्बकीय ऊर्जा क्षेत्र की प्रतिति Consciousness अथवा चेतना के रूप में होती है। यद्यपि 'आत्मा', सोल अथवा स्पिरिट जैसे शब्द विज्ञान में स्वीकृत नहीं है तथापि इनके कार्यों का विवेचन 'फोटान-फोनान' इंटरएक्शन के रूप में होता है जो आत्मा और परमाणु बंध का विज्ञान है। यद्यपि वैज्ञानिक चेतना (Consciousness) के अस्तित्व को स्वीकार करते है तथापि ऐसा कोई सिद्धान्त अथवा एक्सपेरिमेन्ट नही है जिनके द्वारा वे आत्मा के अस्तित्व को सिद्ध कर सके। वैज्ञानिक नही जानते कि चेतना की उत्पत्ति कैसे होती है विज्ञान के किसी भी सिद्धांत द्वारा यह नही जाना जा सकता। तथा वैज्ञनिक चेतना की खोज क्वाट्म फील्ड में कर रहे है।

वैज्ञानिक मानते है कि सभी द्रव्यों का मूल स्वरूप क्वांटम फील्ड है जिसे आगमों में द्रव्यों का 'अस्तिकाय' स्वरूप कहा है। जैन दर्शन के अनुसार विश्व का मूल स्वरूप पंचास्तिकाय है। जीव को पंचास्तिकाय का अनुभव पांच भिन्न-भिन्न द्रव्यो के रूप में होता है। वैज्ञानिक मानते है कि क्वांटम फील्ड में जो स्वाभाविक (स्व-गुण) परिवर्तन होते है उन्हें हमारी चेतना काल के भाव से देखती है। वैज्ञानिक जानना चाहते है कि बिग बैंग (Big-Bang) के समय क्या परमाणु और चेतना की उत्पत्ति एक ही समय में हुई थी अथवा भिन्न समय पर? राबर्ट लान्जा जैसे मायक्रोबायोलाजिस्ट अब कहने लगे है कि कदाचित ब्रह्माण्ड में चेतना का शास्वत अस्तित्व है।

5. उपसंहार

निस्संदेह विज्ञान के क्षेत्र में जैन श्रमणों का मौलिक योगदान है। विश्व तो इस सत्य से अनभिज्ञ है, जैन समाज भी अंधकार में डुबा हुआ है। फलस्वरूप जैन विचारक दार्शनिक, श्रमण, श्रावक, चिंतक सभी जिनवाणी की वैज्ञानिकता से वंचित हो गये है। आत्म विज्ञान के साथ-साथ परमाणु विज्ञान जानना भी अति आवश्यक है क्योकि जड़ के निमित्त से चेतन भ्रमण करता है। **प्रवचनसार** गाथा 47 में कहा है कि भेद-अभेद दृष्टि से सभी मूर्तिक-अमूर्तिक द्रव्यों का तथा उसकी वर्तमान, भूत और भविष्य की पर्यायों का संर्वागी ज्ञान ही सम्यक् ज्ञान है। यह संदेश वर्तमान का विज्ञान है।

सर्वज्ञ देव ने धर्मकथा, वैराग्य, तप, साधना अहिंसा, अपरिग्रह आदि उपदेशों के साथ-साथ जीव-अजीव विज्ञान का भी कथन किया है। धर्म और विज्ञान का इतना सुन्दर मिश्रण अन्यत्र दुर्लभ है। पश्चात्य संस्कृति में तो धर्म और विज्ञान एक दूसरे के विरोधी और कट्टर शत्रु रहें है। भेद दृष्टि से सर्वज्ञ देव ने द्वैतवाद का प्रतिपादन किया और अभेद दृष्टि से 'अद्वैतवाद' का। जैन दृष्टि से जीव सत् है और अजीव भी सत् है। यही अधुनिक विज्ञान की मान्यता है। आचार्य कुन्दकुन्द[20] कहते है 'जो मनुष्य जिनेन्द्र भगवान द्वारा कहे गये सूत्र के अर्थ को, जीव-अजीव आदि पदार्थो को तथा हेय-उपोदय तत्वों को जानता है, वही वास्तव में सम्यग् दृष्टि है।

वर्तमान समय में जीनेन्द्र देव के सूत्रो का सही अर्थ विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ही अधिक सम्यक्ता से जाना जा सकता है। विज्ञान और आगम दोनों सत् के प्रमाण है। विज्ञानका सत सर्वविदीति है। मूल आगम सूत्रों का शब्दार्थ भी विज्ञान के सत् के अनुरुप होना चाहिए। महावीर और विज्ञान दोनों का कथन है कि ज्ञान की कुंजी

Atoms और Consciousness में है। स्वयं का और विश्व का ज्ञान परमाणु और जीव के ज्ञान में है। पाठको को तय करना है कि महावीर की दिव्य वाणी से क्या खिर रहा था– धर्म, दर्शन अथवा विज्ञान? सर्वज्ञ के देह से ज्ञान की जो धारा बह रही थी उसका प्राचीन और अर्वाचीन स्वरूप नीचे तालिका 1 में प्रस्तुत है।

तालिका-1: जिनवाणी का प्राचीन तथा अर्वाचीन स्वरूप

क्र॰ स॰	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
1.	जैन द्वैतवाद: जड़ चेतन की सत्ता	Mass Energy Dualism
2.	जैन अद्वैतवाद: जड-चेतना का प्रदेश स्वरूप	Mass and Energy, Equivalence
3.	द्रव्यों का सत्-असत् स्वरूप	Absolute and Relative Truth
4.	अनेकान्त का सिद्धान्त	Principle of Complimentality
5.	सत्यासत्स-नित्यानित्य का सिद्धान्त	Theory of Relativity
6	द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप	Material Quantum Fields
7.	भेदाभेद दृष्टि: भेद दृष्टि से द्रव्य परमाणु में विभाजित है। अभेद दृष्टि से अस्तिकाय है।	Discrete and Continues Nature of Matter (Mass and Energy).
8.	द्रव्यों का भेद स्वरूप: परमाणु / प्रदेश	Particle (Discrete) Nature of Matter

क्र० स०	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
9.	द्रव्यों का अभेद स्वरूप: बहुप्रदेशी अस्तिकाय	Energy Quantum Fields
10.	अवगाहन गुणो वाला आकाश द्रव्य	Vacuum Quantum Field/Vacuum Gravitation
11.	लोकाकाश (लोक)	Observable Space/ Universe
12.	अलोकाकाश (अलोक)	Empty Space/Space-Time continuum/ Universe
13.	पंचास्तिकाय	Homogenous and Isotropic Universe/ Visible Universe consisting of five distinct Quantum Fields
14.	धर्मास्तिकाय द्रव्य	Accelerating Space Potential
15.	अधर्मास्तिकाय द्रव्य	Retarding Space Potential
16.	धर्म लक्षण	State of Motion
17.	अधर्म लक्षण	State of Rest
18.	आकाश प्रदेश	Gravity Quanta/Space Element Equivalent to Plank Length
19.	पुद्गल परमाणु	Quanta
20.	परमाणु प्रदेश	Electron cloud/Atomic Wave Function

क्र० स०	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
21.	अष्टस्पर्शी परमाणु	Atom
22.	चर्तुर्स्पशी कार्मण परमाणु	Energy Quanta/ Photon/Phonon
23.	रुक्ष परमाणु	Neutral or positively charged Atom
24.	स्निग्ध परमाणु	Negativity charged Atom
25.	शीत परमाणु	Atoms in Lower Energy States/Ground Energy State
26.	ऊष्ण परमाणु	Atoms in Higher Energy States/Excited States
27.	परमाणु वर्ण तथा वर्ण-अंश	Atomic Spectrum and Gray Tones
28.	परमाणु की देशान्तर, कम्पन तथा स्पंदन गति	Translatory, Vibration and Rotatory motion of Atom
29.	परमाणु के उपकारः उष्णता प्रकाश आतप, अंधकार आदि	Atomic Emission and Absorption of Radiations
30.	उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य का सिद्धान्त	Law of Conservation of Mass and Energy
31.	'सत्' का ज्ञान सिद्ध शिलापर स्थित सर्वज्ञ को होता है।	Absolute Truth is known only to universal observer

क्र० स०	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
32.	'असत्' मिथ्यात्व नही है अपितु द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के संदर्भ में 'सत्' है।	Observations made with reference to Inertial Frame of Reference is Relative Truth
33.	लोक, अलोक, आत्मा और परमाणु की नित्यता 'सत्' है जो अवधिज्ञान तथा केवल ज्ञान द्वारा प्रमाणित है।	Absolute truth can not be sensed by human beings
34.	पांच ज्ञानेन्द्रिय, श्रुतज्ञान, अभिनिबोधिक ज्ञान तथा मनः पर्यय ज्ञान आदि सापेक्ष सत् को प्रमाणि ात करते है। यहां, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अपेक्षा से प्राप्त किया गया ज्ञान है।	Knowledge acquired through five senses (Space-Time Domain) and all laws of physics are relative to Inertial Frame of Reference
35.	अनेकान्त, स्याद्वाद तथा सप्तभंगी से सत् जाना जाता है।	Occurance of an event is determined by the natural law of probability distribution and Law of permutation and Combination

क्र० स०	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
36.	जीवो में चेतना है और अजीव जड़ है।	Animates are aware of their's and other's existence. In-animates are not aware of their existence or any other object
37.	एकेन्द्रिय जीव पुरुषार्थ द्वारा पंचेन्द्रिय जीव तथा मनुष्य भाव तक विकास करता है। विकास का उद्देश्य आत्मा के गुणों में चौदह स्थान तक वृद्धि करना है।	Darwin's Theory Biological Evolution implies that single cell organism evolves to most complex organism like human being 'Survival Instict' is the motivating force for the evolution
38.	अजीव पदार्थों की उत्पति परमाणु-परमाणु बंध द्वारा स्कन्ध रुप में होती है।	Chemical combination of atoms result in formation of molecules which aggregate to produce substances.
39.	आत्मप्रदेश तथा परमाणु का बंध कार्मण शरीर है जिसके अनुसार जीव के स्थूल शरीर की रचना होती है।	Thoughts and Body Actions are manifested as Photon Phonon' ineterection and stored as genetic code which determines species of the liveing being

क्र॰ स॰	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
40.	जीव की उत्पत्ति जीव द्वारा होती है। ऐसा कभी नहीं होता कि अजीव, जीव बन जाए।	Life begets Life. Life comes from per-existing Life. Animates never emerge from in-animates, yet Abiogenesis occured as accident about four billion years ago in which inanimate DNA molecule became animate.
41.	शारीरिक, मानसिक, वाचिक कार्य (कर्म) कार्मण वर्गणा के परमाणु है	All Physical, Mental and Vocal Actions Produce Phonon Waves
42.	जाति, गोत्र, आयुष्य, नामकर्म आदि कार्मण शरीर में अंकित है	Cell D.N.A / Cell R.N.A carries genetic code.
43.	चौदहवे गुणस्थान तक विकसित आत्मा केवलज्ञानी है, परमात्मा है जिन्हे विश्व पंचास्तिकाय के रूप में दिखाई देता है।	Knowledge brings about inner transformation maintaining harmonious balance between material and spiritual world. The enlightened souls completely divide of motion are universal observers of Absolute Truth.

क्र० स०	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
44.	सिद्ध आत्मा लोक के अग्र भाग पर स्थित हो जाती है। यही परमात्मा है जिसके पुनः कर्म बन्ध नहीं होते।	Zero - Entropy condition means supreme Order. It is a State of vacuum according to Quantum Mechanics and State of Nirwana according to Mahavir.
45.	दो अथवा दो से अधिक परमाणु के संघात से स्कन्ध और स्कन्ध विघटन से परमाणु की उत्पत्ति होती है।	Atomic Combination and Dissociation result in production of Molecules and Atoms.
46.	एक आकाश प्रदेश पर एक से अधिक परमाणु रह सकते है।	Superposition of Atomic Wave Functions result in Bose-Einstein Condensate
47.	अप्पा सो परमाप्पा का सिद्धान्त	Evolutionary Spiritualism
48.	काल अस्तिकाय नही है। काल अढ़ाई द्विप तक सिमित है।	Time is animal perception and does not exist as matter or energy.
49.	जीव और पुद्गल परमाणु की गति अणुश्रेणी में होती है।	Motion is always in straight line unless acted upon by external force.

क्र॰ स॰	प्राचीन जिनवाणी	अर्वाचीन जिनवाणी
50.	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, तिर्यंच, मनुष्य, देव, नारक, सिद्ध सभी जीव है।	Non-material Consciousness is built in Quantum field.

प्रायः कहा जाता है कि धर्म और विज्ञान विरूद्ध दिशाओ में बहने वाले दो प्रवाह है। आस्था और श्रद्धा का मार्ग धर्म है। इसके विपरीत तर्क, नियम, विश्लेषण, परीक्षण और प्रत्यक्ष अवलोकन का मार्ग विज्ञान है। धर्म जीने की कला सिखाता है और विज्ञान प्रकृति के रहस्य खोलता है। धर्म और विज्ञान दोनो को भगवान महावीर ने समान प्रधानता दी और मानव समाज को संदेश दिया कि विज्ञान सम्यग् धर्माचरण से मनुष्य स्वयं ईश्वर बन सकता है।

इस तालिका से सिद्ध होता है कि भगवान महावीर ने विश्व उत्पत्ति (Creation of Universe) एवं जीव क्रम विकास (Biological Evolution) के विज्ञान पर देशना दी थी, परंतु बदलती धार्मिक, सामाजिक एवं राजकिय परिस्थितियों में महावीर का विज्ञान, 'जीव-अजीव और नौ तत्वों के ज्ञान मे सिमित हो गया। महावीर के विज्ञान को पुनः मूल रुप में प्रस्तुत करने का प्रयास इस अध्याय में किया गया है।

6. संदर्भ सूचि

1. अष्टपाहुड, (मोक्खपाहुड), गाथा 59
2. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 29
3. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 21

4. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 19, सूत्र 16
5. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 9, सूत्र 53, 54
6. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 36
7. तवार्थ सूत्र, अध्याय 1 सूत्र 1
8. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 1, 2, 3
9. पंचास्तिकाय, गाथा 107
10. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 3
11. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 8, सूत्र 3
12. स्थानांग सूत्र 4-2-63
13. कर्म सिद्धान्त-सिंधु में बिंदु, श्री देवेन्द्र मुनि शास्त्री श्री तारक जैन ग्रन्थालय उदयपुर
14. सूत्र कृतांग सूत्र 2-2-17
15. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 10, सूत्र 2
16. ज्ञाताधर्म कथा सूत्र, अध्याय 6, सूत्र 62
17. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 10, सूत्र 5
18. Biocentrism: How life and consciousness are the keys to understanding the true nature of the universe, R Lanza and Bob Berman
19. पंचास्तिकाय, गाथा 98
20. अष्टपाहुड (सूत्रपाहुड), गाथा 5

अध्याय 4

जैन 'सत्यासत्य' का सिद्धान्त तथा आईस्टाईन का सापेक्षतावाद

Jain Principle of Satya-Satya Vs Einstein's Theory of Relativity

विषय अनुक्रमणिका

विषय	**पेज न.**
लोक अलोक–कविता	91
Abstract	93
1. प्रस्तावना	99
2. जैनदर्शन तथा ईश्वर	102
3. जैनदर्शन में 'सत्' की अवधारणा	105
4. 'सत्' के गुण लक्षण	109
5. द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप तथा क्वांटम फील्ड	114
6. श्वेताम्बर, दिगम्बर तथा विज्ञान में काल (Time) तत्व	116
7. श्वेताम्बर जैन संप्रदाय में काल द्रव्य	118
8. दिगम्बर जैनाचार्यो की दृष्टि में काल द्रव्य	120
9. काल की वैज्ञानिक अवधारणा	123
10. काल की अवधारणाओं का विश्लेषण एवं मतों में समन्वय	124
11. उपसंहार	128
12. संदर्भ सूचि	129

लोक अलोक

ज्ञान मार्ग पर चलने के इच्छुक सुन लो मेरे बोल।
इस अध्याय में हीरे मोती मणियाँ बिखरी है अनमोल।।

जन्म मरण का अन्त है करना, मुक्त दुःखो से होना है।
दुर्लभ नर भव मिला, इसे यों भावों में नहीं खोना है।।

वैज्ञानिक महावीर नें जो कुछ कहा आचरण हम कर ले।
अन्य कहीं पर मोक्ष ना ढूंढे, यहीं मुक्ति सुख हम कर ले।।

धर्म और विज्ञान का बिल्कुल सही समन्वय हो जाये।
इस पुस्तक से ज्ञान मार्ग का सरल उपाय सभी पाये।।

ABSTRACT

The Jain Concepts of space, time and the universe are summarized below in the convenient question and answer format.

1. Who is creator of the Universe?

The Universe has no creator. It neither has a beginning nor end. It only evolves over a time cycle of millions of years. The first half cycle is called Uvasarpini and the second half Avasarpini. Both the cycles are evolutionary and not revolutionary in nature. Evolutionary 'Universe is also the single most important concept of modern cosmology.

2. Where does the universe and the matter come from?

The Jain canonical literature cites Akashstikaya the infinite gravitational field as the source of everything. Finite numbers of Akash Pradesha (Field Elements) constitute Loka, the visible space and infinite numbers of Akash Pradesh constitute Aloka, the invisible space .

3. What is Akashastikaya?

Akashastikaya is not an empty space or vacuum. It is an invisible, formless Draya or matter having gravitation property. Akashastikaya cannot be sensed by smell, taste, color, feel or touch. The animal consciousness has the capability to sense Akashastikaya in 'Space–Time' reference system as length, area, volume or movement of objects.

4. What does the universe consist of?

The Jain Agamas describe the universe as Panchastikaya, a body consisting of five distinct Quantum Fields. The Panchastikaya Lok is Visible part of infinite, unbounded vacuum Quantum Field called Akashastikaya. The invisible, empty part of Akashastikaya is infinite and boundless. It is called Aloka. Lok and Alok together make Akashastikaya and there is no boundary between them.

5. What are the constituent Elements of the Panchastikaya Lok?

The universe or Lok appears as Panchastikaya to enlightened Souls like Mahavir. But to human beings, it appears as consisting of six distinct Dravyas or Substances, namely-Akash, Dharm Dravya, Adharm Dravya, Pudgal Parmanu, Jiva and Kaal. In other words, the five Quantum Fields are perceived by humans beings as five distinct substances. Human perception is conventionally called as Time or Kaal.

6. What is Time? Does 'Time' really exist? Is time fundamental to the universe?

Mahavir says the universe is Panchasikaya consisting of five Drayas only. Therefore Time is not a Dravya or a 'Sat' like other Dravyas. Creation and destruction is a continues process. The human consciousness estimates the speed or rate at which this change takes place. The speed or rate of change is perceived by us as time which is Asat or an illusion, a Maya and not Absolute Truth. 'Jiva was existing when there was no time and will continue to exist in the present and also in the future', says Mahavir.

7. What is the shape of the Universe?

The old Jain canonical literature depicts Lok as having shape of a standing man with both hands on his waist and legs drawn apart. Since Lok is Panchastikaya, it cannot have well defined boundaries but a density gradient without Singularity. Therefore the shape of the universe is symbolic to indicate that matter is confined to a finite area or volume of 14 Rajju having a shape of the standing man, i.e. hyporbolic shape.

8. Dose the quantity of the matter contained in the universe change with time?

Mahavir like the present day scientist says that the total quantity of the matter in the universe remains constant. In scientific language we may say 'the universe is a closed system with no loss, no gain, Above mentioned shape of Loka ensures that the total quantity of the matter in the universe remains constant.

9. What types of materials are found in the Universe?

The Universe contains only two types of materials - Jiva and Ajiva or Living and non living matter. Jiva is made of finite numbers of Akash Pradesh while Ajiva is made of one, two, three atoms or their integrals multiples.

10. What is Reality? Are Reality and Truth one and same thing?

The perception of the Universe and its constituents by human consciousness is called

Reality. Permanent existence of the universe, Quantum Fields, Lok, Alok, Atom and Consciousness all are Absolute Truth. In other words existence of 'Jad' and 'Chetan' Drays is 'Truth' and their perception by human Consciousness is 'Reality', which is temporary and limited in Space and Time. Thus Truth is free of limitation of time and Reality is time bound.

11. What is Jain Theory of Everything?

Mahavir says everything physical in the Universe is made of Akash-pradesh, which is natures fundamental unit of everything. Both non-material Jiva and material Pudgala are made of Akash pradesh which implies that two distinctly and seemingly inconsistent material elements of reality coexist in a complimentary way. Now scientists also echo this statement of Mahavir when they say everything physical in the universe comes from a single source the Higgs Boson or God Particle, which in Agmik language is called Akash Pradesh. Frank Wilezek received Nobel-prize in 2004 for Theory of Everything which is similar to that of Mahavir.

Einstein proposed 'General and Specific Relativity Theory during 1905 to 1915. Even a casual reading of Einstein's views reveals that his theory is simply a mathematical expression of what is being stated above in Para 1 to 11. Einstein refers Lok as 'Visible Space', Alok as Infinite Space-Time continuum and Akashastikaya as Four Dimensional Gravitation Field. Einstein was skeptical of quantum nature of the space and on

several occasions he had heated arguments with Nobel Laureate Niels Bohr on this issue. Finely while proposing the Unified Field Theory; he did agree that space has probabilistic quantum nature. **To Mahavir the continuum and quantum nature of space was obvious but it took several decades for the scientists to arrive at this conclusion. It was in 1964 that Higgs postulated like Mahavir that empty space is a quantum field that endows mass to sub atomic particles by condensing on them. Thus modern cosmology and quantum physics agree that the primary source of everything in the universe is element of cosmic space what Mahavir called as Akasha pradesh. Einstein put the same fact in the form of the equation $E = mc^2$.**

जैन 'सत्यासत्य' का सिद्धान्त तथा आइंस्टाईन का सापेक्षतावाद

1. प्रस्तावना

लगभग 2600 वर्षों पहले भगवान महावीर ने अनेक वैज्ञानिक घोषणाएं की जो ईस प्रकार है–

1. आकाश में दिखाई देने वाला द्रव्य समूह विश्व (लोक) है जो द्रव्य की अपेक्षा से शाश्वत है। और पर्याय दृष्टि से अशाश्वत[1]।

विश्व का कोई भी निर्माता, निदेशक संचालक, सरंक्षक अथवा भाग्य विधाता नही है। विश्व स्वनिर्मित जीव अजीव द्रव्यों की एक प्राकृतिक अनादि व्यवस्था है[2] जिसका अस्तित्व **'उपानेईवा-विग्नेईवा-ध्रुवेईवा[3]'** सिद्धान्त के अनुसार त्रिकाल बना रहता है। अर्थात आधुनिक प्रचलित भाषा में कहा जा सकता है कि विश्व एक जीव-अजीव द्रव्यों की कोआपरेटिव संस्थान है जिसके सदस्य 'परस्परोपग्रहों'[4] के भाव से जीवन यापन करते है।

2. आकाश खोखला रिक्त स्थान नही है अपितु एक द्रव्य है जिसमें अन्य द्रव्यों को अवगाहन देने की शक्ति है। आकाश अनन्त और असीम है। सभी जीव-अजीव पदार्थ आकाश में अवस्थित है[5]।

3. विश्व में द्रव्यों की कुल संख्या नियत (Constant) है, न वह घटती है न बढ़ती है[6]। अर्थात संसार में अनादि काल से जितने जीव और परमाणु थे आज भी उतने ही है और

अनन्त काल तक उतने ही रहेंगे। सिद्ध देव मनुष्य, नारक, तिर्यंच, वनस्पति आदि जीव तथा अजीव पदार्थ लोक में सीमित है। लोक के बाहर कुछ भी नही है केवल आकाश ही आकाश है। लोक में बाहर से न कोई प्रवेश कर सकता है और न कोई लोक से बाहर जा सकता है। विज्ञान की भाषा में कहा जायगा– Universe is Energetically Closed System.

4. लोक है तो अलोक भी है। ब्रम्हााण्ड है तो अब्रम्हाण्ड भी है। अलोक बिना लोक का अस्तित्व संभव नहीं है[7]।

विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक अलबर्ट आईन्स्टाईन द्वारा ई० सन् 1915 में प्रस्तुत Cosmic Space and General Theory of Relativity में भगवान महावीर के उपरोक्त कथन का वैज्ञानिकरण हुआ है। आईन्स्टाइन ने लोक को Observable Space तथा Universe, अलोक को 4D- Empty Space, आकाशस्तिकाय को Space-Time Continuum, अवगाहन गुण को Vacuum Gravitation आदि शब्दों से सम्बोधित किया। इससे महावीर और आईन्स्टाईन के विचारो में पूर्ण समानता सिद्ध होती है। आईन्स्टाईन के उत्तरावर्ति वैज्ञानिकों ने आकाश के अस्तिकाय स्वरूप (Continuum) के साथ–साथ आकाश के परमाणु स्वरूप (Quantum Nature) को भी स्वीकार किया है।

भगवान महावीर ने विश्व तथा द्रव्यों के प्रति एक अत्यंत महत्वपूर्ण घोषणा की जिसका आभास आईन्स्टाईन को था, परंतु उसमें आत्मविश्वास की कमी थी। भगवान महावीर ने कहा **अभेद दृष्टि से लोक असंख्यात प्रदेशी अस्तिकाय है। अर्थात अभेद दृष्टि से लोक असंख्यात प्रदेशी एक काया** (Quantum Field) **है[8] जिसे पंचास्तिकाय कहा जाता है। भेद दृष्टि**

से लोक पाँच भिन्न भिन्न द्रव्यों का समूह है और प्रत्येक द्रव्य परमाणु (प्रदेश) रूप है। आईन्स्टाईन को अंतरिक्ष का परमाणु अथवा क्वांटम स्वरूप मान्य नही था। ई० सन् १९३० के पश्चात अन्य वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष के क्वांटम नेचर को सिद्ध किया जिससे जैन भेदाभेद सिद्धांत की भी सिध्दि होती है। जीव और अजीव द्रव्य संख्यात, असंख्यात अथवा अनन्त प्रदेशी 'अस्तिकाय' है। जीव-अजीव द्रव्यों के प्रदेशों में भेद नही है परंतु प्रदेशों की संख्या में तथा उनके द्वारा निर्मित काया में भेद है। जैन मान्यतानुसार एक परमाणु का क्षेत्र एक आकाश प्रदेश के समान होता है[9]। कुछ वैज्ञानिक मानते है कि 'आकाश प्रदेश' का क्षेत्र एक परमाणु से छोटा होता है जिसे वे 'Space-String' (आकाश-तंतु) कहते है। चिनी की चासनी में कोई अन्य पदार्थ डालने पर चासनी उस पदार्थ पर चिपक जाती है और उसके भार में बृध्दि होती है। उसी प्रकार जब कोई भारहीन पार्टीकल आकाशास्तिकाय में गमन करता है तो **आकाश के अवगाहन गुणके कारण उसमें भार का अनुभव होता है। इसलिए वैज्ञानिक आकाश प्रदेश को गाड पार्टिकल भी मानते है।**

जैन आगमिक मान्यतानुसार द्रव्य सत् है, लोक सत् है और आकाशस्तिकाय भी सत् है। उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' गुणों के कारण ये सभी असत् प्रतित होते है। इसी प्रकार 'नित्य' होते हुए भी द्रव्य तथा विश्व 'अनित्य' प्रतीत होता है। अतः आगमों में कहा गया है कि विश्व तथा द्रव्य स्वभाव से **'सत्यासत्य और नित्यानित्य है[10]। द्रव्यों का सत् (नित्य) स्वरूप तथा असत् (अनित्य) स्वरूप आईन्स्टाईन के अनुसार क्रमशः निरपेक्ष सत्** (Absolute Truth) **तथा सापेक्ष सत्य** (Relative Truth) **है।** भगवान महावीर की तरह आईन्स्टाईन ने भी घोषित किया कि निरपेक्ष सत् का प्रत्यक्ष ज्ञान केवल सर्वज्ञ को अर्थात गति रहित

स्थित व्यक्ति को होता है। मनुष्य को 'गति-प्रभावित' सत् का ज्ञान होता है। अर्थात मनुष्य का ज्ञान क्षेत्र (space) तथा काल (Time) के अनुसार बदलता रहता है। 'सत्' पर द्रव्यों के गतिका जो प्रभाव होता है उसे आईन्स्टाईन ने 'लैप्लास इक्वेशन' (Laplace's Equations) द्वारा प्रदर्शित किया जिसकी सहायता से निरपेक्ष सत् को अप्रत्यक्ष रूप से जाना जा सकता है। यही कार्य भगवान महावीर ने ' 'अनेकान्त दृष्टि तथा 'स्याद्वाद' की भाषा के माध्यम से किया है। **अरिहंतो का निरपेक्ष सत् का ज्ञान प्रत्यक्ष है क्यों कि वे परमाणु और 'जीव तत्व' को देख पाते है।**

उपरोक्त सत् असत्, नित्य, अनित्य लोक, अलोक, आदि जैन अवधारणाओं का विस्तृत वर्णन विज्ञान के परिप्रेक्ष में इस अध्याय में प्रस्तुत है।

2. जैनदर्शन तथा ईश्वर

जैन दर्शन में भाग्य-विधाता ईश्वर की मान्यता नहीं है। तथापि जैन धर्म आध्यात्मिक है क्योंकि इसमें, पाप, पुण्य, स्वर्ग, नरक, देव, दानव आदि की मान्यता है। जैन अवधारणानुसार इन तत्वो का 'ईश्वर' से कोई सम्बन्ध नहीं है। वे सभी जीव-अजीव द्रव्यों के भिन्न-भिन्न रूप अथवा उनकी पर्यायें हैं। **अतः जैन धर्म की आध्यात्मिकता मूलतः द्रव्यों के अस्तित्व पर आधारित है।** जैन धर्म का ईश्वर अन्य धर्मो के ईश्वर से भिन्न है। वह विश्व का निर्माता नहीं है। पाप-पुण्य के अनुसार वह जीवो के कर्मो का न्याय नही करता। पाप-पुण्य के अनुसार वह उन्हें दण्डित अथवा पुरस्कृत भी नहीं करता। **जैन धर्म का ईश्वर सर्वज्ञ है, ज्ञानी है, विज्ञानी है और केवलज्ञानी है।** पूजा पाठ, भक्ति, आराधना तथा भिन्न भिन्न प्रकार के कर्मकाण्डों से वह प्रसन्न नही होता। वह मनुष्य को सुख-शांति, वैभव, स्वर्ग भी नहीं दे सकता। वह उन्हें

नरक में भी नहीं ढकेल सकता। जीव का जन्म-मृत्यु भी उसके हाथ में नहीं है। **जैन श्रमणों का ईश्वर वितरागी परमात्मा है जो जन्म, जरा, मृत्यु से मुक्त है तथा अनन्त ज्ञान दर्शन और चरित्र से युक्त है।** वह अनन्त आनंद में लोक के अग्रभाग में शुद्ध चेतन द्रव्य के रूप में विद्यमान है।

जैन दर्शन के अनुसार मनुष्य तथा अन्य जीव शरीरधारी चेतन आत्मा है। ईश्वर कर्मो से मुक्त आत्मा है[11] और मनुष्य तथा अन्य जीव कर्मो से बंधे है। अतः संसारी जीव स्वयं की आत्मा का विकास करते हुए कर्मो से मुक्त होकर ईश्वर अथवा परमात्मा बन सकता है-'अप्पा सो परमाप्पा'।

भगवान रजनिश (ओशो[12]) जैनधर्म की विशेषतः का वर्णन इस प्रकार करते है– 'विश्व के सभी धर्म आटोक्रेटिक है। परंतु जैन धर्म डेमोक्रेटिक है। संसार के सभी जीव शरीर धारी भगवान है। संसार के अन्य धर्म कहते है ईश्वर एक है परंतु महावीर कहते है ईश्वर अनेक और अनन्त है। प्रत्येक जीव स्वधर्म से एक आत्मा है जो परमात्मा बन सकता है। **सभी धर्म जगत से पहले परमात्मा को रखते है। भगवान महावीर परमात्मा को जगत के अन्त में रखते है। सभी धर्म मानते है कि परमात्मा जगत का कारण है परंतु भगवान महावीर कहते है परमात्मा जीव की अंतिम अवस्था है।'** सभी का भगवान बीज की तरह है परंतु महावीर का भगवान फूल की तरह है।

विश्व निर्माण के लिए ईश्वर की आवश्यकता नहीं है। विश्व द्रव्य समूह है और द्रव्य अनादि तथा शाश्वत है। द्रव्य न उत्पन्न होते है और न हीं नष्ट होते है। उनमें केवल परिणमन होता है। विश्व रूपी और मूर्त है जिसकी रचना अरूपी, अमूर्त

ईश्वर नही कर सकता। विश्व निर्माण के लिये अरूपी, अमूर्त तत्व के साथ-साथ मूर्त, रूपी तत्व की आवश्यकता है। महावीर के इन विचारों में एवं वैज्ञानिक अवधारणा में कोई मतभेद नहीं है। जैन दर्शन में रूपी, मूर्त परमाणु और अरूपी, अमूर्त चेतन तत्व (आत्मा) को विश्व निर्माता के रूप में स्वीकार किया गया है जिसे जैन द्वैतवाद कहा जाता है। ईश्वरवादी धर्म अद्वैतवादी कहलाता है। उनकी दृष्टि में विश्व, ईश्वर द्वारा रचित माया है। परंतु जैन दर्शन के अनुसार द्रव्य-परिणमन विश्व की विविधता तथा नश्वरता का कारण है। महाकवी पुष्पदंत द्वारा रचित **'जसरथचरिऊ**[13]**'** में सुदत्त मुनि कहते है 'यह लोक न तो कोई ब्रम्हा या रुद्र द्वारा उत्पन्न किया गया है, न धारण किया गया है और न काल के द्वारा उसका क्षय होता है। यह लोक तो आकाश में चौदह रज्जु प्रमाण एक महास्कन्ध के समान आकाश में स्थित है। आकाश में अवकाश पाकर जब कोई वस्तु स्थित नहीं होती तब वह नभ स्थल में गमन करती दिखाई देती है।

मनुष्य इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ जीव है। अतः भगवान महावीर ने ईश्वर उपासना के स्थान पर श्रमण उपासना का संदेश दिया। श्रमण उपासना के साथ में कोई कर्मकाण्ड भी नही जोड़े गये। महावीर के अनुयायी श्रमणों के पास जाते है और उनसे धर्म तथा ज्ञान प्राप्त करते है। विज्ञान सम्यग धर्म से साधना सफल होती है-**विण्णाणे ण समागम धम्म साहणमिच्छियं**[14]। ज्ञान, धर्म साधना तथा वीतरागता के मार्ग पर चलते हुए मनुष्य परमात्मा की अवस्था तक पहुँच सकता है। पाश्चात्य दार्शनिक जगत में भी अब एक नयी विचारधारा का उदय हुआ है जिसे एवलुशनरी स्पिरिच्युएलिजम् (Evolutionary Spiritualism) कहा जाता है। इसके अनुसार मनुष्य बायलाजीकल और स्पिरिच्युअल विकास

करता हुआ सर्वज्ञ बन सकता है। जैन दर्शन के अनुसार सर्वज्ञ सभी द्रव्य तथा उनकी भूत, वर्तमान और भविष्य की समस्त पर्यायों को प्रत्यक्ष जानते है[15]। सर्वज्ञ का ज्ञान अतिन्द्रिय होता है[16]।

वेदान्त परम्परा में 'ईश्वर' शब्द का अर्थ है स्वामि। ईश्वर स्वामि है और मनुष्य उसका सेवक है। स्वामि और सेवक का यह नाता सदा बना रहता है। जैन दर्शन में यह स्वीकृत नहीं है। **जैन दर्शन में सेवक को आत्मविकास द्वारा स्वामि बनने का अधिकार दिया गया है।** जैन धर्म वेदों को नही मानते। मनुस्मृति में कहा गया है। **वेदानिन्द को नास्तिक**' अर्थात जो वेद की निन्दा करते है, वे नास्तिक है। इस दृष्टि से प्राचीन काल में जैन धर्म को नास्तिक भी कहा जाता था। जैन दर्शन विज्ञान है और विज्ञान 'अस्ति-नास्ति' से बहुत ऊंचा होता है।

3. जैनदर्शन में 'सत्' की अवधारणा

जैनदर्शन में 'सत्' की वैज्ञानिक, दार्शनिक और व्यवहारिक दृष्टि से विवेचना की गयी है। भगवान महावीर के समय भारत वर्ष में अनेक धार्मिक तथा दार्शनिक विचारधाराऐं प्रचलित थी। सभी अपनी आस्थानुसार 'सत्' की व्याख्या करते थे। अधिकतर धर्म ईश्वर को 'सत्' और विश्व को उसके द्वारा निर्मित माया मानते थे। परंतु भगवान महावीर ने 'सत्' की परिभाषा **'सत् द्रव्य लक्षणम्**[17]**'** के रूप में की। द्रव्य ही सत् है। द्रव्य और सत् में कोई भेद नही है। **ईश्वर सत्ता के स्थान पर द्रव्य सत्ता को स्वीकार करना जैन दर्शन की वैज्ञानिकता को स्थापित करता है। लोक द्रव्य समहु है। अतः लोक सत् है।**

आगमों में लोक को 'पंचास्तिकाय' अर्थात पांच आस्तिकाय द्रव्यों से बनी काया कहा है। **भगवती सूत्र**[18] में गौतम स्वामि प्रश्न

करते है– ''भगवन! लोक क्या है''? समाधान करते हुए महावीर कहते है, ''गौतम! लोक पंचास्तिकाय है। ये पांच अस्तिकाय है– धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय। ये पाँच अस्तिकाय सत् है।'' **व्याख्या प्रशप्ति सूत्र**[19] के अनुसार, 'यह असंभव है कि पाँच आस्तिकाय किसी समय में न थे या नहीं होते या कभी भाविष्य में नहीं होंगे। वे सदा थे, सदा रहते है सदा रहेंगे। यह ध्रुव, सदा रहने वाले, कम न होने वाले, नष्ट ने होने वाले एक से रहने वाले नित्य और अरूपी सत् है। इनमें केवल पुद्गल रूपी है।'

द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप निरपेक्ष सत् है जो इन्द्रिय ग्राहय नहीं है। इनका ज्ञान केवल सर्वज्ञ को है। मनुष्य को इनके इन्द्रिय ग्राहय स्वरूप का अर्थात धर्म, अधर्म, जीव और पुद्गल का ज्ञान होता है। द्रव्यों का यह 'असत्' रूप है अर्थात सापेक्ष सत् है। द्रव्य, क्षेत्र काल और भाव की अपेक्षा से इन द्रव्यो के परिणमन को जाना जाता है।[20] उदाहरण स्वरूप जीव का अस्तिकाय स्वरूप असंख्यात प्रदेशी चेतन तत्व अथवा आत्मा है जिसे हमारी इंद्रिया ग्रहण नही कर सकती।

मनुष्य, तिर्यंच, वनस्पति आदि जीवों का ज्ञान हमें होता है जो असत् अथवा सापेक्ष सत् है। इन जीवों में भी निरपेक्ष चेतन तत्व अथवा आत्मा का अस्तित्व है जिसे हम नहीं देख पाते। इसी प्रकार पुद्गलास्तिकाय का हमें ज्ञान नहीं होता। हमे पुद्गल का ज्ञान परमाणु और स्कन्ध रूप में होता है जो पुद्गलास्तिकाय का रूपी और मूर्त स्वरूप (Physical Form) है– **रुपिणः पुद्गला**[21]। हमें धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का ज्ञान नही होता परंतु इनके अस्तित्व का अनुभव द्रव्यों की गति और स्थिति के माध्यम से होता है। इसी प्रकार आकाश का अनुभव हमे एक रिक्त और खोखले

स्थान के रूप में होता है परंतु इसके शाश्वत निरपेक्ष अवगाहन गुणो वाले आकाशास्तिकाय के रूप में नहीं होता।

मनुष्य निरपेक्ष सत् का कथन करने में भी असमर्थ है। अतः **भगवती सूत्र** में कहा है **तमेव सच्चं निस्सके ज जिने ही पवेईय',** अर्थात सत् वही है जिसका कथन जिनेंद्र देव ने किया है। जैन आगम 'सत्' के प्रमाण है। इस जगत में कोई वस्तु जैसी दिखाई देती है, वह वास्तव में वैसी नहीं होती। देखने वाले व्यक्ति की दृष्टि के अनुसार वस्तु का स्वरूप भी बदलता है। हमें प्रतिदिन सूर्य उदय और अस्त होते हुए दिखाई देता है। वास्तवतः सूर्य का आकाश में त्रिकाल अस्तित्व है न तो उसका उदय होता है और न ही वह अस्त होता है।

जम्बूद्वीप के एक भाग में दिन है तो उसी समय लोक के अन्य भागों में रात हो सकती है। अतः 'इस समय दिन है' यह कथन किसी एक क्षेत्र के लिये सत् है तो अन्य क्षेत्र के लिए असत्। हम स्वयं को स्थिर अवस्था में देखते है, परंतु यथार्थता यह है कि हमारे शरीर में अनेक प्रकार की गति है। भगवान महावीर कहते है, हमारा शरीर परमाणु से बना है और परमाणु अनेक प्रकार की गति करता है। अतः हमारे शरीर का कण-कण निरंतर भ्रमण करते रहता है, जिसका हमें आभास नहीं होता। इसी प्रकार हमारी धमनियों में रक्त निरंतर दौड़ते रहता है परंतु इसका हमें ज्ञान नहीं होता।

हमारे शरीर की पहली गति परमाणु की गति है। दूसरी गति पृथ्वी की स्वयं की गति। तीसरी पृथ्वी के साथ-साथ हम भी सूर्य की परिक्रमा कर रहे है। चौथी गति सौर मण्डल की है जो सूर्य की ओर घूम रहा है। पांचवी गति में सूर्य स्वयं महासूर्य की ओर घूम रहा है और 20 करोड़ वर्षों में उसकी एक परिक्रमा होती है। छटि गति महासूर्य (गैलेक्सी) की गति है। मनुष्य स्वयं

की ऊर्जा से भी चल सकता है। **इस प्रकार हमारा शरीर सतत् अनेक प्रकार की गति कर रहा है। इस अवस्था में हमें निरपेक्ष सत् का ज्ञान हो ही नहीं सकता। यदि हम जीवास्तिकाय रूप में परिवर्तित हो जाते है तो हम सभी प्रकार की गति से मुक्त हो जाते है। आगमों में इस स्थान को मोक्ष गति अथवा सिद्ध स्थान कहा है। इस प्रकार केवल सिद्ध अवस्था में हमें निरपेक्ष सत् का ज्ञान हो सकता है।**

सत् मूलतः सैद्धान्तिक है। सत् का बदलता स्वरूप व्यवहारिक है और सत् की नित्यता आध्यात्मिक है। सैद्धान्तिक दृष्टि का अभिप्राय सत् को यथार्थ रूप में जैसा है वैसा स्वीकार करना है। **'कालत्रये तिष्ठंतति सद उदेव सत्यम'** अर्थात जिसका त्रिकाल अस्तित्व है वही सत् है। **योगदर्शन सूत्र ३** में कहा है **'सत्यार्थ यथार्थवाङग मनसी यथा दृष्टां यथाश्रतु'** अर्थात जैसा देखा, जैसा सुना, उसको उसी रूप में कथन करना तथा मन और वाणी में एक रूपता रखना ही सत् है। सत् की यह व्यवहारिक दृष्टि है जो वास्तवतः असत् है।

अरिहंतो ने सत् का प्रतिपादन आकाश, लोक, अलोक, जीव और अजीव द्रव्यों के रूप में किया है। यह संसार सत् है। संसार में पाये जाने वाली प्रत्येक जड़ और चेतन वस्तु सत् है परंतु परिणमन के कारण वह असत् भी है। लोक और द्रव्य नित्य है। नित्यता का अर्थ यह नहीं है कि द्रव्य जिस रूप में है, वह सदा उसी रूप में रहेगा। द्रव्य नित्य है परंतु उसकी पर्यायें अनित्य है[22]। **अतः द्रव्य 'नित्यानित्य' है।** इसी प्रकार द्रव्य सत् है और उसकी पर्यायें 'असत्' है। **अर्थात द्रव्य 'सत्यासत्य' है। द्रव्यों का सत्यासत्य और नित्यानित्य स्वभाव वर्तमान समय में विज्ञान का 'सापेक्षता का सिद्धान्त' कहलाता है। द्रव्यों का**

सत् और नित्य स्वरूप निरपेक्ष सत् अथवा Absolute Truth **है और उनकी असत् तथा अनित्य स्वरूप सापेक्ष सत् अथवा** Relative Truth **है। अतः भगवान महावीर ने श्रमणों को उपदेश दिया की वे सत् को जानने के लिये अनेकान्त दृष्टि को अपनाएं और सत् के कथन के लिये स्याद्वाद् का प्रयोग करें। भगवान महावीर ने सत् को जानने के लिये भेदाभेद, सत्यासत्य, नित्यानित्य, सप्तभंगी आदि वैज्ञानिक प्रणाली का प्रयोग किया। पूर्वमान्यता, श्रद्धा और आंस्था के स्थान पर भगवान ने तर्क, विश्लेषण, स्याद्धाद, अनेकान्त और सप्तभंगी को अपनाया।**

4. 'सत्' के गुण लक्षण

वेदान्ती कहते है 'केवल ब्रह्मा सत् है' और नित्य है। बौद्ध सत् को क्षणिक अर्थात अनित्य मानते है। **भगवान माहवीर ने कहा 'सत्' न तो एकान्त नित्य है, न एकान्त अनित्य है, वह नित्यानित्य है, 'सत्यासत्य है' और 'उत्पाद व्यय ध्रौव्य[23]' युक्त है। ब्रहा, विष्णु, महेश क्रमशः उत्पत्ति, सृजन और विनाश के देवता है परंतु जैन दर्शन के अनुसार त्रिदेवो का यह कार्य परमाणु और जीव द्वारा किया जाता है।** परमाणु और आत्मा की पर्यायों का उत्पाद का प्रतीक ब्रम्हा है, व्यय का प्रतीक शिव और ध्रौव्य का प्रतीक विष्णु है। गौतम स्वामी के प्रश्न का समाधान करते हुऐ भगवान महावीर कहते है,[24] ''गौतम! आत्मा एकान्त नित्य नहीं है, वह एकान्त अनित्य भी नही है। वह नित्यानित्य है। वह 84 लाख जीवयोनियों में भ्रमण करता है।''

गौतम स्वामि[25] ने प्रश्न किया–**'परमाणु पोग्गलेण भन्ते। कि सासऐ असासऐ?'** अर्थात भगवन! परमाणु शाश्वत है, अथवा अशाश्वत? भगवान ने उत्तर दिया **'गोयमा! दव्वानाए् सासए। वन्न**

पज्जावहि असासए' अर्थात द्रव्यार्थिक नय से परमाणु शाश्वत है, परंतु वर्णादि पर्यायों से अशाश्वत है।

'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' के समान विज्ञान में भी एक मूल सिद्धान्त है जिसे 'द्रव्य' और उर्जा का संरक्षण नियम' अथवा 'Law of Conservation of Mass and Energy' कहा जाता है। इस नियम के अनुसार एटमं और एनर्जी की न उत्पत्ति होती है और न विनाश होता है। अर्थात उनकी संख्या न घटती है न बढ़ती है सदा नियत रहती है। **विज्ञान में इस सिद्धान्त की खोज महावीर निर्वाण के लगभग २००० वर्षो पश्चात हुई।**

जैन दर्शन के अनुसार परमाणु और जीव में परिणमन होता है परंतु परमाणु का जीव में अथवा जीव का परमाणु में परिणमन पूर्ण निषेध है। आगमो में[26] कहा है कि 'यह असंभव है कि जीव कभी अजीव हो जाये अथवा अजीव कभी जीव हो जाय। जीव की सभी पर्यायें जीव ही होती है और अजीव को सभी पर्यायें अजीव ही होती है।

विज्ञान का भी यही सामान्य नियम है। किसी भी रासायनिक, अथवा भौतिक प्रक्रियाओ में परमाणु परमाणु ही रहता है और ऊर्जा, ऊर्जा ही रहती है। परमाणु का ऊर्जा में और ऊर्जा का परमाणु में परिवर्तन नही होता। द्रव्य की एक विशेष अवस्था होती है जिसे विज्ञान में 'प्लाजमा' कहा जाता है। सूर्य तथा अन्य तारे प्लाज्मा है जिसमे हाइड्रोजन परमाणु, प्रकाश तथा उष्णता में परिवर्तित होते है।

जीव उत्पत्ति के विषय में वैज्ञानिक मान्यता है की जीव की उत्पति जीव द्वारा होती है– 'Life begets Life' वैज्ञानिक यह भी मानते है कि पहले पृथ्वी सूर्य की भाँति आग का गोला था। अतः पृथ्वी पर कोई जीव नहीं था। लगभग 450 करोड़ वर्ष पूर्व

जब पृथ्वी ठंडी हो गयी, उस समय अजीव परमाणु की रासायनिक प्रक्रिया द्वारा अमीनो एसिड की उत्पत्ति हुई जिसे मेडिकल साइंस में डी. एन. ए. (DNA) कहा जाता है। जीव विज्ञान के अनुसार डी. एन. ए. ही जीव तत्व है। इस प्रकार वैज्ञानिक मानते है कि 450 करोड़ वर्ष पूर्व एक जैविक एक्सीडेन्ट में अजीव परमाणु से जीवित कोशिका की उत्पत्ति हुई। इस प्रक्रिया को (Abiogenesis) 'ए-बायोजोनेसिस' कहा जाता है। इसके पश्चात जीव की उत्पत्ति सदा जीव से ही होती रही है, जिसे बायोजेनेसिस कहा जाता है। अर्थात-Life always comes from pre-existing life.

एबायोजेनेसिस अथवा 'अजीव से जीव की उत्पत्ति' का अर्थ यह नही है कि जड़ से चेतन की उत्पति हुई अथवा जड़ का चेतन में परिवर्तन हुआ। इस वैज्ञानिक कथन का अर्थ केवल इतना ही है कि डी एन ए रासायनिक पदार्थ है जिसकी उत्पत्ति प्रकृति में अजीव परमाणु की रासायनिक प्रक्रिया द्वारा हुई। इस डी एन ए में चेतना के अंश पाये गये। डी. एन. ए. के स्कन्ध में चेतना कैसे और कहां से आई? यह वैज्ञानिक अभी भी नही जानते। जिस दिन वैज्ञानिक यह जान जायेंगे की नीर्जीव डी एन ए कैसे जीवित हो गया उसी समय मनुष्य मृत्यु पर विजय पाने में सफल हो जाएगा।

चेतना एक अनादि शाश्वत द्रव्य है, इस जैन अवधारणा को वैज्ञानिक अस्वीकार नही करते परंतु इसे स्वीकार करने के लिये उनके पास आवश्यक प्रूफ भी नही है। इस दिशा में रिसर्च कार्य चल रहा है और कुछ प्रायोगिक संकेत भी मिल रहे है कि कदाचित चेतना प्रकृति का शाश्वत अंश है जो द्रव्यो के अस्तिकाय स्वरूप (Quantum Field) का गुण अथवा लक्षण है। वैज्ञानिक इसे बायोसेन्ट्रिजम (Biocentrism) का सिद्धांत कहते है।

सत् और असत् का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लियें जैनदर्शन में चार दृष्टियों को अपनाने का उपदेश दिया गया है। ये चार दृष्टियां इस प्रकार है

1. भेद, अभेद और भेदाभेद की दृष्टि
2. सत्यासत्य और नित्यानित्य की दृष्टि
3. अनेकान्त, नय और स्याद्वाद
4. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की दृष्टि

इन दृष्टियों से पंचमहाभूतों का विश्लेषण करने से यह सिद्ध होता है कि **पंचमहाभूत–पृथ्वी, आकाश, जल, वायु और अग्नि मूल द्रव्य नहीं है।** पृथ्वी, अग्नि, जल और वायु एकेन्द्रिय जीव, है[27]। केवल आकाश मूल द्रव्य है जो संख्या में एक है, निष्क्रिय है और अवस्थित है।

प्रत्यक्षदर्शी सर्वज्ञ[28] देव ने भेद दृष्टि से धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल, जीव तथा काल को षट् द्रव्यात्मक लोक कहा है। संख्या की दृष्टि से धर्म, अधर्म और आकश एक एक द्रव्य है। परंतु जीव पुदगल, और काल अनन्त है[29]। अभेद दृष्टि से **स्थानांग सूत्र**[30]**, व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र**[31]**, तत्वार्थ सूत्र**[32] आदि आगमों में काल के अतिरिक्त अन्य पाँच वर्ष द्रव्यों को 'बहुप्रदेशी अस्तिकाय' द्रव्य कहा है। काल अस्तिकाय नही है[33]।

द्रव्य चतुष्टय स्वभाव वाले होते है। अर्थात उनमें 'स्व-द्रव्य' (संख्या) 'स्व-क्षेत्र', 'स्व-भाव' तथा 'स्व-काल' होता है। संख्या से द्रव्य एक अथवा अनन्त है। **एक प्रदेश एक परमाणु और एक समय द्रव्यों की न्यूनतम मात्रा है। इसलिए आगमों में कहा है कि प्रदेश, परमाणु और समय अविभाजित है। इससे कम**

मात्रा में द्रव्य नहीं होता। इस प्रकार द्रव्यों की संख्या पूर्णांक (Digit) में होती है, फ्रैक्शन (Fraction) में नही। अत: जैन दर्शन और विज्ञान दोनों ही डीजिटल साइन्स (Digital Science) कहलाते है।

जिस क्षेत्र में द्रव्य के गुण पाये जाते है, वह क्षेत्र द्रव्य का 'स्व-क्षेत्र' (Sphere of Influence) है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और जीवास्तिकाय क्रमश: धर्म, अधर्म, आकाश और जीव के 'स्व-क्षेत्र' है। परमाणु का स्वक्षेत्र एक प्रदेश है। प्रत्येक द्रव्य का 'स्व-काल' भी होता है जिसके पश्चात उसमें परिवर्तन होते है। **उत्तराध्यायन सूत्र**[34] में कहा है कि रूपी अजीव द्रव्यों का 'स्व-काल' एक समय से असंख्यात समय का होता है। पृथ्वी कायिक जीवो की उत्कृष्ट आयु बाईस हजार वर्षों की और जधन्य अन्तरमुहूर्त की होती है[35]। जलकाय जीवो की उत्कृष्ट आयु सात हजार वर्ष, वायुकायिक की तीन हजार वर्ष की, अग्निकायिक की आयु तीन अहोरात्री की और वनस्पतीकायिक जीवो का स्वकाल दस हजार वर्षो का है। इन सभी जीवो की जधन्य आयु अन्तरमुहूर्त की है[36]।

द्रव्य परिणामी नित्य है। आचार्य कुन्द कुन्द[37] के अनुसार **'दव्वं' सहावसिद्धं**–अर्थात प्रत्येक द्रव्य स्व-भाव से सिद्ध है, उसकी किसी दूसरे द्रव्य से उत्पति नही होती। **स्थानांग सूत्र** में कहा है।

ण एवं भूतं वा भत्वं वा भवस्पति वा
जं जीवा अजीवा भवस्संति,
अजीवा व जीवा भवस्सति।

–स्थानांगसूत्र 10

अर्थात् न कभी ऐसा हुआ है, न होता है, न कभी होगा की जो चेतन है वह कभी अचेतन और जड़ हो जाय और जो अचेतन जड़ है वह चेतन हो जाए।

विज्ञान के द्रव्य संरक्षण नियम का भी यही अभिप्राय है। जिस प्रकार जैन दर्शन में कहा गया है कि सभी द्रव्य अस्तिकाय है उसी प्रकार विज्ञान की मान्यता है कि सभी द्रव्य मूलतः ऊर्जा अथवा एनर्जी है जिसका अस्तित्व क्वांटम फील्ड (Quantum Field) के रूप में है। ऊर्जा अमूर्त अरूपी है परंतु उसकी प्रतीति परमाणु रूप में होती है जो अनिविशी और शाश्वत है।

5. द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप तथा क्वांटम फील्ड

जैन दर्शन के अनुसार काल के अतिरिक्त अन्य जीव और अजीव द्रव्य बहुप्रदेशी अस्तिकाय है। आचार्य सिद्धसेन के अनुसार 'अस्ति' शब्द का अर्थ है शाश्वत और काय का अर्थ है शरीर जो उत्पाद और व्यय से युक्त है। अतः अस्तिकाय शब्द से 'द्रव्य-प्रदेशों' के 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' की अभिव्यक्ती होती है। आचार्य कुन्द कुन्द[38] के अनुसार जिनका अस्तित्व अनेक गुण और अनेक पर्यायों के साथ सुनिश्चित है, वे अस्तिकाय कहलाते है। यह त्रिलोक अस्तिकायों से बना है। जीव, पुद्गल, आकाश, धर्म, अधर्म ये पांच द्रव्य अस्तिकाय कहलाते है[39]। ये पांचो गुण और पर्यायों से युक्त है। ये अकृतिम है, शाश्वत है और लोक के कारणभूत है। काल, धर्म की तरह एक द्रव्य नहीं है। अतः काल अस्तिकाय नहीं है।

जैन आगमों में लोक को पंचास्तिकाय कहा है[40]। पंचास्तिकाय का स्वरूप कैसा है? आचार्य कुन्द कुन्द[41] कहते है– **पंचास्तिकाय**

में नाना प्रकार के गुण पर्याय के स्वरूप में भेद नहीं है। उनमें सम्पूर्ण एकता है। अर्थात अस्तिकाय स्वरूप में सभी द्रव्य और उसकी पर्याय एक रूप होती है। उनमें भेद नहीं होता।

तत्वार्थ सूत्र में प्रदेशों की संख्या के विषय में कहा है–**'असंख्येयः प्रदेशा धर्माधर्मयोः जीवस्स'** अर्थात् धर्म, अधर्म और जीव के असंख्यात प्रदेश होते है। आकाश के अनन्त प्रदेश है– **आकाशास्या अनन्ताः।** पुद्गलास्तिकाय के एक दो, तीन आदि अनन्त प्रदेश होते है– **संख्येया, संख्येयाश्च पुद्गलानाम।** दव्वसंग्रह गाथा 27 में लिखा है कि एक परमाणु आकाश का अणु जितना स्थान घेरता है, वह एक प्रदेश है। **अर्थात 'प्रदेश' को 'आकाश का अणु/परमाणु' कहा जा सकता है।** आकाश असीम तथा अनन्त है। आकाश के दो, तीन अथवा चार आयतन हो सकते है– अर्थात् Two Dimensional (2D), Three Dimensional (3D) and Four Dimensional (4D) के क्षेत्र है। **जैन दर्शन में आकाश को आकाशास्तिकाय कहा गया है।** आकाश के डायमेंशन के अनुसार क्षेत्र (Area) अथवा घनत्व (Volume) की इकाई एक 'आकाश प्रदेश' हो सकती है। **जीव अथवा संसारी आत्मा को 'आकाश प्रदेश' की अनुभूति नही होतीं क्योंकि आकाश प्रदेश अरूपी अमूर्त तथा अतींद्रिय है। जीव को 'आकाश प्रदेश' की प्रतीति रूपी और मूर्त परमाणु अथवा पुद्गल द्रव्य के रूप में होती है।** जीव की दृष्टि से Space-Time Domain में पंचास्तिकाय जड़ और चेतन द्रव्यों में विभाजित हो जाता है। जैन दर्शन की यह अवधारणा जिसमें जीव को आकाश प्रदेशों की अनुभूति जड़-चेतन द्रव्य के रूप में होती है, विज्ञान के बायोसेन्ट्रीजम सिद्धान्त के समान है।

क्वांटम फिजिक्स के अनुसार द्रव्यों का मूल स्वरूप पार्टिकल (सूक्ष्म खण्ड, परमाणु) नहीं है अपितु क्वांटम फील्ड

है। हमें क्वांटम फील्ड के रूप में द्रव्यों की अनुभूति नहीं होती। द्रव्य हमें एनर्जी पार्टिकल अथवा परमाणु के रूप में दिखाई देते है। ज्ञात रहे पार्टीकल को नहीं देखता हमारा शरीर अपितु हमारी चेतना अथवा आत्मा पार्टिकल को देखती है। जब पार्टिकल को कोई देखने वाला नहीं होता है तब पार्टिकल 'फील्डवेव' के रूप में होता है। फील्डवेव आकाश में उत्पन्न होती है और आकाश में ही विलीन भी हो जाती है। क्योंकि आकाश एक गुरूत्वाकर्षण का विशाल क्षेत्र है, आकाश में ग्रेविटी वेवज् (Gravity Waves) उसी प्रकार उत्पन्न होती है जैसे सागर में जल की लहरें। जल मूर्त है अतः वे हमें दिखाई देती है। परंतु ग्रेविटी वेवज् अमूर्त होने से इन्द्रिय ग्राह्य नहीं है। जिस प्रकार लहरें सागर में उत्पन्न होती हैं और सागर में ही विलिन हो जाती हे उसी प्रकार आकाशास्तिकाय में क्वांटम वेवज् उत्पन्न होती है और उसी में विलिन हो जाती है। एक परमाणु एक वेव है। असंख्यात बेवज अथवा आकाश प्रदेश मिलकर जीव तत्व अथवा पुद्गल पदार्थ बनता है। जिस तरह से लहर, बूंद, झाग आदि जल के भिन्न भिन्न रूप है उसी प्रकार आकाश प्रदेशों से पांच भिन्न भिन्न प्रकार के अस्तिकाय द्रव्य बनते है। **इसी भाव के अनुसार आचार्य कुन्द कुन्द कहते है कि 'अस्तिकाय' अवस्था में द्रव्य और उनके पर्यायों में भेद नही होता।**

6. श्वेताम्बर, दिगम्बर तथा विज्ञान में काल (Time) तत्व

काल के प्रति श्वेताम्बर तथा दिगम्बर जैन सम्प्रदायों में गहरा मतभेद है। श्वेताम्बर मान्यता है कि आकाशास्तिकाय में केवल अस्तिकाय द्रव्यों का अवगाहन है। काल अस्तिकाय नहीं है, इसलिए लोक में काल का अस्तित्व नहीं है। काल सत् नहीं है। काल असत् है।

काल के परमाणु भी नहीं है और प्रदेश भी नहीं है। द्रव्यों की गति तथा परिणमन का जो अनुमान जीव को होता है वह काल के माध्यम से होता है अतः काल जीव की दृष्टि है जो मनुष्य लोक तक सीमित है।

दिगम्बर जैन मान्यता अनुसार काल एक लोकव्यापी द्रव्य है। काल अस्तिकाय नहीं है तथापि काल के परमाणु हैं। एक-एक आकाश प्रदेश पर एक-एक कालाणु का अस्तित्व है। काल 'अप्रदेशी' है। दिगम्बर जैन विद्वान **'अप्रदेश'** का अर्थ **'एक प्रदेश'** बतलाते है। इस प्रकार दिगम्बर जैन अवधारणा के अनुसार काल निरन्तर बहने वाला अखण्ड प्रवाह नही है। अपितु काल का प्रवाह परमाणु रुप में अर्थात खंण्ड रुप में है।

काल के प्रति श्वेताम्बर जैन तथा विज्ञान के विचारों में समानता है परंतु वह दिगम्बर विचारधारा से भिन्न है। श्वेताम्बर अवधारणा की तरह विज्ञान भी काल के लोक व्यापी अस्तित्व को स्वीकार नही करता। विज्ञान की दृष्टि से काल द्रव्य नहीं है। विज्ञान में काल की कोई परिभाषा भी नहीं है। काल परिवर्तनों का इंडेक्स है और वह द्रव्य गति से जुड़ा है।

पृथ्वी पर तथा अंतरिक्ष में द्रव्यों की गति भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। न्यूटन ने सर्वप्रथम 1785 में काल को एक स्वतंत्र द्रव्य मानकर पदार्थो के गति का अध्ययन काल तथा क्षेत्र के संदर्भ में किया था। न्यूटन के अनुसार काल, गति सापेक्ष है और सौरमंडल तक सीमित है। सौरमंडल से बाहर काल का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। आईन्स्टाईन मानते है कि सौर मण्डल से बाहर काल और क्षेत्र अभिन्न है। अतः संपूर्ण अंतरिक्ष को आइंस्टाईन ने स्पेस टाइम का संयुक्त क्षेत्र माना। आईनस्टाईन द्वारा प्रस्तुत काल की अवधारणा के परिप्रक्ष्य में श्वेताम्बर तथा दिगम्बर जैन विचार नीचे प्रस्तुत है।

7. श्वेताम्बर जैन संप्रदाय में काल द्रव्य की अवधारणा

श्वेताम्बर परम्परा में ईसा की सातवीं शताब्दि तक काल के प्रति तीन विचारधाराऐं प्रचलित थी। ये विचारधाराऐं है–

1. काल की स्वतंत्र सत्ता है।
2. काल मूल द्रव्य नही है, जीव–अजीव की पर्याय है।
3. काल द्रव्यों का परिणमन गुण है।

भगवती सूत्र 13.4.481 में भगवान महावीर गौतम स्वामी से कहते है ''गौतम! लोक पंचास्तिकाय है। लोक के पांच अस्तिकाय द्रव्य है–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुदगलास्तिकाय।' **ध्यान देने योग्य विचार यह है कि पंचास्तिकाय लोक में काल द्रव्य का उल्लेख नहीं है। अर्थात काल विश्व का मूल द्रव्य नहीं है। सर्वप्रथम** उत्तराध्ययन सूत्र[43] **में षट् द्रव्यात्मक लोक के रूप में 'काल' की सत्ता को स्वीकार किया है। क्योंकि काल के कारण जीव को लोक का पांच भिन्न भिन्न द्रव्यों के रूप में अनुभव होता है।** अतः काल को लोक व्यापी न मानते हुए मनुष्य लोक अथवा सौर मण्डल तक सिमित कर दिया है।[44] **स्थानांग सूत्र** में काल को जीव–अजीव द्रव्यों की पर्याय के रूप में प्रस्तुत किया है। काल किसे कहते है? गौतम स्वामी के इस प्रश्न के समाधान में भगवान महावीर कहते है ''जीव को भी और अजीव को भी। काल नहीं होता तो रूंपातर की क्रिया नहीं होती। जन्म–मरण नहीं होते। भूत वर्तमान, भविष्य के विचार नहीं आते। गति स्थान परिवर्तन दिन, रात, ऋतु, वर्ष आदि नहीं होते।'' वर्तना गुण के कारण काल को अढ़ाई द्वीप अथवा सौर मण्डल तक ही सीमित्त कर दिया गया है। **श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार भगवान महावीर ने निरपेक्ष काल का कथन नहीं किया है। काल सत् नहीं है अपितु**

'असत्' है अर्थात् गति सापेक्ष है। सापेक्ष काल को जैन शास्त्रों में व्यवहारिक काल और अध्दा काल भी कहा गया है। यही काल के प्रति वैज्ञानिक अवधारणा है।

श्वेताम्बर जैन मान्यतानुसार द्रव्य केवल पांच है-धर्म, अधर्म, आकाश, जीव और पुद्गल। संसारी जीव इन पांच द्रव्यो के परिणमन गुण के कारण द्रव्यों में भेद करने में सक्षम है। **द्रव्यों के वर्तना की गति तथा दो वर्तना के मध्य की अवधि का अनुभव जीव को काल के रूप में होता है।** अर्थात **काल की उत्पत्ति परमाणु की गति अथवा परमाणु के परिणमन से होती है। जिसकी उत्पत्ति होती है वह शाश्वत द्रव्य नही होता। अतः काल सत् नहीं है।** संक्षेप में काल के प्रति श्वेताम्बर जैन सम्प्रदाय के विचार इस प्रकार है-

1. काल अस्तिकाय नहीं है। अतः काल पंचास्तिकाय लोक तथा अन्य पांच द्रव्यो की तरह सत नहीं है।
2. आकाश केवल अस्तिकाय द्रव्यों को अवगाहन देता है। अतः काल द्रव्य नहीं है।
3. काल के प्रदेश नहीं है। काल के परमाणु भी नहीं है क्योकि काल अस्तिकाय नही है। केवल अस्तिकाय द्रव्य के परमाणु होते हैं।
4. द्रव्यों में होने वाले परिवर्तनों का ज्ञान संज्ञी (बुद्धि तथा मन से युक्त) जीवो को काल के रूप में होता है। अतः काल का अस्तित्व उसी क्षेत्र में है जहां संज्ञी जीव रहते है। अर्थात काल अढ़ाई द्वीप तक सीमित है।
5. काल का अस्तित्व केवल वर्तमान में है। भूत उसकी मृत्यु है और भविष्य में कदाचित उसका जन्म होगा। जिसका त्रिकाल अस्तित्व नहीं है, वह काल द्रव्य कैसे हो सकता है?

6. काल को परमाणु में विभाजित करने से उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य की प्रक्रिया अखंडित न रहते खंडित हो जाएगी। इससे स्कन्ध निर्माण की प्रक्रिया अव्यवस्थित तथा अनियमित हो जाएगी और आगम मान्य स्कन्ध निर्माण के नियम अवैध हो जाएंगे।

8. दिगम्बर जैनाचार्यो की दृष्टि में काल द्रव्य

दिगम्बर आचार्यो ने एक मत से काल को लोक व्यापी स्वतंत्र अस्तित्व वाला द्रव्य माना है। आचार्य कुन्द कुन्द, पूज्यवाद, अकलंक देव, विद्यानंद स्वामी आदि आचार्यों ने 'परमाणु' स्वरूप लोक व्यापी कालद्रव्य का कथन किया है। **सवार्थसिद्धि** के अनुसार काल अणुरूपी है और आकाश की तरह अमूर्त भी है।

लोयायासपदेसे एक्केक्के जे ठिया हु एक्केक्का।
रायणाणं, रसिमिव ते कालाणु असंख्य दव्वाणि।।

अर्थात लोकाकाश के एक एक प्रदेश पर रत्नो की राशि की तरह जो एक एक करके स्थित है, वे कालाणु है और वे असंख्यात द्रव्य है। यही भाव **द्रव्य संग्रह** गाथा 22 के है जिसमे कहा है कि 'लोक के असंख्यात् प्रदेश है। प्रत्येक प्रदेश पर कालाणु स्थित है। वे कालाणु एक दूसरे से स्वतंत्र है। अतः काल द्रव्य अस्तिकाय नहीं है। **तत्वार्थ सूत्र**[45] में भी काल के व्यवहारिक स्वरूप का वर्णन है परन्तु उसके सत् स्वरूप का कथन नही है। **अध्याय ५ सूत्र २२ में व्यवहारिक दृष्टि से कहा है कि वर्तना, परिणमन, क्रिया, कर्म, परत्व-अपरत्व सभी काल के उपकार है। सूत्र ३९ में कहा है-कालश्च अर्थात कुछ आचार्यो की दृष्टि में काल भी एक द्रव्य है जो गाथा ४० के अनुसार अनन्त समय वाला है।** इस प्रकार आचार्य उमास्वामी ने भी निरपेक्ष काल का कथन नहीं किया

है। उमास्वामी के अनुसार काल **सोडनन्तसमया:** है और श्वेताम्बर आगम व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र 25/5/747 के अनुसार काल **अणन्ता समाया** है। उमास्वामी ने समय की परिभाषा भी नहीं की है। यदि 'एक समय' को एक कालाणु माना जाय तो **तत्वार्थ सूत्र** के अनुसार काल के अनन्त कालाणु होते है, इस प्रकार दिगम्बर अवधारणानुसार काल के अनन्त कालाणु है और लोक असंख्यात प्रदेशी (परमाणु) है। उमास्वामी की दृष्टि में निश्चय काल नास्ति है और व्यवहारिक काल अस्ति है जो श्वेताम्बर विचारधारा के अनुरूप है।

वस्तुतः आचार्य कुन्द कुन्द द्वारा रचित पंचास्तिकाय तथा प्रवचनसार में काल का जो वर्णन दिया है वह श्वेताम्बर विचारधारा से भिन्न नही है। पंचास्तिकाय गाथा २२ में कहा है कि लोक में केवल पांच अस्तिकाय द्रव्य पाए जाते है। गाथा 23 में स्पष्ट शब्दो में कहा है कि जीव और पुदगल में जो स्वभाविक परिणमन होते है उससे काल निर्माण (**कालो णियणेय**) की सिद्धि होती है। यह गाथा इस प्रकार है-

सब्भावासभावणं जीवाणं तह य पोग्गलणं च।
परियट्टणसंभूदो कालो णियमेण पण्णन्तो।।

-पंचास्तिकाय गाथा 23

अर्थात् सत् से संयुक्त जीव और पुद्गलों का जो परिणाम दृष्टिगोचर होता है उससे काल का अस्तित्व सिद्ध होता है। अत: यह कहा जाता है कि 'समय, निमेष, काष्ठा, कला, नाड़ी, दिन-रात, मास, ऋतु, अयन, और वर्ष सब व्यवहार काल है जो सूर्योदय, सूर्यास्त आदि से सम्बधित है। ये विचार श्वेताम्बर अवधारणा से भिन्न नहीं है।

उपरोक्त गाथा २२ और २३ से यह निष्कर्ष निकलता है कि काल पंचास्तिकाय का मूल द्रव्य नहीं है। द्रव्य परिवर्तन के भाव ज्ञान तथा क्रिया को काल कहा है। पंचास्तिकाय गाथा २४ में द्रव्यो के परिणमन भाव को अथवा काल क्रिया को अरूपी अमूर्त अलघुगुरू गुणों वाला बतलाया है। आचार्य कुन्द कुन्द पंचास्तिकाय गाथा २६ में कहते है-: पुग्गलदव्वेण विणा तम्हा कालो पडुच्चभवो। 'अर्थात काल पुदगल द्रव्य के बिना प्रगट नही हो सकता इसलिए काल को पुदगल द्रव्य के निर्मित्त हुआ माना जाता है। इससे पूर्व गाथा २५ में आचार्य श्री ने सूर्योदय तथा सूर्यास्त के संदर्भ में काष्ठा, कला, नाड़ी, दिन-रात आदि कहा है।

प्रवचनसार (ज्ञेयतत्वाधिकार) गाथा-४३ में आचार्य कुन्द कुन्द कहते है - 'णत्थि पदेसत्ति कालस्स' अर्थात् काल द्रव्य के प्रदेश नहीं है। आगे गाथा ५२ में कहा है कि जिसमें एक प्रदेश भी नही है, अस्तित्व से उस पदार्थ को तुम शुन्य जानो। इन दो गाथाओ से यह स्पष्ट है कि काल के प्रदेश नही है। इसलिए काल का अस्तित्व भी नही है। परन्तु दिगम्बर जैन पंडितो का मानना है काल द्रव्य का अस्तित्व है। अतः वे कहते है कि अप्रदेशी काल को एक प्रदेशी मानना चाहिए। दिगम्बर दार्शनिक उपरोक्त **पंचास्तिकाय** तथा **समयसार** की गाथाओ के शब्दार्थ में कालशब्द के पहले नैश्चिक, व्यवहारिक, काया, द्रव्य आदि विशेषण जोड़ देते है। मूल गाथाओ में ऐसे कोई विशेषण नही है। इन विशेषणो के कारण काल नैश्चिक काल, व्यवहारिक काल आदि में विभाजित हो गया है। इन दार्शनिको की मान्यता है काल परिवर्तन का निमित्त कारण है। अतः काल का अस्तित्व निश्चित है। व्यवहारिक काल आदि निश्चय काल की पर्याय है। दिगम्बर जैन ग्रंथो में प्रतिपादित काल द्रव्य की अवधारणा इस प्रकार है-

1. लोक पंचास्तिकाय है तथापि लोक में काल का अस्तित्व है। काल कायरूप नही है, द्रव्यरूप है। (यह भाव द्रव्यों की आगमिक मान्यता वे विरुद्ध है)
2. काल में 'उत्पाद-व्यथ-ध्रौव्य' की प्रक्रिया उसी प्रकार होती है जैसे अन्य पांच अस्तिकाय द्रव्यों में होती है।
3. काल दो प्रकार का है- नैश्चिक काल और व्यवहारिक काल। नैश्चिक काल द्रव्य प्रधान है और व्यवहार काल क्षणभंगुर तथा पर्याय प्रधान है।
4. उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य की प्रक्रिया काल की सहायता बिना नहीं हो सकती। काल द्रव्य ही परिणमन का निमित्त कारण बनता है। अतः निश्चय काल का अस्तित्व आवश्यक है।
5. निश्चय काल की समयादि रूप पर्यायों को व्यवहार काल कहा जाता है। यह व्यवहार काल जीव तथा पुदगल की परिणति द्वारा प्रकट होता है।
6. **काल अस्तिकाय नहीं है। अतः काल के प्रदेश नहीं है अर्थात काल अप्रदेशी है। अप्रदेशी काल का अस्तित्व नहीं होता। अतः अप्रदेश का अर्थ एक प्रदेश जानो। काय रहित होते हुए भी काल को पंचास्तिकाय में गर्भित जानो।**
7. पुदगल द्रव्य की तरह काल भी परमाणु रूपी द्रव्य है। परमाणु एक प्रदेशी है। लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर एक-एक कालाणु का अस्तित्व है।

9. काल की वैज्ञानिक अवधारणा

विज्ञान के अनुसार काल द्रव्य नहीं है। द्रव्य के केवल दो भेद है- मैटर और एनर्जी। काल का एनर्जी अथवा मैटर के

रूप में अस्तित्व नहीं है। काल चेतना द्वारा निर्मित एक भाव है। जन्म-मृत्यु, उत्पाद, विनाश, गति, स्थान आदि किसी भी कार्य, क्रिया अथवा परिवर्तन में काल का कोई भी योगदान नहीं है। पदार्थो की गति (Speed), गमन (Displacement), कार्य (Work), बल (Force) आदि का ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता मनुष्य की चेतना में है। सभी क्रियाओं की अवधि काल द्वारा मापी जाती है। सर्वप्रथम सन् 1785 में न्यूटन ने टाईम को एक जल प्रवाह की तरह एक ही दिशा में बहने वाला तत्व कहा। न्यूटन के अनुसार, Time is irreversible, टाईम को रिवर्स नही कर सकते। वर्तमान से भूत में प्रवेश नहीं हो सकता।

लगभग 250 वर्षो पश्चात आइंस्टाईन ने सिद्ध किया कि अंतरिक्ष में टाईम को रिवर्स किया जा सकता है अर्थात वर्तमान काल से भूतकाल में प्रवेश किया जा सकता है। टाईम और क्षेत्र में कोई भेद नहीं होने से जिस प्रकार क्षेत्र में वक्रता होती है उसी प्रकार काल में भी वक्रता आ जाती है अर्थात काल एक दिशा में बहने वाली नदी के समान नहीं है अपितु काल चक्र के समान वृताकार है। स्पेस टाईम के क्षेत्र में द्रव्यों का गमनागमन आगे-पीछे, दाये-बाएं ऊपर नीचे किसी भी दिशा में हो सकता है। उसी प्रकार भवंडर (Whirl pool) की तरह भूत, वर्तमान, भविष्य किसी भी दिशा में हो सकती है।

10. काल की अवधारणाओं का विश्लेषण एवं विभिन्न मतों में समन्वय

दिगम्बर तथा श्वेताम्बर जैन सप्रदायों की निर्विवाद मान्यता है कि -

1. लोक पंचास्तिकाय है और सत् है।
2. पंचास्तिकाय लोक का अवगाहन आकाशास्तिकाय में है।

3. काल अस्तिकाय नहीं है। अतः कायरूप काल का अस्तित्व नहीं है।
4. संसारी जीव को लोक का अस्तित्व षट्–द्रव्यों के समुदाय के रूप में दिखाई देता है। इन षट् द्रव्यों में काल भी एक द्रव्य है।
5. काल का अस्तित्व छः द्रव्यो में है परंतु पंचास्तिकाय लोक में नहीं है।
6. काल का अस्तिकाय रूप नही हैं। शेष पांच द्रव्य, द्रव्य भी है और प्रदेश रूपी अस्तिकाय भी है।
7. बर्तना काल का लक्षण है,

दोनों सम्प्रदायों में विवाद के केवल तीन बिंदू है–

1. दिगम्बर मान्यतानुसार 'काल' का 'कायरुप' में अस्तित्व नही है परंतु द्रव्य रुप में उसका अस्तित्व है। श्वेताम्बर मत के अनुसार द्रव्य रुप में काल का अस्तित्व असंभव है क्यों कि सभी द्रव्यों का मूल स्वरुप 'अस्तिकाय' है।
2. दिगमबर मान्यता है कि 'कालाणु' के रुप में काल संपूर्ण लोक में व्याप्त है। श्वेताम्बर मानते है कि काल एक –भाव है, अतः काल का अस्तित्व मनुष्य लोक अर्थात अढ़ाई द्विप तक सीमित है।
3. दिगम्बर मान्यतानुसार 'काल' परिवर्तन का निमित्त कारण है। इसके विपरित श्वेताम्बर मानते है कि 'परिवर्तन' सभी द्रव्यों का मूल गुण है अतः परिवर्तत के लिये निमित्त कारण नही चाहिये

सर्वज्ञ देव ने पंचास्तिकाय को सत् कहा है। षट द्रव्य सत् नहीं है, उनमें सत् का अंश है। षट द्रव्यात्मक लोक सत् है जिसका सत् स्वरूप पंचास्तिकाय है। षट द्रव्य जीव सापेक्ष है अर्थात संसारी जीव की दृष्टि से लोक छः द्रव्यों का समुदाय है।

इस प्रकार काल असत् है जिसे जैनाचार्य तथा दार्शनिक 'व्यवहार काल' कहते है।

भगवान महावीर का संदेश स्पष्ट है कि जो द्रव्य कायरूप नहीं है उसे आकाश अवगाहन नहीं देता। जीव को पुदगल परिणती का ज्ञान होता हैं, और यही ज्ञान व्यवहार काल है। सर्वज्ञ देव ने यह उदघोष किया कि पांच अस्तिकाय द्रव्य उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य स्वभाव वाले है। उनमें नियति के अनुसार स्वभाब से उत्पाद-व्यय निरंतर चलता रहता है जिसका ज्ञान जीव को समय, काष्ट, नाड़ी, दिन-रात, ऋतु, वर्ष आदि के रूप में होता है। परिवर्तन की गति, दशा, दिशा आदि का अनुमान हमारी चेतना कर सकती है जिसे काल द्रव्य कहा गया है। जहां संसारी जीव नहीं है वहा काल भी नहीं है।

दिगम्बर और श्वेताम्बर संप्रदायो की काल अवधारणा में जो भेद है वह मुख्यतः उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य की प्रक्रिया से सम्बंधित है। श्वेताम्बर जैन मान्यता तथा विज्ञान के अनुसार यह प्रक्रिया स्वभाविक है और इसके लिए किसी निमित्त कारण की आवश्कता नहीं है। इसके विपरीत दिगम्बर संप्रदाय द्रव्य परिणमन के लिए काल का अस्तित्व अनिवार्य मानते है।

परमाणु तथा प्रदेश केवल अस्तिकाय द्रव्य के ही होते है। इस दृष्टि से कालाणु की अवधारणा भी तर्क संगत नहीं है। **तत्वार्थ सूत्र, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार आदि ग्रंथो की मूल गाथाओ में कालाणु शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ तथापि दिगम्बर दार्शनिक परंपरा से कालाणु शब्द का प्रयोग कर रहे है।** इसी प्रकार निश्चय काल और व्यवहार काल का भी उल्लेख मूल गाथाओं में नहीं है। सूत्रो में तथा गाथाओ में केवल काल शब्द का प्रयोग हुआ है। **प्रवचनसार (ज्ञेय तत्वाधिकार) गाथा ४७ में कहा है कि**

जब परमाणु मंद गति से आकाश द्रव्य के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में गमन करता है तब उसमें समय की उत्पत्ति होती है अर्थात समय का सम्बंध परमाणु की गति से है न कि द्रव्य लोक द्रव्य से। प्रवचनसार गाथा ४३ में कहा है णत्थि पदसेत्ति कालस्य अर्थात काल द्रव्य के प्रदेश नहीं है। अतः अप्रदेशी कालाणुओं का अस्तित्व कैसे हो सकता है? केवल अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए अप्रदेशी कालाणुओ को एक प्रदेशी कालाणु कहना क्या उचित है?

श्वेताम्बर परम्परा तथा विज्ञान के अनुसार काल का अस्तित्व केवल व्यवहारिक काल के रूप में है। विज्ञान की दृष्टि में काल और अंतरिक्ष Four Dimensional Space Time का क्षेत्र है जिसे भगवान महावीर द्रव्यों का अस्तिकाय रूप मानते है। अर्थात आकाशास्तिकाय में 'काल' का भिन्न द्रव्य के रुप में अस्तित्व नहीं है। आकाश के जिस क्षेत्र में पुद्गल द्रव्य है, उस स्थान पर पुद्गल परिणमन के कारण जीव में 'काल' के भाव जागते है। आचार्य कुंद कुंद स्वंय कहते है-

समओ दु अप्पदेसो पदेसमेत्तस्स दब्वजादस्स
वदिवददो सो वट्टदि पदेसमागासदव्वस्स ॥

-प्रवचनसार शेयतत्वाधिकार गाथा 46

अर्थात् जब परमाणु मंद गति से आकाश द्रव्य के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में गमन करता है तब उसमें समय की उत्पत्ति होती है। इस कथन का सरल शब्दों में यही अर्थ है कि आकाश प्रदेश और काल प्रदेश भिन्न नहीं है। **जब अजीव परमाणु आकाश प्रदेश में गमन करता है तब आकाश प्रदेश की अनुभूति समय रूप में होती है जो परमाणु के स्थान परिवर्तन से हुआ है।**

'काल प्रदेश' को केवल आकाश प्रदेश कहा जा सकता है, कालाणु नहीं।

11. उपसंहार

भगवान महावीर ने कहा कि **'सत्'** को एकान्त दृष्टि से नहीं जाना जा सकता क्योंकि **'सत्'** का स्वरूप द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार बदलता है। द्रव्य की शाश्वतता सत् है। पंचास्तिकाय लोक सत् है। काल की दृष्टि से लोक का न आदि है और न अन्त है। क्षेत्र की दृष्टि से सीमित है और सभी दिशाओं से आकाशास्तिकाय से घिरा है । लोक यथार्थता में जीव-अजीव का समूह है जो उत्पाद-व्यय -ध्रौव्य के कारण अशाश्वत प्रतीत होता है। सभी द्रव्य ' सत्यासत्य और नित्यानित्य स्वभाव वाले है। द्रव्यों का सत्यासत्य स्वभाव ही आधुनिक विज्ञान का 'सापेक्षता का सिद्धांत ' कहलाता है।

सर्वज्ञ देव ने उद्घोष किया जन्म-मृत्यु, उत्पाद-व्यय आदि द्रव्यों में होने वाले परिणमन है और वे स्व-भाव से 'असत्' है। 'असत्' से 'सत्' की ओर अग्रसर होना ही धर्म और मोक्ष का मार्ग है।

आत्मा की तरह आकाश और काल भी अतिन्द्रिय है। वे अरूपी और अमूर्त द्रव्य है। उनमें वर्ण, रस, गंध और स्पर्श नहीं है। महावीर ने अमूर्त, अरूपी जीव को 'जीवास्तिकाय' तथा अतिन्द्रिय आकाश और काल के संयुक्त रूप को आकाशास्तिकाय से सम्बोधित किया। श्वेताम्बर जैन मान्यतानुसार आकाश से भिन्न काल द्रव्य का अस्तित्व नहीं है। दिगम्बर जैन आचार्य काल के स्वतंत्र अस्तित्व का समर्थन करते हैं। वे 'काल' को पुद्गल समान 'परमाणु' रूप और सम्पूर्ण लोक व्यापी मानते है।

क्वांटम फिजिक्स द्वारा श्वेताम्बर काल अवधारणा का समर्थन होता है। Cosmic Womb का कथन आगमों में नहीं हैं परंतु यह कहा गया है कि अलोक बिना लोक का अस्तित्व संभव नही है। वैज्ञानिक मानते है कि लोक की उत्पति Big-Bang से हुई। बीग बैंग के समय 'आकाश प्रदेश' ही गाड प्राटिकल में परिवर्तित हुए और गाडपर्टिकल की सहायता से परमाणु की रचना हुई। वैज्ञानिक यह नहीं जानते कि बीग बैंग के पहले क्या था। भगवान महावीर कहते है बीग बैंग के पहले 'आकाशस्तिकाय' और 'पंचास्तिकाया' था। जीव को पंचास्तिकाय का षट् द्रव्यों के समूह के रूप में अनुभव होता है। यह अनुभव अजीव को नहीं होता। वैज्ञानिक अब इसे 'बायोसेन्ट्रिजम' का सिद्धान्त अथवा Universal Consciousness के रूप में स्वीकार करते है।

12. संदर्भ सूचि

1. नन्दिसूत्र, 58
2. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 2
3. पंचाास्तिकाय, गाथा 10
4. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 21
5. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, गाथा 18
6. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, गाथा 4
7. जैन दर्शन, स्वरूप और विश्लेषण पृष्ठ न. 40, देवेन्द्र गुनि शास्त्री, श्री तारक जैन ग्रन्थालय उदयपुर, 1975
8. पंचाास्तिकाय, गाथा 22
9. द्रव्य संग्रह, गाथा 27
10. जैन दर्शन, मनन और मिंमासा, आचार्य महाप्रज्ञ
11. उत्तराध्यायन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 49

12. महावीर मेरी दृष्टि में, भगवान रजनीश (ओशो)
13. जसरथचरिउ 4.12.1, महाकवी पुष्पदेव
14. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 23, सूत्र 31
15. प्रवचनसार (ज्ञान तत्व प्रज्ञापनाधिकार) गाथा 21
16. प्रवचनसार (ज्ञान तत्व प्रज्ञापनाधिकार) गाथा 41
17. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, गाथा 29
18. भगवती सूत्र 13/4/481
19. व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र, शतक 7 उद्देशक 10
20. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 3
21. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 5
22. व्याख्याप्रज्ञत्पि सूत्र, शतक 14, उद्देशक 4, सूत्र 512
23. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 30
24. भगवती सूत्र 7/2/23
25. जीवाभीगम् सूत्र, प्रतिपत्ति 3, उद्देशक 1, सूत्र 77
26. स्थानांग सूत्र 10-1-14
27. तत्वार्थ सूत्र, द्वितीय अध्याय, सूत्र 13
28. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 7
29. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 8
30. स्थानांग सूत्र, 4/1/251
31. व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र, 7/10/305
32. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 1 और 8
33. पंचाास्तिकाय गाथा 102
34. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 14
35. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 81

36. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 89, 103, 114 और 123
37. प्रवचनसार (ज्ञेयतत्वाधिकार) गाथा 6
38. पंचास्तिकाय, गाथा 5
39. पंचास्तिकाय, गाथा 22
40. स्थानांग सूत्र, 5/170.174
41. पंचास्तिकाय, गाथा 4 और 5
42. प्रज्ञापना पद, सूत्र 3
43. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 7
44. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 7
45. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5, सूत्र 22 और 39
46. प्रवचनसार (ज्ञेयतत्वाधिकार), गाथा 46

अध्याय 5

विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में धार्मास्तिकाय तथा अधार्मास्तिकाय द्रव्य

Jain Concepts of Potential Field, Atomic & Wave Motion

विषय अनुक्रमणिका

विषय	पेज न.
जीव और परमाणु गति–कविता	135
Abstract	137
1. प्रस्तावना	141
2. जैन दर्शन में गति की अवधारणा (Concept of Motion in Jainism)	144
3. आगमों में धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्य	146
4. दर्शणाचार्यों की दृष्टि से धर्मास्तिकाय व अधर्मास्तिकाय द्रव्य	152
5. गति और स्थिति की वैज्ञानिक अवधारणा	157
6. धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायः एक विश्लेषण	161
7. उपसंहार	165
8. संदर्भ सूची	168

जीव और परमाणु गति

जैनागम देते है परिचय जीव और परमाणु बल का
'मौत के बाद कौन गति करता' विषय था वीर के चितंत का

जीव भवांतर में जब जाता, कौन खींचता है उसको?
*आत्म प्रदेशों में किस रुप में रहती **Force** समझते हों?*

***Physics** के गति नियमों को हम जब जैन शास्त्रों में पातें है*
वैज्ञानिक के रुप में उस पल महावीर मन भाते हैं।

ABSTRACT

Atomic Motion in free and bound states as well as the motion of non-material consciousness (Atman) are most important issues as far as 'Creation' and 'Nirvana' are concerned. Jain Agams address these issues and give details of laws, governing the motions of particles, sub-particles and non-physical identities like Atman. Other religions have seldom addressed this important issue concerning the dynamics of atomic and field motions.

According to Jain Agams, motion in space means motion under the influence of space gravitation, similar to what Einstein called as Theory of General Relativity'. Mahavir like Einstein said Akashastikaya is an infinite Vaccum Gravity Field. Atman free atoms and Atman with material Karman Sharira move under the influence of the Space Potential what Mahavir called as Dharmastikaya.

'The motion of Atman under the influence of Dharmastikaya is always vertically upward and in a straight line. The liberated soul acquires velocity by the reaction of the dying body and reaches the end of Loka in one Samaya, which is the smallest unit of time. On the other hand the motion of Atman with Karman Sharira is initially in straight line but curve subsequently and return back to the place or incarnation or rebirth. 'The time duration may be as large as four Samayas', says Mahavira. The space potential which brings the liberated

Soul to rest or changes its direction of motion is called Adharmastikaya. Readers may please note that Einstain described the motion of Light Rays in the Cosmic Space in similar fashion. The light rays curve giving ‘Curved Look’ to the ‘Space-Time’ cosmos or Akashastikaya. **Dynamics of ‘Space-Time’ curvature and Bending of Light under the influence of space gravitation is known as ‘Einstein’s General Theory of Relativity’. Mahavir calls the accelerating space potential as Dharmastikaya and retarding potential as AdarmastiKaya. The induced motion is Dharma and motionless state is Adharma.**

"The motion of atoms like the motion of Atman also starts in straight line and follows the same course as above says Mahavira. But unlike Atman, atoms and particles of other Vargana (Group) have natural inherent motion and the space gravitation acts as a retarding force. Mahavir calls this retarding space potential as Adharmastikaya and the resulting state as ‘Adharm’

Contrary to the above Agam concepts, learned Jain Scholars believe that Dharmastikaya is all pervading substance which acts like medium of motion for Atman and Pudgal Paramanu. Their most wildest imagination is existence of all pervading, motion-retarding medium called ‘Adharmastikaya’ which is supposed to bring all moving bodies to rest. These learned scholars do not distinguish between Dharmastikaya and Dharm Draya. Similarly they do not make distinction between Adharmastikaya and Adharm Draya.

Jain Agams clearly mention that the universe (Lok) is Panchastikaya in nature which means it is made of five Astikayas, namely Akashastikaya, Dharmastikaya, Adharmastikaya, Jivastikaya and Pudgalastikaya. In scientific terms 'Astikaya' means Quantum Field. The five distinct quantum fields are perceived by the human (animal) consciousness as five distinct elements –Empty Space (Akash), Motion (Dharma), Retardation (Adharma), Living Beings (Jiva) and Non living Objects (Pudgala). Readers may please note again that Jain Agams like modern Science, do not mention 'Time' (Kaal) as a fundamental constituent of the universe. Time is human (animal) perception of change which is not a constituent of the universe. **Thus according to old jain cannons, 'Gati Lakshna' or State of Motion is 'Dharma' and 'Sthiti Lakshana' or 'State of Rest' is Adharma and their perception is 'Kaal' or Time.**

Contrary to Agam Concepts, the Jain scholars believe that the Cosmic Space is divided in to Lok and Alok because of Dharm and Adharm Drayas. Division of Cosmic Space appears irrational. The Jain scholars further believe that 'Matter' and Jiva do not enter Aloka because of lack of Dharma and Adharma in Aloka. **This also defies the Agams which state that Dharm and Adharm do not exist in Aloka because Pudgal and Jiva do not exist in Aloka which simply means Dharma and Adharma are properties associated with Pudgal and Jiv. This Agam concept is similar to the modern scientific thinking that 'motion and time' are associated with matter existing in the universe.**

The Akash (space) is gravitation field which is influenced by the presence of material bodies resulting in gravitational potential what Mahavir called as Dharmastikaya. Einstein calls it as space-potential which is the reason for space curvature and bending of light rays.

Thus more than twenty five centuries ago, the Jains knew that the motion of particles and massless body like Jiva follow different laws of motion than that of rigid and heavy bodies. They analysed the motion and suggested existence of Potential Fields for motion of non-material bodies and Parmanu. Twenty five hundred years later, Einstein rejected Newton's Laws of motion and suggested new laws similar to Jain concepts for Motion of particles and expanding radiation fields in space.

विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में धार्मास्तिकाय तथा अधार्मास्तिकाय द्रव्य

1. प्रस्तावना

आगमिक मान्यतानुसार अरूपी, अमूर्त, भार रहित आत्मा में स्वयं की गति नहीं है। अतः स्वाभाविक जिज्ञासा होती है कि आत्मा एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमन कैसे करती है? उसका वाहन कौन सा है? मृत्यु के पश्चात आत्मा लोकान्त तक अथवा पुनर्जन्म के स्थान तक कैसे पहुँचती है? क्या उसकी यात्रा में कोई पड़ाव होते हैं अथवा यात्रा पड़ाव– रहित होती है? यात्रा का अधिक से अधिक और कम से कम समय कितना होता है? ये प्रश्न आसान अवश्य हैं परन्तु इनका समाधान बहुत कठिन है। वर्तमान समय में इंजीनियर जानता है कि हिमालय पर्वत जैसी स्थूल वस्तु को एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमन कैसे कराया जा सकता है परन्तु वह यह नहीं जानता कि आत्मा जैसी भारहीन, अरूपी अमूर्त वस्तु का स्थान परिवर्तन कैसे किया जाए।

व्यावहारिक दृष्टि से आत्मा के समान परमाणु भी अरूपी अमूर्त और भाररहित द्रव्य है। संसार–निर्माण कार्य–हेतु परमाणु भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमन करता है। अतः पूर्व अनुमान के अनुसार परमाणु के गमना–गमन के लिए गति कैसे और कहाँ से मिलती है? गति के पश्चात क्या परमाणु विश्राम भी करता है? यदि विश्राम करता है तो उसे पुनः गति कैसे प्राप्त होती है?

विश्व के किसी भी धर्म शास्त्र में जीव और परमाणु–गति की चर्चा नही हैं परन्तु जैन आगमों में इसका संपूर्ण विज्ञान

दिया गया है इनकी गति वर्तमान समय में रिलेटिविस्टिक मैक्यानिक्स (Relativistic Mechanics) और क्वांटम मैकेनिक्स (Quantum Mechanics) के नाम से परिचित गति विज्ञान के नियमानुसार होती है। स्थूल पदार्थों की गति न्यूटन के गति नियमों के अनुसार होती है परन्तु सूक्ष्म अरूपी अमूर्त परमाणु तथा तरंगो का गति विज्ञान इससे भिन्न है। पदार्थो की गति के लिए बाहरी अथवा आन्तरिक बल (Force) की आवश्यकता होती है। परमाणु और जीव पर बाहरी बल भी नहीं लगाया जा सकता। अतः परमाणु और जीव को गति के लिए बल कहां से और कैसे मिलता है, यह मूल प्रश्न है? सर्वज्ञ भगवान महावीर ने इसका समाधान वर्तमान समय के वैज्ञानिक की भांति दिया। सर्वज्ञ देव ने कहा जीव और पुद्‌गल की गति के लिए धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्यों की आवश्यकता है। **जिस प्रकार जल प्रवाह के लिए ढलान** (Slope) **की आवश्यकता है, इलेक्ट्रिक करंट प्रवाह के लिए वोलटेज** (Electric Potential) **आवश्यक है, उसी प्रकार जीव और परमाणु की गति के लिए धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय रूपी पोटेंशियल फील्ड (अस्तिकाय क्षेत्र) की आवश्यकता है। इन पोटेंशियल फील्ड के कारण जो गति और स्थिति उत्पन्न होती है उन्हे आगमों में क्रमशः धर्म द्रव्य और अधर्म द्रव्य कहा है।**

परमाणु में जैन अवधारणा अनुसार रूक्ष और स्निग्ध स्पर्श होते हैं जो परमाणु के लिए पोटेंशियल फील्ड का कार्य करते हैं अर्थात परमाणु के लिए वह धर्मास्तिकाय का क्षेत्र है, जिससे परमाणु निरन्तर गति करता रहता है। जीव में कोई स्पर्श नही है अतः जीव में स्वयं की गति नहीं है। जीव को परमाणु से गति मिलती है। परमाणु द्वारा निर्मित कार्मण शरीर जीव का वाहन है अर्थात कार्मण शरीर से निर्मित पोटेन्शियल फील्ड से जीव गतिमान होता है। कार्मण शरीर के अभाव के कारण सिद्धों

में गति नही होती। संक्षेप में कहा जाएगा कि जिस प्रकार मैग्नेट का मैग्नेटिक फील्ड होता है, उसी प्रकार परमाणु का पोटेंशियल फील्ड होता है जिसे आगमिक भाषा में 'धर्मास्तिकाय' कहा है। परमाणु 'पुद्गलास्तिकाय' रूप में लोक व्यापी है, अतः धर्मास्तिकाय भी लोक व्यापी है। परमाणु के जड़त्व के कारण उसमें गति विरोधक प्रवृत्ति जागती है जिसे आगमिक भाषा में अधर्मास्तिकाय कहा है।

आगमोत्तर काल के आचार्यों ने धर्मास्तिकाय को 'गति सहायक' और अधर्मास्तिकाय को 'स्थिति सहायक' द्रव्य कहा है। उनकी मान्यता है कि जिस प्रकार मछली स्वयं तैर सकती है और जल तैरने में सहायक होता है, उसी प्रकार जीव और पुद्गल में स्वयं गति करने की क्षमता होने पर भी गति के लिए धर्म द्रव्य सहायक होता है। **वर्तमान समय में जैन दार्शनिक धर्मास्तिकाय को मीडीयम ऑफ मोशन** (Medium of Motion) **तथा अधर्मास्तिकाय को मीडियम ऑफ रेस्ट** (Medium of Rest) **कहते हैं जो मिथ्यात्व है, क्योंकि मोशन के लिए मीडियम नही चाहिए, वैक्यूम में भी किसी भी पदार्थ में मोशन हो सकता है। मीडियम केवल मोशन के प्रोपेगेशन (प्रसारण) के लिए चाहिए।**

जैन श्रमणों को 'गति' और 'गति विज्ञान' का गहरा ज्ञान था। वे अरूपी, अमूर्त्त द्रव्य की गति और रूपी, मूर्त्त द्रव्य की गति का भेद जानते थे। जीव और पुद्गल संपूर्ण लोकाकाश में गमनागमन कर सकते हैं परन्तु मध्य लोक से ऊर्ध्व लोक में प्रवेश करने के लिए गति इतनी तीव्र होनी चाहिए कि जीव अथवा परमाणु एक समय में सात रज्जु की दूरी पार कर सके। विज्ञान में इस प्रकार की गति को पलायन गति (Escape Velocity) कहा जाता है जो ग्यारह किलोमीटर प्रति सैकंड से अधिक होती है।

इस अध्याय में धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय तथा धर्म, अधर्म द्रव्यों का विश्लेषण विज्ञान के संदर्भ में प्रस्तुत है।

2. जैन दर्शन में गति की अवधारणा (Concept of Motion in Jainism)

जैन दर्शन में गति (State of Motion) और थ्स्थति (State of Rest) का वर्णन 'पुनर्जन्म' और 'मुक्ति' के संदर्भ मे किया गया है। स्थूल शरीर त्यागने के उपरांत आत्मा अपने सूक्ष्म शरीर सहित पुनर्जन्म के स्थान तक गमन करता है। यह गमन प्रारंभ में ऋजुगति से और तत्पश्चात वक्रगति से होता है। **तत्वार्थ सूत्र**[1] के अनुसार पुनर्जन्म के लिए आत्मा तेजस् और कार्मण काययोग के साथ गमन करता है जिसे विग्रह गति कहते हैं। संसारी जीव कर्म पुद्‌गलों के कारण सदैव 'वक्र' गमन करता है। **प्रज्ञापनापद** में भी कहा गया है- **'कप्पा सरीर कायपयोगे'** अर्थात विग्रह गति में कार्मण शरीर का उपयोग होता है। यह गति वक्र, सरल, चक्राकार हर प्रकार की हो सकती है।

तत्वार्थ सूत्र २/२६ में उल्लेख है **'अनुश्रेणि गतिः'** अर्थात् जीव और पुद्‌गल का गमन श्रेणी के अनुसार होता है। श्रेणी का अर्थ है जीव या पुद्‌गल आकाश के जिस प्रदेश पर स्थित है, वहाँ से गति सरल रेखा में सर्व दिशाओं में होती है, परंतु पुद्‌गल के कारण वह गति वक्र हो जाती है। पुद्‌गल और मुक्त आत्मा की गति सदैव सरल और उर्ध्व दिशा में ही होती है। इसे अविग्रह गति कहते हैं। मुक्त आत्मा एक समय में सीधा सात रज्जु गमन कर सिद्ध क्षेत्र में पहुंच जाता है[2]। वक्रता रहित अथवा मोड़ रहित जीव की गति 'एक समय की होती है[3]। **'एक समयाऽविग्रह'।** संसारी जीव की गति अधिक से अधिक चार समय की होती है[4] और उसमें मोड़ अथवा वक्रता आती है।

गौतम स्वामी[5] ने भगवान महावीर से प्रश्न किया – ''भंते, परमाणु और पुद्गलों की गति अनुश्रेणी (सीधी) होती है अथवा विश्रेणी (वक्र)? ''भगवान ने उत्तर दिया, ''गौतम! उनकी गति अनुश्रेणी ही होती है, विश्रेणी नहीं। ''पुनः प्रश्न पूछा गया कि ''दो प्रदेश वाले पुद्गल स्कंध, अनंत प्रदेश वाले पुद्गल स्कंध, नारकी, वैमानिक देव आदि की गति अनुश्रेणी में होती है अथवा विश्रेणी में? ''**भगवान ने उत्तर दिया कि जीव और पुद्गल सभी की गति अनुश्रेणी मे होती है। विज्ञान का भी यही सिद्धान्त है कि गति का प्रारंभ सदा सरल दिशा में अर्थात अणुश्रेणी में ही होता है। तत्पश्चात् बाह्य कारणों से गति में वक्रता आ सकती है। जैन अवधारणाअनुसार सूक्ष्म, स्थूल, रूपी, अरूपी, मूर्त, अमूर्त सभी प्रकार के पदार्थो की गति का आरंभ अनुश्रेणी अर्थात सरल रेखा में ही होता है जो एक वैज्ञानिक सत्य है। स्थानांग सूत्र**[6] और **व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र**[7] में कहा गया है कि नारकी, देव आदि एक, दो, तीन अथवा चार समय का मोड़ लेकर उत्पन्न होते हैं।

स्थानांग सूत्र[8] में संसारी जीव की दस प्रकार की गति का उल्लेख है- देवगति, नरक गति, मनुष्य गति, तिर्यंच गति, सिद्ध गति, गुरू गति, प्रणोद गति और प्राग्भार गति। जीव गति और पुद्गल गति में भेद है क्योंकि जीव अरूपी अमूर्त द्रव्य है और पुद्गल रूपी, मूर्त्त द्रव्य है। पहला भेद यह है कि जीव की गति पुद्गल गति की अपेक्षा तीव्र होती है अर्थात् जीव अपने गंतव्य स्थान पर पहुंचने में कम समय लेता है। दूसरा भेद यह है कि पुद्गल दो प्रकार का है स्कंध और परमाणु। दोनों की गति भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। पुद्गल द्रव्य में जड़त्व (Inertia) होने के कारण, पदार्थ का भार जैसे-जैसे बढ़ता है, वैसे-वैसे उसका जड़त्व भी बढता जाता है और गति घटती जाती है। इस प्रकार स्कंध की गति

मंद होती है और परमाणु की गति अधिक तीव्र होती है। **भगवती सूत्र**[9] में उल्लेख है कि परमाणु अनेक प्रकार की गति करता है। कभी वह ऋजु गति में गमन करता है, कभी कंपन करता है, कभी वृत्त गति करता है[10] और कभी नहीं करता। परमाणु एक समय में लोकांत तक भी पहुंच सकता है। विज्ञान के अनुसार यह गति की तीव्रता की अंतिम सीमा है। इस गति से केवल प्रकाश ही गमन कर पाता है। अतः यदि परमाणु का अस्तित्व प्रदेश रुप में है तो उपरोक्त आगम कथन भी सत्य है।

दर्शन साहित्यकारों ने गति और स्थिति का वर्णन आगम सूत्रों से भिन्न रूप में किया है। उनके अनुसार द्रव्यों की गति और स्थिति 'कारण-कार्य' के अंतर्गत होती है। जीव और पुद्‌गल स्वयं गति करने में समर्थ हैं परंतु गति का कोई निमित्त कारण भी होना चाहिए। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय क्रमशः गति और स्थिति के निमित्त कारण सहायक द्रव्य हैं, आगम कथन इसके विपरित आगम के अनुसार धर्मास्तिकाय 'गति' लक्षण वाला द्रव्य है और अधर्मास्तिकाय 'स्थित होने' का लक्षण है[11]। आगमिक मान्यता है कि परमाणु की गति के लिये किसी निमित्त कारण की आवश्यकता नहीं है क्योंकि गति परमाणु का स्वभाव है। जीव में स्वाभाविक गति नहीं है परंतु उसकी गति का कारण उसमें बंधा पुद्‌गल द्रव्य है। अर्थात् पुद्‌गल ही जीव गति का निमित्त कारण है। उसे किसी अन्य बाह्य तत्व की सहायता की आवश्यकता नहीं है।

3. आगमों में धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्य

हलन-चलन, गमनागमन, उठना-बैठना, एक स्थान से दूसरे स्थान तक यात्रा करना, विश्राम करना, स्वर और ध्वनि निकालना, श्वासोच्छवास आदि संसार के सभी जीवों की प्रकृति है। अजीव

पदार्थ में भी हलन –चलन, कंपन आदि बाह्य कारणों से होते रहते हैं। जीव-अजीव पदार्थों के इस गति स्वभाव को (लक्षण को) आगमों में धर्मास्तिकाय कहा गया है। पुद्‌गल परमाणु निरंतर गति करता रहता है। परमाणु के रुक्ष और स्निग्ध स्पर्श धर्मास्तिकाय का कार्य करते है। आत्मा में स्वयं की गति नहीं है, परन्तु पुद्‌गल की सहायता से वह भी भ्रमण करता है। आत्मा में होने वाले संकोच विचार, आस्रव, संवर, निर्जरा आदि क्रिया पुद्‌गल की सहायता से होती है। सभी पदार्थ कभी गति करते हैं और कभी विश्राम करते हैं।

चलना और ठहरना सभी पदार्थों के लक्षण हैं, जो पदार्थों की अस्थिरता और परिवर्तन को दर्शाते हैं। **भगवती सूत्र** में कहा गया है कि **'अथिरे पलोट्टई, थिरे ना पलोट्टई'** अर्थात् जो अस्थिर है, उसमें परिवर्तन होते हैं और जो स्थिर है उसमें परिवर्तन नही होते। **धर्मास्तिकाय, अस्थिरता का लक्षण है और अधर्मास्तिकाय स्थिरता का लक्षण है। धर्म और अधर्म क्रमशः अस्थिर और स्थिरता की अवस्था है। लोक में 'सिद्ध' के अतिरिक्त सभी जीव-अजीव अस्थिर हैं। जो अस्थिर हैं वे गति करते हैं, गति के पश्चात विश्राम की प्रवृत्ति जागृत होती है। आगमों में गति प्रवृत्ति को धर्मास्तिकाय और स्थिति अथवा विश्राम करने की प्रवृति को अधर्मास्तिकाय कहा है। विज्ञान की भाषा में धर्म द्रव्य गति अवस्था है अर्थात् स्टेट आफ मोशन (** State of Motion) **हैं और अधर्म द्रव्य स्थिति अवस्था अर्थात स्टेट ऑफ रेस्ट (** State of Rest) **है। धर्मास्तिकाय और अर्धमास्तिकाय क्रमशः कायनेटीक एनर्जी फील्ड (** Kinetic Energy Field) **और पोटेनश्यिल एनर्जी फील्ड (** Potential Energy Field) **हैं।**

उत्तराध्ययन सूत्र[11] में कहा है –

'गई लक्खणों उधम्मो, अहम्मो ठाण लक्खणों।'

अर्थात् धर्म का लक्षण गति है और अधर्म का लक्षण स्थान ग्रहण करना है।

व्याव्या प्रज्ञाप्ति सूत्र, शतक 13 उद्देश्य, सूत्र 48 में भी कहा है–

गई लक्खणो णं घ्मात्थिकाए।
ठाण लक्खणे णं अहम्मात्थिकाए।।

अर्थात धर्मास्तिकाय गति लक्षण वाला द्रव्य है और अधर्मास्तिकाय स्थिति लक्षण वाला द्रव्य है।

स्थानांग सूत्र[12] के अनुसार

धर्मास्तिकाय गुणाओ गमण गुणे।
अधर्मास्तिकाय गुणाओ ठाण गुणे।।

अर्थात् धर्मास्तिकाय गमन गुणों वाला द्रव्य है और अधर्मास्तिकाय अवस्थान गुणों वाला द्रव्य है।

गौतम स्वामी ने भगवान महावीर से प्रश्न किया[13] 'भगवन् ! धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय से जीवों को क्या लाभ हैं? 'भगवान ने समाधान हेतु कहा, **''गमन् आगमन, बोलना, उन्मेष, मानसिक, वाचिक और कायिक आदि सभी चल भाव धर्मास्तिकाय से होते है।** इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रति भगवान महावीर कहते हैं,–''अधर्मास्तिकाय नहीं होता, तो कौन खड़ा रहता? कौन बैठता? कैसे सोते? मन को कैसे एकाग्र करते?''

स्थानांग सूत्र में कहा है– द्रव्य की अपेक्षा से धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय द्रव्य एक-एक हैं। क्षेत्र की अपेक्षा से लोक परिमाण असंख्यात् प्रदेशी हैं। काल की अपेक्षा से दोनों द्रव्य शाश्वत हैं। भाव की अपेक्षा से दोनों द्रव्य अरूपी और जड़ हैं। गुण की

अपेक्षा से धर्म द्रव्य गति लक्षण वाला है और अधर्म द्रव्य स्थिति लक्षण वाला है। **उत्तराध्ययन सूत्र**[14] में कहा है कि धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के देश और प्रदेश होते हैं जिसका अर्थ है कि यद्यपि ये द्रव्य लोकव्यापी हैं तथापि उनके प्रभाव क्षेत्र (देश) है। स्थानांग सूत्र[15] तथा तत्वार्थ सूत्र[16] में धर्म तथा अधर्म द्रव्यों को असंख्यात प्रदेशी कहा है। आचार्य देवेन्द्र मुनि के अनुसार–

द्रव्य की दृष्टि से– दोनों अखण्ड और शाश्वत द्रव्य हैं।

क्षेत्र की दृष्टि से– दोनों लोकव्यापी हैं, असंख्यात प्रदेशी हैं।

काल की दृष्टि से– अनंत, अनादि, शाश्वत हैं।

भाव की दृष्टि से– अमूर्त, अभौतिक हैं।

तत्वार्थ सूत्र[17] के अनुसार– **'गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्मयोरूपकार'** अर्थात् धर्मास्तिकाय का उपकार गति है और अधर्मास्तिकाय का उपकार स्थिति है। 'उपकार' का अर्थ 'कार्यशक्ति' अथवा कार्यक्षमता होता है सहायक नहीं। **पंचास्तिकाय**[18] के अनुसार धर्म पांच प्रकार के रस से रहित है, दो प्रकार के गंध और आठ प्रकार के स्पर्शों से रहित है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय क्षेत्र में द्रव्यों में गति विरोधक भाव जागते हैं, जिनकी प्रतीति गति और स्थिति के रूप में होती है। **नियमसार** गाथा 30 में भी यही भाव है–

गमणणिमित्तं धम्ममधम्मं ठिदी जीवपुग्गलाणं च।
अवगाहणं आयासं जीवादी सव्व दव्वाणं॥

जो जीव और पुदग्ल के गमन का निमित्त है, वह धर्म है। जो जीव और पुद्‌गलों की स्थिति का निम्मित्त है, वह अधर्म है। जो जिवादी द्रव्यों के अवगाहन का निमित्त है, वह आकाश है।

'निमित्त' अथवा 'कारण' शब्द से-कार्य का बोध होता है, सहायक का नहीं। इस गाथा का संदेश है कि जिस प्रकार आकाश का अवगाहन गुण उसका गुरुत्वाकर्षण है जो आकाशस्तिकाय के कारण है, उसी प्रकार धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय उदासीन निष्क्रिय द्रव्य नही हैं अपितु क्रमशः गति प्रदान करने वाला और गति रोधक तत्व है। विज्ञान में इन्हे Force और Resistance कहा जाएगा। **पंचास्तीकाय** गाथा 84 में कहा है-

आदिकिरियाजुत्ताणं कारणभूदं सयमकज्जं

अर्थात गमन क्रियायुक्त धर्मास्तिकाय गति का कारण है, स्वयं क्रिया नही है। इसका सरल शब्दों में अर्थ यह है कि धर्मास्तिकाय स्वयं गति (धर्म) नही है। इसका अर्थ यह भी है कि धर्मास्तिकाय गति सहायक द्रव्य नही है अपितु गति का कारण है। धर्मास्तिकाय के क्षेत्र में द्रव्यों में गति उत्पन्न होती है और द्रव्य स्थान परिवर्तन करते हैं। **गाथा ८५ में मछली के द्रष्टान्त द्वारा कहा है कि जिस प्रकार मछली जल में अनुग्रहित होती है अर्थात तैरती है उसी प्रकार पदार्थ धर्मास्तिकाय के क्षेत्र में गमन करते हैं।**

जिस प्रकार जीव में चेतना का कारण 'जीवास्तिकाय' है उसी प्रकार शरीर में गति का कारण धर्मास्तिकाय है जो शरीर की आंतरिक अथवा बाहरी शक्ति (बल) है। जड़त्व का कारण अधर्मास्तिकाय है। पाँचों अस्तिकाय लोकव्यापी हैं। अतः इनके प्रभाव से कोई बच नहीं सकता। इन चारों अरूपी द्रव्यों के सूक्ष्मतम खण्ड 'प्रदेश' हैं, जिन्हें द्रव्यों से विभक्त नहीं किया जा सकता। विज्ञान की भाषा में विभिन्न आगमिक शब्दों का अर्थ इस प्रकार है-

अस्तिकाय द्रव्य	Quantum Field
आकाशास्तिकाय	Vaccum Quantum Field
आकाश	Space Gravitation
धर्मास्तिकाय	Accelerating Field Potential
धर्म	State of Motion / Velocity
अधर्मास्तिकाय	Potential Energy Field
अधर्म	State of Rest
पुद्गलस्तिकाय	Material Quantum Field
पुद्गल	Material Quanta
जीवास्तिकाय	Electro Magnetic Energy
जीव	Life Quanta / Consciousness

विज्ञान की भाषा में धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय फील्ड पोटेंशियल हैं जिसमें प्रवेश करने पर द्रव्यों में गति और स्थिति की अवस्था उत्पन्न होती है। जिस प्रकार ढलान पर जल सदा ऊपर से नीचे की ओर बहता है और ढलान की समाप्ति पर जल प्रवाह स्थिर हो जाता है उसी प्रकार जीव तथा पुद्गल की गति **की दिशा धर्मास्तिकाय अर्थात्** Field Potential **के द्वारा निर्धारित होती है।** ढलान में नीचे के स्थान की अपेक्षा ऊपर के स्थान पर Potentialअधिक होता है। प्रवाह सदैव उच्च पोटेंशियल से निम्न पोटेंशियल की दिशा में होता है। अतः जल ऊपर से नीचे बहता है। जैसे बिजली का करंट High Voltage से Low Voltage की दिशा में प्रवाहित होता है। Electric Potential की इकाई Volt है। Potential की दिशा बदलने से गति की दिशा भी बदली जा सकती है,जैसे वाटर पंप द्वारा जल को नीचे से ऊपर की ओर प्रवाहित कर सकते हैं।

4. दर्शणाचार्यों की दृष्टि से धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्य

आगमोत्तर जैन साहित्य में धर्मास्तिकाय तथा धर्म और अधर्मास्तिकाय तथा अधर्म द्रव्यों की परिभाषा आगमिक परिभाषा से भिन्न है। **दार्शनिकों की दृष्टि से धर्मास्तिकाय और धर्म में कोई भेद नही है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एवं अधर्म एक ही द्रव्य है। उनके अनुसार धर्म और अधर्म लोकव्यापी आगंतुक, निष्क्रिय निमित्त कारण क्रमशः गति** और स्थिति सहायक द्रव्य हैं। जिस प्रकार मछली को तैरने के लिए जल आवश्यक है उसी प्रकार जीव और अजीव पदार्थों को गमनागमन के लिए धर्म और अधर्म द्रव्य की आवश्यकता है। **जीव और अजीव गति कर सकते हैं परंतु गति के लिए उन्हें 'धर्म-द्रव्य' की बैसाखी चाहिए।**

आगम के अनुसार क्रिया की अभिव्यक्ति गति और स्थिति के द्वारा होती है। जीव और पुद्गल का कार्य क्रियात्मक है अतः गति और स्थिति पदाथों की स्वाभाविक प्रवृत्ति है परंतु आगमोत्तर जैनाचार्यों का विचार है कि गति का कोई निमित्त कारण चाहिए अतः धर्म और अधर्म निमित्त कारण सहायक द्रव्य हैं। जैन विश्व भारती लाडनूं द्वारा प्रकाशित **'जीव-अजीव'** नामक पुस्तक के 2004 के संस्करण मे आचार्य महाप्रज्ञ धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय की परिभाषा इस प्रकार करते हैं-

धर्मास्तिकाय- जीव और पुद्गल की गति और हलन-चलन में जो उदासीन सहायक होता है, वह धर्मास्तिकाय है, जैसे मछली की गति में पानी सहायक होता है।

अधर्मास्तिकाय- जीव और पुद्गल के स्थिर होने में जो उदासीन सहायक होता है, वह अधर्मास्तिकाय है।

आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार, 'जीव और पुद्गल में गति की क्षमता है। गति के उपादान कारण तो ये दोनों स्वयं हैं। निमित्त कारण किसे मानें? तब ऐसे द्रव्यों की आवश्यकता होती है जो गति और स्थिति में सहायक बनें। इस प्रकार धर्म और अधर्म को निमित्त कारण स्वीकार कर लिया गया है।' आगमोत्तरकालीन लगभग सभी जैन आचार्यों ने धर्म और अधर्म द्रव्य को उदासीन सहायक द्रव्यों के रूप में प्रस्तुत किया है। जिज्ञासा सहज होती है कि यदि जीव और पुद्गल स्वयं गति करने में सक्षम हैं तो इसके लिये निमित्त कारण क्यों चाहिए?

आचार्य देवेन्द्र मुनि[19] कहते हैं कि- 'धर्म एक द्रव्य है। वह समस्त लोक में व्याप्त है। वह शाश्वत है। वर्ण, गंध, रस और स्पर्शरहित है। वह जीव और पुद्गल की गति में सहायक है। यहां तक कि जीवों का आगमन, गमन, वार्तालाप, उन्मेष, मानसिक, वाचिक और कायिक आदि जितनी भी स्पंदनात्मक प्रवृत्तियां हैं, वे धर्मास्तिकाय से होती हैं। उनके असंख्यागात प्रदेश हैं। वह नित्य और अनित्य है, व्यवस्थित और अरूपी है। वह जीव आदि के समान पृथक रूप में नहीं रहता अपितु अखण्ड द्रव्य के रूप में रहता है। संपूर्ण लोक में ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहां धर्म द्रव्य ना हो। धर्मास्तिकाय गति क्रिया में सहायक है। जिस प्रकार मछली स्वयं तैरती है, फिर भी तैरने में पानी उसका सहायक है, उसी प्रकार जीव और पुद्गल जब गति करता है तो धर्मास्तिकाय या धर्मद्रव्य गति में सहायता करता है। गति और स्थिति का उपादान कारण जीव और पुद्गल हैं, परंतु निमित्त कारण धर्म और अधर्म हैं।'

आचार्य कुंद-कुंद का भी ऐसा ही अभिमत है। **पंचास्तिकाय गाथा -88** में कहा गया है कि-

'ण य गच्छदि धम्मत्थी गमणं ण करेदि अण्णदवियस्स।
हवदि गदी सप्पसरो जीवाणं पुग्गलाणं च।।

अर्थात् धर्मास्तिकाय द्रव्य स्वयं गतिशील नहीं है। वह दूसरे द्रव्यों को गति प्रदान नहीं करता। वह केवल उदासीन रहकर जीव पुद्‌गल की गति का प्रवर्तक होता है। इससे पहले गाथा 84 में कहा है–

अगुरुलघुगेहिं सया नेहिं अणतिहिं परिणदं णिव्वं।
गदिकिरियाजुन्ताणं कारणभूदं सयमकज्जं।।

अर्थात यह धर्मास्तिकाय अपने अनन्त गुणों के द्वारा निरंतर परिगमन करता रहता है, स्वयं गति क्रिया से युक्त जीव और पुद्‌गल की गति क्रिया का कारण है और आकार्य रुप है।

पंचास्तिकाय गाथा ८४ और **गाथा ८८** में विरोधाभास है। गाथा 84 के अनुसार धर्मास्तिकाय, जीव और पुद्‌गल की गति क्रिया का कारण है। गाथा 88 के अनुसार धर्मास्तिकाय न तो स्वयं गति करता है और न तो गति का प्रेरक है। वह जीव और पुद्‌गल की गति का उदासीन प्रवर्तक है। एक निष्क्रिय, उदासीन, अप्रेरक द्रव्य गति का कारण और प्रवर्तक कैसे बनता है? दिगम्बर आचार्यो ने 'कारणभूदम' शब्द का अर्थ सहायक लिया है। केवल **'षट्‌खण्डागम'** में आया है कि धर्म–अधर्म गमनागमन है, निमित्त अथवा सहायक कारण नहीं है। हमारे विचार से पंचास्तिकाय गाथा 84 की धर्मास्तिकाय की परिभाषा और उसके कार्य, विज्ञान सम्मत है। गाथा 88 का शब्दार्थ गाथा 84 के अनुरुप होना चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है मानो श्वेताम्बर आचार्यों ने भी लक्खण (लक्षण) शब्द का अर्थ उदासीन सहायक' के रूप में लिया है और आज तक सहायक शब्द की ही परंपरा चल रही है। सिद्धसेन दिवाकर धर्म–अधर्म को स्वतंत्र द्रव्य नहीं मानते अपितु उन्हें द्रव्य–पर्याय मानते हैं। **द्रव्य–संग्रह, द्रव्यानुयोग और तर्क संग्रह**

तथा अन्य आधुनिक जैन साहित्य में धर्म-अधर्म, द्रव्य के प्रति ऐसे ही विचार प्रतिपादित हुए हैं।

आगमिक मान्यता है कि परमाणु की स्वयं की गति है। वह ऋजु, वक्र, वृत्त, किसी भी प्रकार की गति कर सकता है और इसके लिए उसे किसी अन्य बल की आवश्यकता नहीं है। परमाणु यदि अपने मार्ग में किसी से न टकराए, तो वह लोकांत तक पहुँच सकता है। टकराने से परमाणु प्रतिहत होता है और उसकी गति प्रकाश, ध्वनि, ऊष्णता, उद्योत, आतप, अंधकार आदि में परिवर्तित हो जाती है। यदि परमाणु जीव के साथ बंध जाता है तो जीव लोकाकाश में गमन करता हुआ देव गति, नरक गति, मनुष्य गति आदि को प्राप्त होता है। इस प्रकार जीव की गति का बाह्य कारण पुद्गल परमाणु ही है। परमाणु जीव से जैसे ही विभक्त होता वैसे ही जीव स्थित हो जाता है। यही उसकी अंतिम गति है।

धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय द्रव्यों के कार्यों के प्रति जैनाचार्यो की मान्यता है कि ये द्रव्य आकाशस्तिकाय के विभाजक हैं। आगमोत्तर जैन आचार्यों के अनुसार धर्म और अधर्म द्रव्य के कारण आकाश लोक और अलोक में विभाजित हुआ है। आचार्य देवेन्द्र मुनि कहते हैं कि 'लोक-अलोक की सीमा निर्धारण करने वाले स्थिर और व्यापक तत्व धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय हैं। ये अखण्ड आकाश को दो भागों में विभाजित करते हैं। ये जहाँ तक हैं, वहां तक लोक और जहां पर इन का अभाव है, वह अलोक है। धर्म और अधर्म के अभाव में गति और स्थिति में सहायता नहीं मिलती, इसीलिए जीव और पुदग्ल लोक में ही हैं, अलोक में नहीं।

आचार्य महाप्रज्ञ[20] का विचार है कि अलोक में जीव और पुद्गल नहीं होते। इसका कारण, वहां धर्म और अधर्म द्रव्यों

का अभाव है। इसीलिए धर्म और अधर्म लोक और अलोक के विभाजक बनते हैं।

आचार्य मलयगिरी भी कहते हैं कि **लोका लोक व्यवस्थानुपणतेः** अर्थात् धर्म और अधर्म के बिना लोक व्यवस्था नहीं हो सकती।

आगमों में इससे भिन्न विचार है। **स्थानांग सूत्र**[21] में कहा गया है कि 'लोकांत' **में पुद्गल स्वभाव से रूक्ष है और वह जीव को गति प्रदान करने की स्थिति में संगठित नहीं हो सकता अतः जीव अलोक में प्रवेश नहीं कर सकता।** यह स्पष्ट है कि पुद्गल नहीं होगा तो धर्म और अधर्म भी नहीं होंगे, क्योंकि धर्म ही गति है और अधर्म ही गति विरोधक प्रवृत्ति है। परंतु दर्शनकालीन आचार्यों ने गति को धर्म से और स्थिति को अधर्म से भिन्न माना है।

लोक सीमा के लिए **स्थानांग सूत्र,** स्थान-10, सूत्र-9 में कहा है-

जाव ताव जीवाण या पोग्गलाण य गति परियाए।
तव ताव लोए, जाव ताव लोए, ताव ताव जीवाण
य पोग्गलाण य गति परियाए एवापोगालोग द्वितिपण्णता।।

स्थानांग सूत्र स्थान -10 सूत्र -9

अर्थात् जहां तक जीव और पुद्गल गमन करते हैं, वहां तक लोक है। इस प्रकार लोक की सीमा जीव और परमाणु के गति और गमनागमन द्वारा निर्धारित होती है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय द्वारा नही होती।

समणी मंगलप्रज्ञा[22] ने अपने शोध-ग्रंथ में लोक-व्यवस्था के नियम दिए हैं जो स्थानांग सूत्र पर आधारित हैं। इस लोक व्यवस्था

में आकाश के विभाजन की बात नहीं है। लोक-अलोक का अस्तित्व आकाश के विभाजन को नहीं दर्शाता। अमूर्त धर्म-अधर्म द्रव्य भी आकाश के विभाजक नही बन सकते।

आगमोनुसार आकाश एक अनंत, असीम और अखण्ड द्रव्य है। अतः आकाश का विभाजन असंभव है। **आकाश लोक अलोक में विभाजित नहीं है, अपितु विस्तारित है। जो द्रव्य आकाश में अवगहित है, वे द्रव्य आकाश के विभाजक नहीं बन सकते, क्योंकि आकाश के प्रदेश विभक्त नहीं होते।** आकाश का विस्तार लोक के अंदर और बाहर दोनों स्थानों पर है। अनंत आकाश में लोक का स्थान वैसा ही है जैसे आकाश में उड़ते पक्षियों का होता है। **स्थानांग सूत्र के अनुसार लोकांत में पुद्गल रूक्ष है, वे जीव को गति प्रदान नहीं कर सकते। अतः जीव अलोक में प्रवेश नहीं कर सकता। अलोक में पुद्गल नहीं होने से वहां पर धर्म-अधर्म भी नहीं हैं। इस प्रकार धर्म-अधर्म द्रव्य न तो आकाश के विभाजक हैं और न ही लोक को आकार प्रदान कर सकते हैं।**

5. गति और स्थिति की वैज्ञानिक अवधारणा

लगभग चार सौ वर्ष पूर्व न्यूटन और गैलीलियों ने आधुनिक गति विज्ञान की नींव रखी थी जो पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण क्षेत्र में स्थूल पदार्थो की गति से संबंधित है। उस समय तक परमाणु का अविष्कार नहीं हुआ था। न्यूटन के अनुसार पदार्थ की गति अथवा स्थिति में परिवर्तन बाह्य अथवा आंतरिक बल द्वारा ही हो सकता है। जड़ स्वभाव के कारण पदार्थ बाहरी या आंतरिक बल (Action) का विरोध करता है जिसे (Reaction) प्रतिक्रिया कहा जाता है। न्यूटन के अनुसार क्रिया और प्रतिक्रिया (Action and Reaction) का बल समान परंतु विपरीत दिशा में होता है। न्यूटन द्वारा प्रतिपादित

इन नियमों को (Newton's Laws of Motion) कहा जाता है। न्यूटन के शब्दो में धर्म एक्शन है और अधर्म रिएक्शन है। **दैनिक जीवन में पदार्थों की गति न्यूटन के गति नियमों के अनुसार ही होती है। न्यूटन के गति विज्ञान में धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का कोई स्थान नही है। ऊर्जा, प्रकाश, जीव, सूक्ष्म द्रव्यकण, परमाणु, इलैक्ट्रान, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि अरुपी, अमूर्त और भारहीन पदाथों पर स्थूल पदार्थों की तरह बाहरी फोर्स नहीं लगाई जा सकती, फोर्स के स्थान पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति जैसा क्षेत्र चाहिए। ऐसे ही क्षेत्र को आगमों में धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय कहा है।** इन अरुपी अमूर्त पदार्थों की गति, क्वांटम मैकानिक्स (Quantum Mechanics) और रिलेटिवीस्टिक मैकानिक्स (Relativistic Mechanics) के अनुसार होती है, जिसका आविष्कार ईसा की बीसवीं सदी के आरम्भ में आइनस्टाईन द्वारा किया गया था। इस प्रकार विज्ञान की दृष्टि से स्थूल और सूक्ष्म पदार्थों की गति के नियम भिन्न भिन्न हैं जो इस प्रकार हैं-

1. न्यूटन के गति-नियम जिनके द्वारा स्थूल पदार्थों की गति नियंत्रित होती है।
2. आइनस्टाईन के गति-नियम जो जीव और पुद्गल परमाणु सुक्ष द्रव्यों जैसे के लिए हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से जैन गति विज्ञान, आधुनिक गति विज्ञान से लगभग 2600 वर्ष पुराना है और पूर्ण रूप से मौलिक है। भगवान महावीर के निर्वाण के लगभग दो हजार वर्ष पश्चात् न्यूटन ने आधुनिक गति विज्ञान की नींव रखी थी, जो केवल स्थूल पदार्थों की गति से संबन्धित है। इसके विपरीत जैन गति विज्ञान अरूपी जीव और जड़ परमाणु की गति से संबन्धित है। सन् 1905

के पश्चात् आईन्स्टाईन तथा अन्य वैज्ञानिकों द्वारा रीलेटीविस्टीक मैकेनिक्स के रूप में परमाणु गति विज्ञान का विकास हुआ। इससे सिद्ध होता है कि जैन श्रमणों का गति विज्ञान बहुत उच्च श्रेणी का था।

विज्ञान के अनुसार क्रिया की अभिव्यक्ति गति और स्थिति से होती है। आंतरिक अथवा बाह्य बल (Force) के कारण द्रव्यों में गति का प्रादुर्भाव होता है। **गति के लिए किसी माध्यम की आवश्यकता नहीं है। माध्यम स्वयं गति करता है। गति वैक्यूम में भी हो सकती है। गति के लिए केवल आंतरिक अथवा बाहरी बल चाहिए।** पदार्थ स्वभावतः जड़ है। जड़त्व के कारण पदार्थ में गति विरोधक प्रवृत्ति जागृत होती है जिससे गतिशील पदार्थ कुछ दूरी पर जाकर स्थित हो जाता है। विज्ञान में इसे Law of Inertia अथवा न्यूटन के गति नियम के रूप में जाना जाता है। जड़त्च के कारण गतिमान पदार्थ सदा गति करता रहता है और स्थित पदार्थ स्थित ही रहता है, जब तक उस पर कोई बाह्य बल कार्य न करे। **गति के लिए किसी अन्य माध्यम की अथवा सहायक द्रव्य की आवश्यकता नहीं है। गति का कारण केवल उस पर लग रहा बल है परन्तु गति के विस्तार अथवा प्रसारण के लिए माध्यम आवश्यक हो सकता है।**

जड़त्व के कारण पदार्थों में गति के साथ स्वाभाविक गति विरोधक बल उत्पन्न होता है, जिसे Resistance अथवा Reaction कहते हैं। यह बल गति की विपरीत दिशा में गति बल के बराबर होता है, जिससे गतिमान पदार्थ कुछ समय बाद स्थित हो जाता है। इस स्थिति के लिए भी किसी अन्य सहायक द्रव्य की आवश्यकता नहीं है। दैनिक जीवन में वस्तुओं में होने वाली गति और स्थिति, विज्ञान के इसी सिद्धांत के अनुसार होती है। जो वस्तु

जड़ नहीं है, जैसे आत्मा, प्रकाश, ध्वनि, उष्णता, सभी प्रकार की ऊर्जा परमाणु सूक्ष्म स्कंध और तीव्र गति वाले पदार्थों आदि की गति और स्थिति में धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय जैसे द्रव्यों की पोंटेंशियल फील्ड की भूमिका होती है। सापेक्षता सिद्धांत के अनुसार जब द्रव्यों में गति 150 किलोमीटर प्रति सैकंड से अधिक होती है तो गति के साथ उनका भार बढ़ता है और इसके कारण उनका जड़त्व भी बदलता रहता है और वे न्यूटन के गति नियमों की परिधि से बाहर हो जाते हैं। तीव्र गति के द्रव्यों में ऊर्जा के गुण-लक्षण दिखाई देते हैं।

कुछ लोगों में भ्रम है कि 'धर्म' द्रव्य के समान विज्ञान में 'ईथर' नामक गति सहायक द्रव्य की मान्यता है। लगभग 300 वर्ष पूर्व **'हायगन'** नामक व्यक्ति ने प्रकाश के प्रसारण के संदर्भ में 'ईथर' द्रव्य की कल्पना की थी क्योंकि उसका विचार था कि प्रकाश तरंगों के प्रसारण के लिए माध्यम की आवश्यकता है। अत: ईथर की कल्पना एक निष्क्रिय लोकव्यापी प्रसारण माध्यम के रूप में की गयी थी, परंतु **विज्ञान में 'ईथर' को स्वीकृति नहीं मिली क्योंकि वैज्ञानिक सिद्धांत के अनुसार ईथर में प्रकाश की गति लगातार घटती जाएगी और संभव है कि सूर्य का प्रकाश पृथ्वी पर न पहुंचे।** हायगन के समय ही न्यूटन ने प्रकाश को ऊर्जा पुंज के रूप में प्रस्तुत कर प्रकाश में भी जड़त्व होने का सिद्धांत प्रस्तुत किया था, परंतु इसे भी स्वीकृति नहीं मिली। न्यूटन के लगभग 150 वर्ष पश्चात् मैक्सवैल नामक वैज्ञानिक ने सिद्ध किया कि प्रकाश विद्युत-चुम्बक ऊर्जा है और उसके गमन के लिए किसी भी माध्यम की आवश्यकता नहीं है। अब यही सर्वमान्य वैज्ञानिक सिद्धांत है।

विज्ञान के अनुसार पुद्गल द्रव्य आतंरिक अथवा बाह्य बल और अपने स्वाभाविक जड़त्व के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान

तक गमन कर सकता है और ठहर भी सकता है। इसके लिए धर्म अथवा अधर्म द्रव्यों के निमित्त सहायता की आवश्यकता नहीं है। परमाणु, प्रकाश, ग्रह, तारे आदि भी पोटेनशियल फील्ड द्वारा उत्पन्न आंतरिक अथवा बाह्य बल के कारण गति कर सकते हैं और स्थान भी ग्रहण कर सकते हैं। उनके गति नियम न्यूटन के गति नियमों से भिन्न हैं।

धर्म-अधर्म द्रव्यों की आगमिक परिभाषा विज्ञान स्वीकृत है। इसके विपरीत जैनाचार्य धर्म, अधर्म द्रव्यों को बाह्य निमित्त सहायक द्रव्य मानते हैं। समन्वय की दृष्टि से धर्म-अधर्म द्रव्यों की परिभाषा से 'सहायक' शब्द को हटाने से विज्ञान और जैन दर्शन में कोई मतभेद नहीं रहता। इस प्रकार 'धर्म को गति द्रव्य' और 'अधर्म को स्थिति द्रव्य' कहने से दोनों में पूर्ण समन्वय हो जाता है। **उत्तराध्ययन सूत्र के अनुसार धर्म और अधर्म जीव और पुद्गल की गति और स्थिति के लक्षण हैं, बाह्य सहायक द्रव्य नहीं हैं। उचित यही है कि 'लक्षण' को लक्षण रहने दें, सहायक न बनाएँ।**

6. धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायः एक विश्लेषण

लोकाकाश में पाये जाने वाले पांच अस्तिकाय द्रव्यों का क्रमांक इस प्रकार है-

1. धर्मास्तिकाय
2. अधर्मास्तिकाय
3. आकाशास्तिकाय
4. जीवास्तिकाय
5. पुद्गलास्तिकाय

उपरोक्त पांच अस्तिकाय द्रव्यों का काल से सिमित स्वरूप क्रमशः धर्म, अधर्मा, आकाश, जीव और पुद्गल कहलाते हैं। इन पांच द्रव्योंको मूल अस्तिकाय द्रव्यो को पर्याये भी कहा जा सकता है।

द्रव्यों में धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय को पहला और दूसरा स्थान दिया गया है। जीव प्रधान (प्रमुख) तत्व होते हुए भी धर्म-अधर्म द्रव्यों को जीव से पहले रखा गया है। क्यों? नंनवकार मंत्र में भी सिद्धों से ऊपर अरिहंतों को स्थान दिया गया है, क्यों?

यदि धर्म-अधर्म, निष्क्रिय, उदासीन सहायक द्रव्य हैं' तो उन्हें इतना ऊँचा स्थान क्यों दिया गया है? उत्तर बहुत सरल है- यदि अरिहंत नहीं होते तो सिद्ध भी नहीं होते। इसी प्रकार यदि धर्म-अधर्म द्रव्य नहीं होते तो जीव और पुद्गल का योग नहीं होता और संसार का अस्तित्व भी नहीं होता। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के सक्रिय योगदान के कारण ही भगवान महावीर ने उन्हें षट्द्रव्यों में प्रथम स्थान दिया है।

गौतम स्वामी ने भगवान महावीर से प्रश्न किया-

''धम्मत्थिकाएणं भंते! जीवाणं कि पवई ?

– व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र; शतक13, उद्दे. 4, सूत्र 481

'हे भगवन! धर्मास्तिकाय से जीवों की क्या प्रवृत्ति होती है?'

भगवान ने उत्तर दिया-

''गोयमा! धम्मात्थिकाएणं जीवाणं आगमण गमण
भासुम्मे समण जोगा, वई जोगा,जे यावते
धम्मोत्थकाए ववतत्ति गई लक्खणे णं धम्मात्थिकाऐ।।

अर्थात् 'हे गौतम्! धर्मास्तिकाय से जीवों का आगमन, गमन, भाषा, उन्मेष, मनोयोग, वचनयोग और काययोग की प्रवृत्ति होती है। इसी प्रकार दूसरे जितने भी चलभाव (गमनभाव) हैं, वे सब धर्मास्तिकाय के द्वारा प्रवृत्त होते हैं। **धर्मास्तिकाय का लक्षण गतिरूप है।'**

भगवान महावीर के उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनोयोग,वचनयोग,काययोग,और अन्य जो भी गतिरूप भाव हैं, धर्मास्तिकाय की उत्त्पति हैं। **धर्मास्तिकाय इन भावों का निमित्त उदासीन सहायक नहीं है, इन भावों का जनक है।** अधर्मास्तिकाय के प्रति भी भगवान ने देशना दी कि जीवों का स्थित रहना, बैठना, सोना, मन को एकाग्र करना, विश्राम करना आदि **स्थित भाव अधर्मास्तिकाय से ही प्रवृत्त होते हैं। वह इन प्रवृत्तियों का कारण है, सहायक नहीं है।**

भगवती सूत्र शतक 7,उद्दे. 10 सूत्र 1-11 में भगवान महावीर और श्रमण कालोदायी के मध्य प्रश्नोत्तर दिये गये हैं। कालोदायी ने प्रश्न किया, ''भंते! क्या धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकय इन अरूपी अजीव द्रव्यों में कोई जीव बैठना, उठना, सोना, खड़े रहना आदि क्रियायें कर सकता है? ''भगवान ने कहा, ''ऐसा नहीं हो सकता। केवल पुद्‌गल पर ही उपरोक्त क्रियायें हो सकती हैं।'' इससे स्पष्ट है कि जीव की गति में धर्म-अधर्म सहायक नहीं हैं, केवल पुद्‌गल ही सहायक है। **भगवती सूत्र १६/११८ में एक अन्य प्रश्न पूछा गया कि क्या लोकान्त में खड़ा रहकर देव अलोक में अपना हाथ हिला सकता है? उत्तर दिया गया, 'नहीं' क्योंकि वहां पुद्‌गल के न होने से गति नहीं है।**

भगवान महावीर और गौतम स्वामी के उपरोक्त संवाद से यह निष्कर्ष निकलता है कि धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय क्रमशः गति और स्थिति भाव के जनक हैं, निमित्त/सहायक नहीं हैं। धर्मास्तिकाय से गति भाव जागृत होने पर जीव और पुद्गल स्वयं गति करते हैं और अधर्मास्तिकाय से अधर्म (स्थिति) की प्रवृत्ति से स्थान ग्रहण करते हैं।

यह जानना भी अत्यंत आवश्यक है कि क्या धर्मास्तिकाय और धर्म एक द्रव्य हैं अथवा उनमें भेद हैं? इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और अधर्म का भेद जानना भी आवश्यक है। धर्मास्तिकाय शब्द 'धर्म' और 'अस्तिकाय' शब्द से बना है। 'धर्म' का अर्थ है प्रवृत्ति तथा स्वभाव और 'अस्ति' का अर्थ है अस्तित्व, काया का अर्थ है शरीर। अतः धर्मास्तिकाय का अर्थ है 'गति का काय रुपी अस्तित्व' अर्थात गति लक्षण वाला क्षेत्र। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय का अर्थ है– 'विश्राम भाव का क्षेत्र'। यही आगमिक मान्यताएं भी हैं। विज्ञान में इन क्षेत्रों को Potential Fields कहा जाता है। **इस प्रकार धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय दोनो ही Potential Fields हैं और धर्म तथा अधर्म (Work) है जो एक दूसरे के विरोध में होता है।** गति की दिशा High Potential से Low Potential की दिशा में होती है। विज्ञान की भाषा में धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय क्रमशः Kinetic Energy और Potential Energy के क्षेत्र हैं। **इस प्रकार विज्ञान आगमिक मान्यताओं का समर्थन करता है जिनके अनुसार धर्म-अधर्म, द्रव्यों की गति और विश्राम की प्रवृत्तियां हैं, न कि उदासीन सहायक द्रव्य।**

जीव की गति का कारण पुद्‌गल को ही माना गया है। इससे यह स्पष्ट है कि धर्मास्तिकाय द्वारा निर्मित गति ही धर्म

द्रव्य है। जीव की गति का निमित्त कारण पुद्‌गल है, कोई अन्य सहायक द्रव्य नही है। **भगवती वृत्ति पत्र ७/७** में भी कहा है कि अलोक में पुद्‌गल नहीं है, इसलिए वहां जीव-अजीव की गति नहीं है अर्थात् धर्म-अधर्म द्रव्य नहीं हैं।

धर्म और अधर्म का अस्तित्व केवल लोक में है, अलोक में नहीं, क्योंकि अलोक में पुद्‌गल नहीं है। जहां-जहां जीव और पुद्‌गल होंगे, वहां-वहां धर्म-अधर्म का अस्तित्व होगा। जीव और पुद्‌गल स्वयं गति करते हैं और स्वयं ही स्थित होते हैं। यह उनका स्वभाव है। उनके इस कार्य के लिए कोई निमित्त क्यों चाहिए?

धर्म-अधर्म द्रव्य को विज्ञान के संदर्भ से पुनः परिभाषित करने से आगमिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक समन्वय संभव है। समन्वय हेतु यही कहा जा सकता है कि धर्म-अधर्म बाह्य सहायक द्रव्य नहीं है अपितु द्रव्यों की स्थान परिवर्तन और विश्राम की प्रवृत्ति है।

7. उपसंहार

विज्ञान और जैन दर्शन के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि धर्म और अधर्म द्रव्य की आगमिक अवधारणा विज्ञान के सिद्धांतों के अनुरूप है। आगमिक मान्यता है कि 'धर्म और अधर्म द्रव्यों की गति और स्थिति 'स्वभाव' है अथवा लक्षण है, कोई बाह्य सहायक द्रव्य नहीं है।

सृष्टि में कोई भी पदार्थ स्थिर नहीं है। स्थिरता न जड़ में है,न चेतन में। जिस हिमालय को हम स्थिर समझते हैं, वैज्ञानिकों के अनुसार वह बहुत धीमी गति से अपने स्थान से सरक रहा है।

बीस करोड़ वर्ष पूर्व जापान, उत्तरी ध्रुव और भारत, दक्षिणी ध्रुव के निकट थे। वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी, वनस्पति, पर्वत,सागर, सूर्य, चंद्र तारे सभी गतिमान हैं। गति ही परिवर्तन का कारण है। प्रतिक्षण हमारे शरीर में भी परिवर्तन हो रहा है। प्रतिपल हमारे शरीर की लाखों कोशिकाएँ मरती और जन्म लेती हैं। जन्म-मृत्यु का खेल लगातार हमारे भीतर चल रहा है परंतु हमें उसका अनुभव नहीं होता है। हमारी धमनियों में क्या रक्त एक क्षण भी रुकता है? क्या श्वास एक क्षण के लिए भी रुकती है? जीव वैज्ञानिकों के अनुसार शरीर का गतिचक्र कभी रुकता ही नहीं। मनुष्य का शरीर, मन, बाह्य जगत और अंतर्जगत सतत् गतिमान है। मनुष्य का मन पवन की तरह चंचल है, बंदर की तरह चपल है। तेज अश्व से भी अधिक गतिशील है। पृथ्वी सतत् अपनी धुरी पर घूम रही है, परंतु हमें केवल स्थिरता का आभास होता है। पदार्थ कभी गति करते हैं और कभी ठहरते हैं, अर्थात् चलना और ठहरना पदार्थों का स्वभाव है। आगमों में पदार्थों के गति लक्षण को धर्मास्तिकाय और स्थिति लक्षण को अधर्मास्तिकाय कहा गया है। विज्ञान में गति लक्षण को काईनेटिक पोटेंशियल और स्थिति लक्षण को स्पेस पोटेंशियल कहा जाता है। धर्म द्रव्य, गति है अर्थात State of Motion है और अधर्म द्रव्य विश्राम की अवस्था अर्थात State of Rest है। **विज्ञान के अनुसार गति और स्थिति के लिए किसी बाह्य माध्यम (** Medium) **की आवश्यकता नहीं होती** अपितु बाह्य अथवा आंतरिक शक्ति अथवा बल चाहिए। बल के कारण पदार्थों में स्वाभाविक गति अथवा स्थिति की प्रवृत्ति जागृत होती है। आगमों में इस प्रवृत्ति को धर्म-अधर्म द्रव्य कहा गया है। विज्ञान और आगमिक मान्यताओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट है कि विज्ञान और आगम कथन में समानता है।

आगमोत्तर दर्शन साहित्य में धर्म-अधर्म द्रव्यों को निष्क्रिय, उदासीन गति सहायक और स्थिति सहायक द्रव्य कहा गया है। जैन

दार्शनिकों के अनुसार जैसे मछली पानी में गति करती है, उसी प्रकार सभी द्रव्य धर्मास्तिकाय की सहायता से गति करते हैं। **इस प्रकार जैन दार्शनिकों के अनुसार धर्म गति की स्थिति** (State of Motion) **नहीं है, अपितु गति सहायक माध्यम** (Medium of Motion) **है। अधर्म द्रव्य विश्राम की स्थिति अर्थात** (State of Rest) **नही है अपितु विश्राम का माध्यम** (Medium of Rest) **है। उनके अनुसार जीव और अजीव पदार्थों में गति और स्थिति की क्षमता है, पंरतु धर्म-अधर्म क्रमशः गति और स्थिति के लिये बैशाखी का कार्य करते हैं। आगम सूत्रों का ऐसा भाव नहीं है। आगमिक मान्यता है कि परमाणु सदा, सर्वदा गति की स्थिति में रहता है। उसे गति के लिए कोई निमित्त कारण नही चाहिए। गोम्मटसार जीवकाण्ड गाथा ५९३ में कहा है 'पुद्गल द्रव्य में संख्याल असंख्याल, अनन्त परमाणु सदा चलित रहते हैं। जीव में स्वाभाविक गति नहीं है, परंतु उसे पुद्गल से गति मिलती है। अतः उसे अन्य की सहायता की आवश्यकता नहीं है।** विज्ञान भी दार्शनिक विचारों का समर्थन नहीं करता। आगम और विज्ञान एकमत हैं।

भगवान महावीर और गौतम स्वामी के मध्य 'धर्म-अधर्म' पर जो संवाद आगमों में प्राप्त है, उस से यही निष्कर्ष निकलता है कि धर्म और अधर्म द्रव्य गति और स्थिति भाव के जनक हैं, उदासीन सहायक नहीं हैं। धर्मास्तिकाय के प्रभाव से गति के भाव जागृत होने पर जीव और पुद्गल गति करते हैं अथवा स्थान ग्रहण करते हैं। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें गति भाव और स्थिति भाव जागते हैं।

अरिहंत देव ने हजारों वर्ष पूर्व अरूपी अमूर्त आत्मा तथा अष्टस्पर्शी और चतुरस्पर्शी परमाणु गति का अध्ययन किया

और उन गति नियमों का प्रतिपादन किया जिसे वैज्ञानिको ने ई० सन् १९०५ में सापेक्षता सिद्धांत की खोज के पश्चात परीक्षणों से सिद्ध किया। सर्वज्ञ देव सापेक्ष गति के प्रथम ज्ञाता और वक्ता थे।

8. संदर्भ सूची

1. तत्वार्थ सूत्र 2/25
2. तत्वार्थ सूत्र 2/27
3. तत्वार्थ सूत्र 2/29
4. तत्वार्थ सूत्र 2/28
5. व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र 25/3/730
6. स्थानांग सूत्र, स्थान-3,उद्दे. 4 व सूत्र 225
7. व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र, शतक 24, उद्दे. 1, सूत्र 851
8. स्थानांग सूत्र स्थान-10
9. भगवती सूत्र-14/4/56
10. भगवती सूत्र-एक परिशीलन,पृष्ठ-85 आचार्य देवेन्द्र मुनि
11. उत्तराध्ययन सूत्र 28/9
12. स्थानांग सूत्र, स्थान-5,उद्दे. 3 सूत्र-170
13. भगवती सूत्र-13-4
14. उत्तराध्ययन सूत्र-36/5
15. स्थानांग सूत्र स्थान -4, उद्दे 3,सूत्र -334
16. तत्वार्थ सूत्रः 5/8
17. तत्वार्थ सूत्र-5/17
18. पंचास्तिकाय, गाथा -83

19. जैन दर्शन,स्वरूप और विश्लेषण-आचार्य देवेन्द्र मुनि; पृष्ठ-140
20. जैन दर्शन-मनन और मीमांसा; आचार्य महाप्रज्ञ
21. स्थानांग सूत्र 10/1
22. जैन आगमों में दर्शन-समणी मंगलप्रभा; पृष्ठ-104

अध्याय 6

जैन दर्शन में बायलाजिकल एवल्युशन तथा बायोसेन्ट्रिजम् की अवधारणा

Jain Concepts of Biocentrism & Biological Evolution

विषय अनुक्रमणिका

विषय	**पेज न.**
'अप्पा सो परमाप्पा' –कविता	173
Abstract	**175**
1. प्रस्तावना	179
2. जैन दर्शन में जीव (प्राणी) तथा जीव तत्व (आत्मा)	182
3. विज्ञान की दृष्टि से चेतना (Consciousness) तथा जीवतत्व	187
4. जिवास्तिकाय तथा क्वांटम फील्ड की अवधारणा	189
5. जैन दर्शन तथा विज्ञान में बायोसेन्ट्रिजम की अवधारणा	193
6. जन्म, मृत्यु तथा पुनर्जन्मः महावीर की दृष्टि से	195
7. जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्मः विज्ञान की दृष्टि से	199
8. महावीर तथा डार्विन की दृष्टि से जीव तथा शरीर का क्रम विकास	202
9. Spiritual Evolution के परिपेक्ष्य में मोक्ष तथा आत्म-विकास की अवधारणा	205
10. उपसंहार	209
11. संदर्भ सूची	211

'अप्पा सो परमाप्पा'

'अप्पा सो परमाप्पा' रुपी लोक हमें बतलाता है
Biological Spiritualism *की व्याख्या भी समझाता है।*

मृत्यु जीवन का अंत नही, यह सब ***Illusion*** *रुप है*
'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' युक्त सत् का दिग्दर्शन अनुप है

छः भेदो वाली लेश्या है आत्म शुद्धि का पैमाना
Radiation Spectrum *और* ***Cell Mutation*** *से आज*
विश्व नही है अनजाना

Space-Time *और* ***Multiverse*** *सजे हैं अगले पृष्ठों में*
डार्विन और महावीर की थ्योरी पढ़लो अगले पृष्ठों में

ABSTRACT

The Jain word for consciousness is Atman. It is non-material and fundamentally different from anything else we know. Through consciousness, we perceive reality and reflect upon emotions and feelings. Science accepts the existence of consciousness but the scientists do not know how to explain its presence using the physical laws.

'The human brain creates reality,' say the neuroscientists. The human brain is the most fascinating evolutionary creation. Weighing just 1.5 kg, the brain makes only two percent of body weight yet it consumes 20% of the body's oxygen and 25% of the body's glucose. It has 100 billion neurons and another 100 billion supporting cells. The neurons make 100 trillion connections suggesting there is a cosmos in the brain. Neuroscientists have developed theories to explain how separate pieces of informations like size, shape, colour, smell etc are integrated by the brain to produce a coherent object, yet the neurologists say that what the brain executes is not the same as what 'I' does. The brain is a computer and the 'I' is its software, what the Jains call as Atman. The 'I' factor belongs to the consciousness having faculties of Cognition, Perception, Awareness and Emotions. Consciousness is not limited to human beings alone. All living things are aware of their existence though they may not have the same degree of self awareness and intelligence as that of

human beings. Jains believe that plants, fire, earth, wind and water also have consciousness.

“Consciousness and Atoms are two basic constituents of the universe, which are neither created nor destroyed in any type of creation," says Mahavir. Human body is an instrument that helps in raising the level of consciousness to the level of Omniscience or Kewalgyana. Evolution of the raw soul to the enlightened state is a very slow process involving several births. If one wants to free himself from the cycles of brith and death, one needs to become body-less. All Jain rituals are for becoming body-less and converting into pure consciousness.

Our body is programmed by our Karma. A seed has the software of the entire tree and Karman Sharira has the software of entire body. By clearing the emotional, oral and physical karma, one can become body-less Atman. The human beings can acquire knowledge about the bond that exists between the soul and the body. They can also develop methods to break this bond and get free of Karma. ‘The most primitive organism can also achieve this enlightenment and freedom through the process of ‘Biological Evolution.’

According to Mahavir, ‘Biological Evaluation’ means rising to higher levels of consciousness but according to Darwin ‘Biological Evaluation’ means growing new organs for surviving under adverse conditions. The modern thinking is now tuning towards Jain concepts of Biological Evolution which terminates into Spiritual Evolution.

The biologists and life scientists failed to find the origin of Consciousness in brain, proteins and in neurons. Now they are looking for consciousness in "Space and Time" and in Cosmic Quantum Field. Scientists believe that Consciousness is a fundamental property of Quantum Field. This property arranges the particles as matter, physical force, mass, spin and charge. However particles loose their consciousness when they entangle with other particles and start loosing coherence.

According to Mahavir, 'Time and Space' do not exist as physical realities. They are forms of animal sense perception. So they are 'Asat' or an illusion. As we move up the spiritual ladder we become more and more aware of the truth. When one starts realizing atoms building the universe and the consciousness embedding the matter, one achieves full enlightenment.

The Universe follows physical laws which were independently discovered by Mahavir and two thousand years later by scientists like Newton. Galileo, Einstein etc. Right from creation to evolution of the universe to its present from, gravity to planetary motions, force, light, atoms, subatomic particles— all follow certain laws which indicates that the universe has built in intelligence. Mahavir called this as ‘Jivastikaya’ and the scientists call it Cosmic Quantum Field which has built in consciousness that controls the atoms and all type of creation. To many religions this universal Consciousness appears as God but for Mahavir it is mere Consciousness.

जैन दर्शन में बायलाजिकल एवल्युशन तथा बायोसेन्ट्रिजम् की अवधारणा

1. प्रस्तावना

तप, साधना, चिंतन, मनन द्वारा भगवान महावीर ने प्रकृति का अध्ययन किया और आत्म सिध्दि प्राप्त की। वे घोर तपस्वी जहाँ भी बैठते, प्रकृति का ध्यान करते और किसी निर्जन स्थान पर चलते तो प्रकृति का ही चिंतन करते। भगवान महावीर कोई चमत्कार नहीं करते थे अपितु अवधिज्ञान तथा केवल ज्ञान द्वारा परमाणु और चेतन तत्व का साक्षात् दर्शन करते एवं परमाणु-परमाणु के बंध से समस्त अजीव पदार्थों को एवं उनकी सम्पूर्ण पर्यायों को एक क्षण में जान जाते। संसार के सभी जिवित प्राणी उन्हें पुद्गल शरीर में बंध चेतन आत्माएँ प्रतीत होती थीं। इन आत्माओं की शुध्दता का अनुमान वे उनकी लेश्या (Body Aura or Radiance) से लगा लेते। लेश्या के वर्ण के अनुसार पूर्व ज्ञान भी हो जाता। कृष्ण लेश्या द्वारा वे पतित आत्मा को जानते और शुभ्र लेश्या द्वारा पुण्यात्मा को जानते।

सर्वज्ञ देव विश्व के ज्ञाता और दृष्टा थे। वे कहते, **'णाणं जिवसस्वं'**[1] अर्थात् जीव का स्वरूप ज्ञान है। आपका उपदेश था-**'अप्पाणं विणु णाणं, णाणं विणु अप्पाणोणसंदेहो'** अर्थात् 'आत्मा को ज्ञान जानो और ज्ञान को आत्मा जानो'। निसंदेह सिद्धात्मा का स्वरूप है केवलज्ञान और केवलज्ञानी की मूल अवस्था है **'जिवास्तिकाय'** जो ज्ञानोपयोग, चेतनोपयोग और दर्शनोपयोग का अनन्त भण्डार है।

विज्ञान की दृष्टि से जीव अथवा आत्मा युनिवर्सल आबजर्वर है और 'जिवास्तिकाय' क्षेत्र सायबर स्पेस (Knowledge Space) के समान है। ई. सन 2005 में स्टेम सेल-विशेषज्ञ तथा विश्व की पहली हार्ट-सर्जरी से जुड़े जीव वैज्ञानिक डॉ.राबर्ट लान्जा ने 'बायोसेन्ट्रिजम' नामक सिद्धान्त दिया जिसका सम्बन्ध 'जिवास्तिकाय' से है। इस सिद्धान्त के अनुसार मृत्यु, जीवन का अन्त नहीं है। मृत्यु एक भ्रम (Illusion) है। जीवन का संबंध चेतन तत्व (Consciousness) से है जो अनादि है और शाश्वत है। 'सत्' का ज्ञान, चेतन तत्व द्वारा होता है। चेतन की शुद्धता के अनुसार अर्थात् गुण स्थानों के अनुसार सत् का स्वरूप भी बदलता है। डॉ.राबर्ट लान्जा मानते हैं कि विश्व का स्वरूप केवल परमाणु और फिजिक्स के नियमों द्वारा निर्धारित नहीं होता अपितु आत्मा अर्थात युनिवर्सल आबजर्वर की दृष्टि के अनुसार होता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के जीवों को विश्व एक समान नहीं दिखाई देता अपितु विश्व भिन्न-भिन्न रूप में दिखाई देता है। अतः बायोसेन्ट्रिजम सिद्धांत के अनुसार युनिवर्सल आबजर्वर की दृष्टि से युनिवर्स एक है परंतु संसारी जीव की दृष्टि से युनिवर्स अनेक हो सकते है अर्थात **मल्टीवर्स (Multiverse) सम्भव है।** आगमिक मान्यता भी इसी प्रकार की है। केवलज्ञानी भगवान को एक पंचास्तिकाय लोक दिखाई देता है और संसारी जीव को यही पंचास्तिकाय लोक छः द्रव्यों का समुदाय दिखाई देता है। स्पष्ट है कि बायोसेन्ट्रिजम का सिद्धान्त अनादि-शाश्वत जीव तत्व की जैन अवधारणा का समर्थन करता है।

बायोसेन्ट्रिजम अभी सर्व मान्य सिद्धांत नही है इस पर वैज्ञानिक खोज चल रहा है। वैज्ञानिक मानते हैं कि पृथ्वी पर जीव की उत्पत्ति एक एक्सीडेन्ट था। लगभग 4000 करोड़ वर्ष पूर्व अजीव परमाणु से सजीव स्कन्ध (Organic Molecule) की

उत्पत्ति हुई। उनके अनुसार उस समय प्रकृति में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो गयीं कि अमिनो एसिड का स्कन्ध जो एक केमिकल पदार्थ है, अचानक जीवित हो गया। जिस प्रकार सूखा बीज अथवा सूखी लकड़ी पानी के सम्पर्क में अंकुरित हो जाती है अथवा मल, मूत्र, गोबर आदि में समुर्च्छिम जीव उत्पन्न हो जाते हैं उसी प्रकार अमिनोएसिड का स्कन्ध समुर्च्छिम प्रक्रिया से जीवित हो गया। इस प्रकार के जीवोत्पति के प्रति वैज्ञानिकों में पूर्ण सहमति नहीं है। यह अभी भी रिसर्च का विषय है। बायोसेन्ट्रिजम अर्थात् अनादि, शाश्वत जीव के अस्तित्व की अवधारणा को इस दिशा में प्राप्त एक महत्वपूर्ण उपलब्धि ही कहा जाएगा।

वैज्ञानिक मानते हैं कि हमारे शरीर के प्रत्येक परमाणु पर हमारी चेतना का कंट्रोल है। वैज्ञानिक उस प्रोटोकाल की खोज में हैं जिसके द्वारा चेतन का परमाणु पर कंट्रोल बना रहता है। भगवान महावीर को कदाचित इस प्रोटोकाल का ज्ञान था जिस कारण वे मन शरीर बुद्धि और वासना पर नियंत्रण कर सभी प्रकार की यातनाओं एवं परिषह के प्रभाव से मुक्त थे। इसी प्रोटोकाल की सहायता से वे आत्मा का चौदह गुण स्थानों तक विकास करने में सफल हो गये। इस प्रोटोकाल द्वारा जीव भिन्न भिन्न प्रकार के शरीर भी धारण कर सकते है। जैसे आचार्य बाहुभद्र ने स्वयं को सिंह के शरीर में परिवर्तित कर लिया था। प्रत्येक जीव में स्व-प्रयासों से शरीर में नये-नये अंगो का विकास करने की क्षमता है। पुरूषार्थ से एकेन्द्रिय-जीव पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय-जीव मनुष्य, देव, सिद्ध बनने की क्षमता रखता है। जीव-विकास की इस प्रक्रिया को जैन दर्शन में **'अप्पासो परमाप्पा'** अर्थात् 'आत्मा से परमात्मा' बनने की प्रक्रिया कहा गया है। जीव वैज्ञानिक इसे बायलाजिकल तथा स्पिरिच्युएल क्रम विकास मानते हैं।

जीव, जिवास्तिकाय, अप्पा, परमाप्पा आदि जैन अवधाराणाओं का विवेचन इस अध्याय में बायोसेंट्रीजम तथा डार्विन के जीव-विकास के सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत है।

2. जैन दर्शन में जीव (प्राणी) तथा जीव तत्व (आत्मा)

जैन दर्शन में आत्मा को शरीर से भिन्न माना गया है। **कृतांग सूत्र** में कहा है- **''अन्नो जीवों, अन्न संसार''।** अर्थात् आत्मा और शरीर भिन्न-भिन्न हैं। शरीर पुद्‌गल परमाणु से बनी काया है। आत्मा अविनाशी और अवस्थिल द्रव्य है- **अंह अव्वए वि अंह अवट्टिये वि'**[4]**।** शरीर सड़न गलन वाली वस्तु है जो आयुष्य पूरा होने पर परमाणु में बिखर जाता है। शरीर की मृत्यु होने पर अविनाशी आत्मा उस शरीर का त्याग कर देती है। पूर्व शरीर के संस्कार आत्मा के साथ सूक्ष्म कार्मण शरीर के रूप में बँधें रहते हैं जिसे वर्तमान विज्ञान की भाषा में **'जेनेटिक कोड़'** कहा जा सकता है। आत्मा इस जेनेटिक कोड के अनुरूप सजातिय गोत्र की योनी में प्रवेश कर नये शरीर की रचना करता है। उचित समय पर आत्मा सशरीर योनी से बाहर आता है जिसे 'जन्म' कहा जाता है। यही संसारी जीव है। सिद्धात्मा शुद्ध चेतन तत्व है।

जैन दर्शन में आत्मा को जीव तत्व भी कहा जाता है। आत्मा संकोच-विस्तार (गुरू-लघु) गुण के कारण सूक्ष्म शरीर से लगाकर संपूर्ण लोक में व्याप्त हो सकता है। लोक व्यापी, आत्मा, जिवास्तिकाय है, सिद्ध है, बुद्ध है और चेतनोपयोग, ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग से युक्त है। पुद्‌गल परमाणु के सम्पर्क में जिवास्तिकाय की 'उपयोग' शक्ति, ज्ञान, चेतना और दर्शन में परिवर्तित होती है। इन्हीं भावों को **समयसार (पूर्वरंगाधिकार) गाथा ६** में जीव तत्व के प्रति कहा गया है-

ण वि होदि अप्पमत्तो ण पमत्तो जाणओ दु जो भावो।
एवं भणंति सुद्धं णाओ जो सो उसो चेव'॥

अर्थात् जो ज्ञान भाव है वह जीव द्रव्य है। वह न अप्रमत्त है और न प्रमत्त ही है। जैसा जाना गया है उसी शुद्ध रूप में वह है। पर पदार्थ से सम्पर्क में जो अशुद्ध हो रहा है, उसी जीव में प्रमत्त और अप्रमत्त का विकल्प सिद्ध होता है। जो पर पदार्थों से मुक्त है वह ज्ञायक है- ज्ञाता, दृष्टा ही है।

व्यवहार नय से जीव और शरीर एक हैं परंतु निश्चय नय से जीव और शरीर एक पदार्थ नहीं हैं समयसार गाथा 38 में आचार्य कुन्द-कुन्द कहते हैं कि जीव एक शुद्ध, ज्ञानमय, परमाणु से भिन्न अरूपी द्रव्य है। जीव का वास्तविक स्वरूप क्या है? आचार्य कहते हैं-

अरसमस्वमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिदिद्ट्ठसंठाणं॥

-समयसार, गाथा 48

अर्थात् जो रस रहित है, रूप रहित है, गंधरहित है, अव्यक्त है, चेतना गुण से सहित है, शब्द रहित है, जिसका किसी चिन्ह अथवा इन्द्रिय द्वारा ग्रहण नहीं होता और जिसका आकार नहीं है, उसे जीव जाणो।

समयसार गाथा-७ में कहा है कि ज्ञान, दर्शन और चरित्र, आत्मा (जीव) की अशुद्धता है-

ववहारेणुवदिस्सइ णाणिस्स चरित्तदंसणं णाणं।
णंवि णाणं ण-चरित्तं ण दंसणं चाणगो सुद्धो॥

अर्थात् ज्ञानी जीव के चरित्र है, दर्शन है, ज्ञान है, यह व्यवहार नय से कहा जाता है। निश्चय नय से न ज्ञान है, न चरित्र है और न दर्शन है। वह तो एक ज्ञायक ही है इसीलिये शुद्ध कहा गया है।

गाथा 11 में कहा है कि व्यवहार नय अभूतार्थ अर्थात् असत्यार्थ है- **'ववहारोंऽ भुयत्थो'** अतः व्यवहार नय से आत्मा की शुद्धता का ज्ञान नहीं होता केवल निश्चय नय से जीवादि पदार्थों के सम्यकत्व का ज्ञान होता है। गाथा 13 में कहा है-

भूयत्थेणाभिगदा जीवाजीवा यपुण्णपावं च।
आसवसंवरणिज्जर बंधो मोक्खो य सम्मत्तं।।

अर्थात् निश्चय नय से जाने हुए जीव, अजीव, पुण्य पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष ही सम्यकत्व है। **अतः यदि आत्मा का ज्ञान प्राप्त करना है तो आत्मा को बंधरहित, पर पदार्थ रहित, चंचलता रहित, विशेषता रहित और अन्य पदार्थों के सम्पर्क रहित अवस्था में जानो[5] आत्मा की यह सिद्ध अवस्था 'जिवास्तिकाय' कहलाती है।**

व्यवहारिक नय से जैन साहित्य में जीवात्मा, सिद्धात्मा, मुक्त जीव, संसारी जीव आदि को एक सामान्य शब्द 'जीव' से सम्बोधित करने की परम्परा है। वस्तुतः आत्मा और जीव में भेद है। आत्मा एक शुद्ध द्रव्य है जिसे जीव द्रव्य भी कहा जाता है। आत्मा और जीव तत्व की परिभाषा समयसार गाथा ६ और ४८ में दी गई है जिसके अनुसार आत्मा अथवा जीव तत्व कर्म से मुक्त द्रव्य है और जीव के साथ कर्म और शरीर बंधे हैं। अतः व्यवहार में जीव का अर्थ संसारी आत्मा अर्थात जीवित प्राणी है। संसारी जीव की परिभाषा आचार्य कुन्द-कुन्द ने **पंचास्तिकाय गाथा ३०** में दी है जो इस प्रकार करते है-

पाणेहिं चदुहिं जीवादि जीवस्स दि जो हु जिविदो पुव्वं।
सो जीवो पाणा पुण बलामिंदियामाउ उस्साओ।।

–पंचास्तिकाय गाथा 30

अर्थात् जो चार प्राणों के कारण वर्तमान में जीवित है, आगे जीवित रहेगा और पहले जीवित था, वह जीव है। जीव के चार प्राण हैं– बल, इन्द्रियां, आयु, और उच्छवास। इससे पहले **गाथा २७** में कहा है कि 'जो निश्चय नय की अपेक्षा, भाव प्राणों से और व्यवहार नय की अपेक्षा द्रव्य प्राणों से जीवित रहता है, वह जीव कहलाता है।' **समयसार गाथा ७ के अनुसार ज्ञान, दर्शन और चारित्र भी आत्मा के (जीव तत्व के) गुण नहीं हैं। ये गुण संसारी आत्मा (जीव) के हैं। अर्थात ये तीन गुण जीवित प्राणी में पाये जाते हैं। आत्मा और जीव तत्व में तो केवल उपयोग गुण है जिसका वर्णन समयसार गाथा १३ में दिया है।**

श्वेताम्बर जैन साहित्य में आत्मा और जीव का भेद स्पष्ट रुप से पाया जाता है। **उतराध्यायन सूत्र, अध्याय ३६, सूत्र ४९ में कहा है– 'संसारत्था य सिध्दा य दुविहा जीवा वियाहिया'।** अर्थात जीव दो प्रकार के हैं– संसारस्य और सिध्द।

उत्तराध्यायन सूत्र में आत्मा के प्रति कहा गया कि–

णो इंदियग्गेज्झ अमुत्तभावा, अमुत्तभावा विय होई णिच्चो।
टज्झत्थहेउं णिययस्स बेधो संसारहेउं च वयंती बधं।।

उत्तराध्यायन सूत्र 14/19

अर्थात् आत्मा अमूर्त है, इसलिये इन्द्रिय ग्राहय नहीं है। अमूर्त होने के कारण ही आत्मा नित्य है। आत्मा के पाप दोष के कारण ही उसके बंध होता है जो संसार का हेतु कहा गया है।

आत्मा का शरीर से भिन्न और स्वंतत्र अस्तित्व है। आत्मा, चेतन तत्व है और शरीर जड़ है। आत्मा शरीर का स्वामि है। आत्मा की उत्पत्ति नहीं होती है। आत्मा का विनाश भी नहीं होता। वह केवल शरीर बदलता है। अत: आत्मा न तो सर्वथा नित्य है और न ही सर्वथा अनित्य है। वह परिणामी नित्य है। द्रव्य दृष्टि से तो वह शाश्वत है परंतु पर्याय दृष्टि से वह भिन्न भिन्न शरीर धारण करता है। वह मनुष्य गति, नरक गति, तिर्यन्च गति, देवगति और सिद्ध गति को प्राप्त होता है। आत्मा का शुद्ध रूप सिद्ध है, एक चेतन तत्व है जिसका अस्तित्व 'जिवास्तिकाय' के रूप में है।

नन्दि सूत्र गाथा १० में कहा है कि संसार के प्रत्येक जीव में चेतना का कुछ ना कुछ अंश होता है अन्यथा जीव, अजीव बन जाएगा। **चेतना की दृष्टि से सभी जीव आत्माएँ है। कर्म की दृष्टि से वे संसारी और सिद्ध कहलाते हैं। संसारी जीवों में पांच इंन्द्रियाँ, मन, वचन, काया, स्वाच्छोस्वास और आयुष्य ये दस गुण होते हैं जिन्हें प्राण भी कहा जाता है।** पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल और वनस्पति को भी जैन दर्शन में जीव कहा है। देव और नारक भी जीव हैं। इस प्रकार जीवों की संख्या अनन्त हो जाती है। जैन धर्म की मान्यता है कि प्रत्येक जीव एक आत्मा है और वह पुरूषार्थ द्वारा कर्म बंध को तोड़ कर सिध्द गति प्राप्त कर सकता है।

गौतम स्वामि ने जिज्ञासा प्रगट की-''भंते!आया, अन्ने काये?''

अर्थात् 'भगवन! क्या आत्मा और शरीर भिन्न-भिन्न हैं? भगवान महावीर ने समाधान किया **''गोयमा! आया विकाये, अन्ने विकाये''।** अर्थात् ''गौतम! आत्मा शरीर से भिन्न है और अभिन्न

भी है।'' तात्पर्य यह है कि आत्मा के गुण शरीर में भी दिखाई देते हैं। आत्मा के सहयोग से शरीर भी चेतनमय बन जाता है।

शरीर एक विशिष्ट प्रकार के स्कन्धों से बना है जिसे विज्ञान में Organic Matter ('विस्रसा पुद्‌गल') कहा जाता है। बायोमलिक्युल में जिवास्तिकाय के ज्ञानोपयोग तथा दर्शनोपयोग शक्ति को ज्ञान तथा दर्शन में परिवर्तित करने की क्षमता है। जिस प्रकार आकाश में विद्युत-चुम्बकीय-सिग्नल के रूप में ब्राडकास्ट की गयी ध्वनि तथा चित्रों को पुनः प्रतिमाओं में परिवर्तन करने की योग्यता टी.वी में है उसी प्रकार शारीरिक चेतना में इन्द्रियों द्वारा प्राप्त इन्फरमेशन को ज्ञान में परिवर्तित करने की क्षमता है।

लीबनिज नामक जर्मन दार्शनिक संपूर्ण विश्व को चेतना मय मानते हैं। उनके अनुसार जीव-अजीव सभी द्रव्यों में चेतना का कुछ ना कुछ अंश होता है। भगवान महावीर ने यद्यपि जड़ और चेतन को दो स्वतंत्र द्रव्य माना है तथापि सर्वज्ञ देव ने अप्रत्यक्ष रुप से प्रत्येक पदार्थ में जीव के अंश होने को स्वीकार किया है। भगवान कहते हैं पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल, मनुष्य, देव, नारक, तिर्यंच, वनस्पति आदि सभी में जीव है। प्रश्न होता है कि अब बचा क्या है जिसमें जीव नही है। केवल परमाणु और पुद्‌गल। परमाणु जड़ है परंतु वह भी एक प्रदेशी है। आत्मा भी असंख्यात प्रदेशी है। इस प्रकार संपूर्ण विश्व आकाशप्रदेशों के ही भिन्न-भिन्न रुप, समुदाय अथवा रचना है। यही बायोसेन्ट्रिजम् कहलाता है।

3. विज्ञान की दृष्टि से चेतना (Consciousness) तथा जीवतत्व

जैन मान्यता अनुसार जीव और अजीव पदार्थों में मुख्य भेद चेतना का है। जीव चेतन है और अजीव में चेतना का अभाव है।

विज्ञान में भी कहा जाता है कि सभी जीवित प्राणियों में चेतना अर्थात Consciousness होती है। जर्मन दार्शनिक लीबनिज संपूर्ण विश्व को चेतन मय बतलाते हैं। वैज्ञानिक अप्रत्यक्ष रुप से इसका अनुमोदन करते हैं जब वे कहते हैं कि आकाश व्याकुम क्वांटम फील्ड है और क्वांटम फील्ड में चेतना के अंश होते हैं।

वैज्ञानिक मान्यता है कि मैटर की उत्पत्ति लगभग 1370 करोड़ वर्ष पूर्व रिक्त आकाश में बिग बैंग से हुई। उष्ण मैटर के शीत होने पर हाइड्रोजन, नायट्रोजन, कार्बन आदि परमाणु के संघात से O_2, Co_2, H_2O, तथा NaCl, ग्लुकोज, सुक्रोज जैसे मायक्रोमालेक्युल (जिन्हें मोनोमर भी कहा जाता है) की उत्पत्ति हुई। पालिमरायजेशन नामक रासायनिक प्रक्रिया द्वारा मोनोमर से शुगर,फ्याटि एसिड, अमिनोएसिड आदि की उत्पत्ति हुई जो जीव में परिवर्तित हो गये। इन जीव को कोएसरवेट (Coacervate) कहा जाता है जिसमें जन्म और मृत्यु की क्षमता है। कोएसरवेट गोलाकार अथवा माइक्रोस्पीयर के आकार के एन्जाईम (Enzyme) अथवा प्रोटीन हैं, जिसका कंट्रोल एमिनो एसिड (डी एन ए अथवा आर एन ए) द्वारा होता है। यह माईक्रोस्पीयर जीव कोशिका (Living cell) कहलाती है। इस सेल में सूर्य प्रकाश तथा क्लोरोफिल की सहायता से स्वयं का आहार बनाने की क्षमता है। आगमिक भाषा में इसे निगोद, कहा जा सकता है।

डाल्टन, हालडाने ओपरिन[31] आदि वैज्ञानिको द्वारा प्रस्तुत उपरोक्त 'अजीव परमाणु द्वारा जीव उत्पत्ति का सिद्धान्त' एबायोजेनेसिस (Abiogenesis) कहलाता है। मिलर नामक वैज्ञानिक ने सन् ई. सन् 1953 में इसे परीक्षण द्वारा सिद्ध किया और एबायोजेनेसिस की प्रक्रिया को वैज्ञानिक मान्यता प्राप्त हो गयी। एबायोजेनेसिस की प्रक्रिया, आक्सीजन के वातावरण में सभंव नहीं है। अतः ऐसा माना जाता है कि पृथ्वी के वातावरण में जब आक्सिजन की उत्पत्ति

हुई तब अजीव से जीव की उत्पत्ति की प्रक्रिया रुक गई और तब से जीव की उत्पत्ति जीव द्वारा ही हो रही है। वैज्ञानिक इसे A Biogenesis First but Biogenesis Ever Since अथवा Life Begets Life' का सिद्धान्त मानते हैं।

ई. सन् 2010 में वैज्ञानिकों ने मृत बैक्टेरिया के शरीर में कृत्रिम डी एन ए डालकर उसे जीवित करने में सफलता प्राप्त की। वैज्ञानिकों ने कृत्रिम डी एन ए में, नये जेनेटिक कोड भी डाल दिये थे जिससे पुन:जीवित बैक्टेरिया की संतानों में जेनेटिक कोड के अनुसार शारीरीक परिवर्तन हो गए। इन वैज्ञानिक परिक्षणों से यह तो सिद्ध हो गया कि डी एन ए जीवतत्व है परंतु जीव-कोशिका (Cell) में प्राण और चेतना की उत्पत्ति कैसे हुई? इस प्रश्न का समाधान इन परीक्षणों से नहीं होता। यह अभी भी खोज का विषय है।

अंतरिक्ष में अनेक स्थानों पर सूक्ष्म जीव के अस्तित्व के प्रमाण मिले हैं। अत: कुछ वैज्ञानिक यह भी मानते हैं कि पृथ्वी पर जीव का आगमन अंतरिक्ष से हुआ होगा और पृथ्वी के अत्यंत अनुकूल वातावरण में अंतरिक्ष से आए सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव ने क्रम विकास करते हुए मनुष्य भव प्राप्त किया होगा। आगमिक मान्यता है कि लोक में एकेन्द्रिय जीव अनादि काल से है और पुरूषार्थ द्वारा उसका पंचेन्द्रिय तथा मनुष्य भव तक विकास सम्भव है।

4. जिवास्तिकाय तथा क्वांटम फील्ड की अवधारणा

जीव द्रव्य बहुप्रदेशी अस्तिकाय है। उसके लोक व्यापी स्वरूप को 'जिवास्तिकाय' कहा गया है। जीव एक अविभाजित द्रव्य है तथापि जीव को असंख्यात आकाश प्रदेशों की काया कहा गया है। चूंकि

जीव और परमाणु में बंध होता है इस लिए जीव के एक परमाणु जितने क्षेत्र को एक आकाश प्रदेश कहा गया है जिसे परमाणु की तरह जीवास्तिकाय से विभक्त नहीं किया जा सकता। जीव अपने प्रदेशों को सिकोड़ सकता है और प्रसारण भी कर सकता है। जीव तत्व, शुद्ध चेतन द्रव्य है और उपयोग गुणोंवाला है। जीव तथा जिवस्तिकाय की अवधारणा विज्ञान में भी है। विज्ञान में वे क्रमशः Consciousness और 'क्वांटमफील्ड अर्थात् 'चेतना' और 'चेतना क्षेत्र' कहलाते हैं। **विज्ञान में 'चेतना' को स्वतंत्र द्रव्य नहीं माना गया है। विज्ञान के अनुसार बायोमालेक्युल अथवा शरीर में विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा की उत्पति चेतना के रूप में होती है। शरीर में चेतना की उत्पति कैसे होती है, यह अभी विवाद तथा खोज का विषय है।**

कास्मिक स्पेस अथवा आकाशास्तिकाय एक व्याकुम क्वांटम फील्ड है जिसमें वायब्रेशन द्वारा अस्थायी (Virtual) पार्टीकल (क्वांटा) उत्पन्न होते हैं और आकाश में ही विलीन हो जाते हैं क्योंकि आकाशास्तिकाय वास्तवतः गुरूत्वाकर्षण शक्ति का क्षेत्र है, अतः गुरूत्वाकर्षण शक्ति अन्य द्रव्यों के क्वाटा पर उसी प्रकार बंध जाती है जिस प्रकार चीनी की चासनी किसी अन्य द्रव्य कणपर चढ़ जाती है और इस द्रव्य कण में भार (Mass) का अनुभव होता है। **एक आकाश प्रदेश गुरूत्वाकर्षण ऊर्जा की न्यूनतम मात्रा है।** अर्थात एक आकाश प्रदेश से कम गुरुत्वाकर्षण उर्जा नही हो सकती। इसे विज्ञान में जिसे गॉड़ पार्टीकल भी कहा जाता है जो अन्य पार्टिकलों से मिलकर 'परमाणु' की रचना करता है। क्वाटंम फिल्ड पर किये गये अनेक परीक्षणों से यह संकेत मिलते हैं कि द्रव्यों के 'अस्तिकाय' स्वरूप अथवा क्वांटम फिल्ड में चेतना के अंश हैं। 'जिवास्तिकाय' शुद्ध चेतना है। परमाणु –प्रदेश में भी चेतना के अंश हैं जिसके कारण परमाणु के सारे

कार्य नियमों के अनुसार होते हैं। परमाणु कैसे जानता है कि उसे 'उत्पाद-व्यय-ध्रोव्य' के नियम में बंधे रहना है? यह ज्ञान परमाणु के प्रदेश अथवा 'वेवफक्शन' में है जो एक प्रकार का विद्युत-चुम्बकीय क्षेत्र है।

प्रवचनसार (ज्ञानतत्वप्रज्ञापनाधिकार) गाथा १७ में कहा है कि सिद्धात्मा जन्म -मृत्यु से मुक्त है तथापि जीव द्रव्य होने के कारण उसमें उत्पाद और व्यय का समवाय रहता है। यह कथन उपरोक्त क्वांटम फील्ड की अवधारणा के समान है जिसमें कहा गया है कि क्वांटम फील्ड में वरच्युअल पार्टिकल उत्पन्न होते हैं और उसी में विलीन भी हो जाते हैं। गाथा २३ में कहा गया है-

आदा णाणप्पमाणं णाणं णेयपामाणमुदिद्टठं।
णेयं लोगालोगं लह्मा णाणं तु सव्वगयं॥

अर्थात् आत्मा ज्ञान प्रमाण है और ज्ञान सर्वव्यापक है तथा लोक-अलोक प्रमाण है। यह विचार योग्य है कि **आचार्य कुन्द-कुन्द इस गाथा द्वारा संकेत दे रहे हैं कि 'अलोक' में भी ज्ञान है जब कि अलोक की परिभाषा में कहा जाता है कि अलोक में आकाश के अतिरिक्त दूसरा अन्य द्रव्य नहीं है।**

प्रवचनसार गाथा २६ में अधिक स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'ज्ञानमय होने से जिन श्रेष्ठ सर्वज्ञ भगवान सर्वव्यापक है और जगत के सभी पदार्थ उन भगवान में प्राप्त होते हैं। क्वांटम फील्ड की भी यही अवधारणाा है। क्वांटम फील्ड में लगातार वेवज् अथवा तरंगें उत्पन्न होती रहती हैं। सभी द्रव्यों का मूल स्वरूप तंरगें ही हैं। परंतु किसी भी आबजर्वर (संसारी आत्मा) को वे पार्टिकल रूप में दिखाई देती है। इस सिद्धान्त के

अनुसार परमाणु का मूल स्वरूप वेव है जिसे आगमों में प्रदेश कहा है। ज्ञात रहे प्रदेश में दो या तीन डायमेंशन (आयाम) होते हैं। बाहरी आबजर्वर को वेव ग्रुप पार्टिकल के रूप में दिखाई देता है। विश्व में पाये जाने वाले सभी परमाणु सजीव-निर्जीव पदार्थ, परमाणु से बने हैं। अतः विश्व का स्वरूप आबजर्वर के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकता है अर्थात् एक विश्व के स्थान पर अनेक विश्व (Multi-universe) का अस्तित्व संभव है। इस प्रकार पशु-पक्षियों को दिखाई देने वाला विश्व स्वरूप मनुष्य को दिखने वाले विश्व से भिन्न हो सकता है क्योंकि पशु, पक्षी, मनुष्य, देव, दानव, सभी आत्माएँ (observer) हैं। उनके द्वारा अनुभव किया गया विश्व भी भिन्न-भिन्न प्रकार का होगा। **यदि विश्व अनादि शाश्वत है तो उसका ज्ञाता और दृष्टा भी अनादि शाश्वत ही होगा। इस प्रकार जीव की शाश्वतता विज्ञान द्वारा भी प्रमाणित होती है।**

जर्मन दार्शनिक लेबनिज संपूर्ण संसार को चेतन मानते हैं। जड़ पदार्थो में भी चेतना के अंश होते हैं। जैसे शरीर जड़ है परंतु उसमें चेतना का अंश है। परमाणु जड़ है परंतु परमाणु भी अपने कार्यों के प्रति सजग है। परमाणु भी नियमों से बंधा है। नियमों से अनुबंधित परमाणु भी अपनी मर्यादा में रहकर स्कन्ध में बंध जाता है। **भगवती सूत्र** और **पंचास्तिकाय** में स्कंध रचना के नियम दिये गये हैं जो सिद्ध करता है कि परमाणु में भी ज्ञान है और ज्ञान को ही समयानुसार आत्मा कहा गया है। क्योंकि द्रव्यों के 'अस्तिकाय' स्वरूप में ज्ञान के अंश होते हैं, इसलिये पुद्गलास्तिकाय में भी ज्ञान के अंश हैं और पुद्गलास्तिकाय के पार्टिकल स्वरूप में भी ज्ञान है। जिवास्तिकाय केवल ज्ञान है, ज्ञान के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। पुद्गलस्तिकाय का मूल द्रव्य पुद्गल है जो जड़ है परंतु अस्तिकाय रूप में रहने से अर्थात् अरूपी, अमूर्त क्वांटम फील्ड

होने से, ज्ञान युक्त है। यही अवधारणा जर्मन दार्शनिक लेबनिज की है और वर्तमान में विज्ञान की भी है और हमारी दृष्टि से जैन दर्शन की भी है क्योंकि जैनदर्शन में विश्व को 'पंचास्तिकाय' कहा गया है।

तत्वार्थ सूत्र में कहा है- **'उपयोगो लक्षणम् अर्थात् आत्मा का लक्षण 'उपयोग' है जो आत्मा की ज्ञान प्राप्ति की क्षमता है। आत्मा के ज्ञान, दर्शन, चरित्र, तप, वीर्य आदि गुण पुद्गल शरीर में दिखाई देते हैं अन्यथा 'उपयोग शक्ति' के रूप में वे जिवास्तिकाय में सुप्त अवस्था में रहते हैं।**

5. जैन दर्शन तथा विज्ञान में बायोसेन्ट्रिजम की अवधारणा

जीव अनादि, शाश्वत है और वह मूलतः अस्तिकाय है। इस जैन अवधारणा का वैज्ञानिक स्वरूप बायोसेन्ट्रिजम् का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार द्रव्य अथवा पदार्थ के अस्तित्व का आभास केवल सजीव प्राणियों को होता है। अजीव पदार्थों को किसी भी वस्तु के अस्तित्व का आभास नहीं होता। **इस से यह सिद्ध होता है कि यदि विश्व अनादि है तो जीव भी अनादि है। यदि विश्व शाश्वत है, परिवर्तनशील है तो जीव भी शाश्वत और परिवर्तशील है। चूंकि चेतना केवल शरीर में होती है, विश्व का आभास भी केवल जीवित को ही होता है। यह कथन डा. रार्बट लान्जा ने ई.२००५ में किया था, परन्तु इस प्रकार की देसना भगवान महावीर ने २६००पूर्व दी थी।** जीव की दो विशेषताएँ है जो अजीव पदार्थों में नहीं पाई जाती।

(1) आकाश (space) और काल (time) की अनुभूति केवल जीव को होती है। आकाश (Space) कोई ऐसी भौतिक वस्तु नहीं है जिसे हम सूँघ सकें, चख सकें, स्पर्श कर सकें अथवा उसके रंग-रूप को देख सकें। आकाश में ऐसा कोई भी गुण नहीं है जिसके द्वारा हम आकाश का अनुभव कर सकें। तथापि हमें आकाश का आभास होता है, हम उसे नाप सकते हैं, हम उसमें अवगहित द्रव्यों को उनके स्थान के अनुसार देख सकते हैं। यही भाव **प्रवचनसार (ज्ञान तत्वप्रज्ञापनाधिकार)** गाथा 23के हैं। डा. लान्जा के अनुसार भी यह सारा करिश्मा जीव की चेतना का है। **जीव observer है, दृष्टा है और उसकी दृष्टि के अनुसार विश्व का स्वरूप भी बदलता है।** द्रव्यों का मूल स्वरूप 'अस्तिकाय' **(क्वांटम फील्ड)** है जिसे जीव स्पेस टाईम के संदर्भ में मूर्त और रूपी भौतिक आकार में बदलता है। **परमाणु का मूल स्वरूप प्रदेश है जिसे वैज्ञानिक वेवफंक्शन कहते हैं। जीव को स्पेस टाईम के परिपेक्ष्य में वेवफंक्शन एक पार्टिकल के रुप में** दिखाई देता है। अतः जीव ही दृष्टा है, जीव ही कर्ता है और जीव ही भोक्ता है। क्या बायोसेन्ट्रिजम इस आगमिक मान्यता का वैज्ञानिक साक्षात्कार नहीं है?

(2) भूत, वर्तमान और भविष्य में भेद केवल जीवित प्राणी कर पाते हैं। अतः चेतना के विकास के अनुसार विश्व का अर्थात् लोक का स्वरूप बदलता है। **वैज्ञानिक महावीर ने भी यही कहा था कि जो अवधि ज्ञानी है, केवल ज्ञानी है उनका विश्व अन्य प्राणियों भिन्न है।**

वैज्ञानिक मान्यतानुसार विश्व की अर्थात् द्रव्यों की उत्पत्ति लगभग 1370 करोड़ वर्ष पूर्व बिग बैंग नामक ऊर्जा-विस्फोट से हुई थी। बिग बैंग से पहले क्या था? कोई नहीं जानता। वैज्ञानिक

मानते हैं कि बिग बैंग से पहले केवल रिक्त आकाश अथवा (Empty Space) था। किसी भी अन्य द्रव्य, परमाणु काल आदि का अस्तित्व नहीं था। वे सभी आकाश रूप में थे जिसे **व्यॉकुम क्वाटम** फील्ड कहा जाता है। जैन आगमों में आकाश का वर्णन **आकाशस्तिकाय,** पंचास्तिकाय, लोक और अलोक के माध्यम से किया गया है। **व्याकुम क्वॅाटम** फील्ड के लिये 'अस्तिकाय' शब्द का प्रयोग किया गया है।

6. जन्म, मृत्यु तथा पुनर्जन्मः महावीर की दृष्टि से

एक बायोलाजिस्ट की तरह, भगवान महावीर कहते हैं कि संसार में जीव अनन्त प्रकार के हैं परंतु उनके जन्म के केवल तीन विकल्प हैं- गर्भ, समुर्च्छिम तथा उपपात्।[7] देव और नारकीय जीवों का जन्म उपपात क्षेत्र में वैक्रिय शरीर से होता है।[8] अण्डज अर्थात् अण्डे से जन्म लेने वाले, पोताज अर्थात् झिल्ली में लिपटे जीवों का जन्म गर्भ से होता है।[9] इनके अतिरिक्त शेष जीव सम्मूर्च्छिम है-**शेषाणां सम्मूर्च्छिम्।**[10]

तत्वार्थवर्तिका[11] के अनुसार **'शुक्रशोणितयोः गरणादगर्भ'** अर्थात् स्त्री की योनि में शुक्राणु और रज का मिश्रण जो होता है, वह गर्भ है। गर्भ धारण करने की प्राकृतिक पद्धति स्त्री पुरूष का संभोग है। **स्थानांग सूत्र**[12] में गर्भ धारण की पांच कृत्रिम पद्धतियों का भी वर्णन है। इन अप्राकृतिक गर्भ पद्धतियों को वर्तमान समय में (I.V.F) कहा जाता है। एक निश्चित समय के बाद जीव स्थूल शरीर के साथ योनि से बाहर आता है जिसे जन्म कहा जाता है। जैन आगमों में गर्भ विज्ञान अर्थात् (Embryo science) का विस्तृत वर्णन भी दिया गया है।

जैन दर्शन में जीव दो प्रकार के कहे गये हैं-शरीरी और अशरीरी। इन्हें क्रमशः सांसारिक और मुक्त जीव भी कहा जाता है।[13] शरीरी जीव कर्मो से बंधा है और सुख-दुःख, हानि-लाभ, यश-अपयश, जीवन-मरण आदि का अनुभव करता है। संसारी जीव सर्वयोनिक होते है- **'सव्व जोणिया खलु जीवा'**। कर्मों के अनुसार चौरासी लाख योनियों में जीव भ्रमण करता है। लोक में जीव सर्वत्र पाये जाते हैं। जैन धर्म के अनुसार संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ जीव ने जन्म ना लिया हो।

जीव का दूसरा भेद सिद्धात्मा है जो कर्म तथा जन्म-मृत्यु से पूर्णतः मुक्त है। मनुष्य भव से वे सिद्धि पाते हैं और वे पुनः जन्म नहीं लेते। सिद्ध आत्मा एक अमूर्त और अरूपी द्रव्य है जो द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से प्रभावित नहीं होते। वे गंधहीन, शब्दहीन, रसहीन, वर्णहीन, स्पर्शहीन और लिंगहीन हैं।

जैन आगमों में कहा है कि प्रत्येक जीव के साथ आयुष्य कर्म बंधे हैं। आयुष्य समाप्त होने पर जीव अपने स्थूल शरीर को त्याग देता है जिसे मृत्यु कहा जाता है। जिसने जन्म लिया उसकी मृत्यु अटल है। मृत्यु शरीर की होती है, आत्मा की नहीं। मृत्यु के समय आत्मा पूर्व शरीर के संस्कारों के साथ अर्थात् कार्मण शरीर के साथ शरीर से बाहर आ जाता है। एक से चार 'समय' में वह नये जन्म स्थान पर पहुँच कर कार्मण शरीर के अनुरूप नये स्थूल शरीर की रचना करता है। इस प्रक्रिया को पुनर्जन्म कहा है। अपने कृत कर्मों को भोगने के लिये और कर्मो से मुक्ति पाने के लिए जीव अनेक बार जन्म लेता है।

जैन धर्म की मान्यता है कि अनादि काल से आत्मा कर्मो से बंधा है अर्थात् अनादि काल से आत्मा सशरीरी है। शरीर तीन प्रकार के हैं- औदारिक, कार्मण और तेजस्। इन तीनों शरीरों से

मुक्ति होने पर आत्मा को मोक्ष प्राप्ति होती है। मृत्यु पर आत्मा से औदारिक शरीर छूट जाता है। परंतु कार्मण और तेजस् शरीर उसके साथ ही रहते हैं। संयम, तप, साधना आदि धार्मिक क्रियाओं द्वारा इन दो शरीरों से मुक्ति पाई जाती है।

वह कौन सी प्रक्रिया है जिसके द्वारा अरूपी, अमूर्त आत्मा रूपी और मूर्त शरीर धारण करता है। भगवान महावीर ने सम्पूर्ण शरीर विज्ञान का कथन किया है जिसका सारांश है कि गर्भ के माध्यम से उसे औदारिक शरीर मिलता है। कर्म यद्यपि रूपी और मूर्त है तथापि वे पौदगलिक है अर्थात् उनका मूल स्वरूप 'पुदगलस्तिकाय' अर्थात् असंख्यात प्रदेशों का है। **अतः जीव के कार्मण और तेजस शरीर, 'प्रदेश-प्रदेश' बंध का रिजष्ट है। जीव के अच्छे-बुरे कर्म आत्म प्रदेशों में बंध जाते हैं और पूर्व जन्म के संस्कार, जाति, गोत्र, आदि कार्मण शरीर के रूप में सुरक्षित हो जाते हैं। तीनों शरीर का त्याग ही मोक्ष है।** मोक्ष के पश्चात् अशरीरी जीव 'जिवास्तिकाय' में विलीन हो जाता है जिसमें अनन्त जीव अनादि काल से सिद्ध स्थिति में अवस्थित हैं।

जीव के पुनर्जन्म के प्रति आचार्य कुन्द कुन्द कहते हैं कि यद्यपि जीव निश्चय नय से अनादि और शाश्वत है तथापि पर्यायार्थिक नय से जीव की विद्यमान पर्याय का नाश और अविद्यमान पर्याय का उत्पाद होता है। मनुष्य मर कर देव हुआ, इसका अर्थ है मनुष्य पर्याय का नाश और देव पर्याय का उत्पाद, जो कर्मप्रवृतियों का फल है। नाम कर्म तथा आयु कर्म के क्षय होने पर जीव अन्य निश्चय से अपनी-अपनी लेश्यानुसार अन्य गति और अन्य आयु को प्राप्त होते हैं।[15] यही भाव **पंचास्तिकाय** गाथा 55 में प्रदर्शित हुए हैं-

णेरइयकिरियमणुआ देवा इति णामसंजुदा पयडी।
कुव्वंति सदो णासं असदो भावस्स उप्पाहुं।।

नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव इन नामों से युक्त कर्मप्रकृतियाँ विद्यमान पर्याय का नाश करती हैं और अविद्यमान पर्याय का उत्पाद करती हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि पुनर्जन्म जीव की पर्यायों का परिवर्तन है। समस्त जीव एक के बाद एक शरीर को बदलते रहते हैं। सिद्ध जीव शरीर से रहित है और संसारी जीव भव्य-अभव्य शरीरों से युक्त है।[16] **भगवती सूत्र**[17] में पुनर्जन्म के दो कारण बतलायें हैं–

1. जीव, 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' गुणों से युक्त है अतः उसकी भिन्न-भिन्न पर्यायों का विनाश और उत्पाद होता है।
2. पर्यायों के विनाश और उत्पाद की प्रक्रिया में जीव न तो बढ़ते हैं और न कभी घटते हैं। जीव की कुल संख्या सदा अवस्थित (Fixed) अथवा नियत (Constant) रहती है।

क्योकिं लोक में जीवों की संख्या नियत है, जब किसी प्राणी की मृत्यु होती है तब एक या चार समय के भीतर दूसरे जीव का जन्म होना अनिवार्य है। पुनर्जन्म की जाति, गोत्र, नाम आदि पुर्वजन्म की लेश्या के द्वारा निर्धारित होती है। आगमिक मान्यतानुसार औदारिक शरीर की मृत्यु के बाद, कार्मण शरीर से युक्त जीव नयी पर्याय (शरीर) की खोज करता है। और नयी पर्यायें, उसके पुनर्जन्म की शृंखला है। कार्मण शरीर में पूर्व जन्म के संस्कार, नाम, जाति, आयु आदि बंधे होते हैं। जो उसके भविष्य की कुंडली है।

7. जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्मः विज्ञान की दृष्टि से

जैन धर्म में कर्मो से बंधे आत्मा के परिणमन को जन्म और मृत्यु कहा गया है। इसके विपरीत विज्ञान में शरीर की उत्पत्ति और विनाश के रुप में जन्म और मृत्यु का विश्लेषण किया जाता है। जन्म और मृत्यु की जैन अवधारणा वैज्ञानिक है और इसका कथन उस समय प्रचलित धार्मिक तथा आध्यात्मिक शैली में जीव पर्याय के रुप में किया गया है। इसके विपरित जीव विज्ञान की यात्रा शरीर को अनाटमी अर्थात् अंग-विश्लेषण से प्रारंभ होती है और चेतना, मन, बुद्धि और गर्भ तक पहुँचती है। जैन दर्शन की भांति विज्ञान में भी जन्म की Sexual और Asexual प्रक्रिया की मान्यता है। **विज्ञान की दृष्टि से समूर्च्छिम तथा उपपात जन्म की क्रिया Asexual है, यद्यपि देव तथा नारकीय जीवों के अस्तित्व को विज्ञान में मान्यता नहीं है। वायरस, बैक्टेरिया आदि सूक्ष्म जीव, Cell- mutation आदि समुर्च्छिम तथा उपपात के वर्ग की जन्म प्रक्रिया है।**

गर्भ द्वारा जन्म की प्रक्रिया के प्रति जैनदर्शन और विज्ञान में कोई मतभेद नहीं है। दोनों की मान्यता है कि स्त्री पुरूष के संभोग से स्त्री की योनि में शुक्राणु तथा रज के मिश्रण से गर्भ धारण होता है। जैन अवधारणा के अनुसार सूक्ष्म कार्मण तथा तेजस् शरीर से युक्त आत्मा, गर्भ में प्रवेश करता है। आत्मा की उपस्थिति से भ्रूण में प्राण और जीवन का आगमन होता है। स्वाभाविक प्रश्न है कि आत्मा योनि में कैसे और कहां से प्रवेश करता है? आगमिक मान्यता है कि पूर्व जन्म के शरीर को त्यागकर आत्मा चार समय के भीतर नये जन्म स्थान पर पहुंच जाता है और गर्भ में प्रवेश कर भ्रूण रचना करता है। क्या इसका अर्थ यह है कि कार्मण शरीर धारी आत्मा आकाश मार्ग से योनि में प्रवेश करता है? जैनाचार्य तथा जैन दार्शनिकों का विचार है कि जीव की मृत्यु होने पर आत्मा शरीर से

गति प्राप्त कर उर्ध्व गति से लोक के अग्र भाग की ओर प्रस्थान करता है। यदि आत्मा कर्म मुक्त है तो वह एक समय में लोक के अग्रस्थान पर पहुँच जाता है। कर्म बंध आत्मा की गति वक्र हो जाती है और वह चार समय के भीतर अपने नये जन्म स्थान पर पहुंच जाता है। विज्ञान इन विचारों से सहमत नही है।

जीव वैज्ञानिकों के अनुसार शुक्राणु (Sperm) और रज (Egg) दोनों ही सूक्ष्म जीव हैं जिनके मिलन से अथवा फ्युजन से नये जीव की उत्पत्ति होती है। यही जीव से जीव की उत्पत्ति का सिध्दान्त है। 'स्पर्म' और 'एग में डी.एन.ए (D.N.A)' नामक तत्व होता है जिसे वैज्ञानिक जीव-तत्व मानते हैं। डी.एन.ए में पैतृक गुण जेनेटिक कोड के रूप में अंकित रहते हैं। इस प्रकार माता पिता के अच्छे बुरे संस्कार उनके डी.एन.ए के माध्यम से उनकी संतानों में आते हैं। संतानों में पितृदोष और मातृदोष भी डी एन ए द्वारा आते हैं। संतान को अपने जीवन में इन दोषों का तथा स्वयं के कर्मों का फल भोगना पड़ता है। यदि ऐसा नहीं हुआ तो ये दोष उनकी संतानों में आते हैं। विज्ञान के अनुसार जेनेटिक कोड की आयुष्य 3000 वर्षों तक की हो सकती है। इस प्रकार विज्ञान के अनुसार जीव आकाश मार्ग से योनि में प्रवेश नही करता अपितु जीव का प्रवेश (D.N.A) के रूप में होता है। डी.एन.ए एक रासायनिक पदार्थ है जो अजीव है। परंतु शुक्राणु तथा रज में वह जीवित है। आगमों में भी शुक्राणु तथा रज के मिश्रण से ही भ्रूण की उत्पत्ति मानी गई है। ज्ञात रहे, कर्मों से मुक्त जीव एक शुद्ध तत्व है जिसमें डी.एन.ए जैसी जीवोत्पति की क्षमता नहीं है।

मृत्यु के प्रति भी जैन-दर्शन तथा विज्ञान में मतभेद है। जैन अवधारणा के अनुसार मृत्यु के पश्चात् आत्मा शरीर को छोड़ देती है। जब तक शरीर में प्राण है तब तक शरीर में आत्मा है। विज्ञान में उष्णता अथवा Calories को जीवन शक्ति माना गया है। शरीर

के एक अथवा एक से अधिक अंग जब कार्य करना बंद कर देते हैं तब शरीर में आवश्यक उष्णता नहीं बनती। उष्णता के अभाव में शरीर की एनट्रोपी बढ़ती है और टिश्यु के मालेक्युल बिखरने लगते हैं जिससे प्राणी की मृत्यु हो जाती है। मृत्यु होने पर भी शरीर के अनेक अंग, रक्त-कोशिका आदि जीवित रहते हैं, परंतु शरीर शीतल और अचेतन हो जाता है। उष्णता और चेतना दोनों ही मूल रूप से विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा है।

वैज्ञानिक मानते हैं कि मृत्यु जीव का अन्त नहीं है, अपितु जीवों की संख्या को नियंत्रित करने की एक प्राकृतिक विधि है। विज्ञान के परिप्रेक्ष में यह भी कह सकते हैं कि 'कर्म' संस्कार अथवा जेनेटिक कोड़ है और कार्मण, शरीर जीन (Gene) है। **वैज्ञानिक पुनर्जन्म के आध्यात्मिक स्वरूप को स्वीकार नहीं करते क्योंकि वह नियति, भाग्य, कर्म आदि पर आधारित है। वे चेतन तत्व को आत्मा के रूप में भी स्वीकार नहीं करते। यद्यपि बायेसेन्ट्रीजम द्वारा चेतना की खोज को नयी दिशा मिली है तथापि इसे अभी वैज्ञानिक स्वीकृति नहीं मिली है।**

वैज्ञानिक दृष्टि से आत्मा मूलतः एनर्जी है। एनर्जी की न उत्पत्ति होती है और न ही मृत्यु, एनर्जी में केवल परिवर्तन होते हैं। एनर्जी अरूपी और अमूर्त दृव्य है। एनर्जी का रूपी और मूर्त (Physical form) स्वरूप मैटर है। दोनों में $E = mc^2$ का संबंध है, जहां पर E, M और C, क्रमशः एनर्जी, मास और प्रकाश गति के सांकेतिक चिन्ह् हैं। इस प्रकार मैटर, तथा सभी प्रकार के जीव और अजीव पदार्थ, एनर्जी के भिन्न-भिन्न रूप हैं।

परमाणु (Atom) शुद्ध एनर्जी है परंतु आकाश क्षेत्र में अर्थात् गुरूत्वाकर्षण के क्षेत्र में परमाणु में भार का आभास होता है। वास्तवतः 99.99% परमाणु आकाश द्रव्य से भरा है और केवल 0.001% भाग न्युट्रॉन, प्रोटान आदि उर्जा कणों से भरा है। परमाणु

का बाहरी सतह (Surface) नहीं है। परमाणु इलेक्ट्रॉन से बने एक सूक्ष्म बादल की तरह है जिसे इलेक्ट्रॉन क्लाउड (Electron cloud) कहा जाता है। उसे वैज्ञानिक वेव-फंक्शन (Wave Function) द्वारा और जैन श्रमण प्रदेश द्वारा प्रस्तुत करते हैं।

8. महावीर तथा डार्विन की दृष्टि से जीव तथा शरीर का क्रम विकास

जीव की उत्पत्ति कब, कैसे और कहाँ हुई? जीव की कितनी जातियां हैं? जीवों में भिन्नता क्यों है? भिन्न-भिन्न जाति के जीव एक साथ उत्पन्न हुए थे अथवा भिन्न- भिन्न समय पर उत्पन्न हुए थे? भगवान महावीर ने इन प्रश्नों का जो समाधान दिया वही आधुनिक विज्ञान की भी अवधारणा है। सर्वप्रथम सर्वज्ञ देव ने कहा कि जीवोत्पत्ति तथा जीवों की विविधता ईश्वरीय कार्य नहीं है। लोक में जीव सर्वत्र पाए जाते हैं। द्रव्य की दृष्टि से जीव एक शाश्वत तत्व है जो नाना प्रकार के पुदग्‌ल शरीर धारण करता है[18]। क्षेत्र की दृष्टि से संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां जीव ने जन्म न लिया हो[19]। काल की दृष्टि से अवसर्पिणी और उतसर्पिणी और समस्त समयावली में जीव की उत्पत्ति हुई है[20]। भाव की दृष्टि से जीव ने चौरासी लाख योनियों में जन्म लिया है[21]। नाम कर्म तथा आयुकर्म के कारण जीव, नरक, तिर्यंच, मनुष्य तथा देव गति में भ्रमण करता है। मनुष्य जन्म अत्यंत दुर्लभ है। मनुष्य जन्म से पहले न जाने जीव ने कितनी योनियों में जन्म लिया है[22]। जन्म मृत्यु और पुनर्जन्म के मुख्य पहलु इस प्रकार हैं-

1. सिद्ध हो या मानव, देव हो या दानव, तिर्यंच हो या वनस्पति, एकेन्द्रिय हो या पंचेन्द्रिय, त्रस हो या स्थावर, सभी जीवों में चेतना के रूप में जीव तत्व पाया जाता है

जो अनादि और शाश्वत है। जीव तत्व का न जन्म होता है और न ही विनाश होता है[23]।

2. अनादि काल से कार्मण परमाणु जीव के साथ बंधे हैं जिसे जीव का सूक्ष्म कार्मण शरीर कहा जाता है। **कार्मण शरीर जीव के कर्मों की डायरी है।** विज्ञान की दृष्टि से कार्मण शरीर एक प्रकार का जेनेटिक कोड है।
3. कार्मण शरीर से युक्त जीव, गर्भ में प्रवेश कर औदारिक शरीर धारण करता है[24]। शरीर में इन्द्रियां उत्पन्न होती हैं। इन्द्रियों से राग, द्वेष, कषाय उत्पन्न होते हैं और कषाय के कारण जीव भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्मण तथा औदारिक शरीर धारण करता है अर्थात् जीव संसार में भिन्न-भिन्न राशियों में भ्रमण करता है। इस प्रकार शरीर की भिन्नता वास्तवत: कार्मण शरीर की भिन्नता है।
4. शरीरधारी जीव की प्रथम दशा एकेन्द्रिय निगोध है और अंतिम दशा सिद्ध, परमात्मा अथवा ईश्वर है। इन दो दशाओं के मध्य अनेक प्रकार के द्रीन्द्रिय, त्रीन्द्रिया, चतुर्न्द्रिय, तथा पंचेन्द्रिय जीव पाये जाते हैं।
5. जीवद्वारा औदारिक शरीर (Muscular body) धारण करने की प्रक्रिया, जीव का जन्म कहलाता है और औदारिक शरीर को त्यागने की प्रक्रिया जीव की मृत्यु कहलाता है। 'जन्म-मृत्यु' की इस प्रक्रिया में जीव तत्व अथवा आत्मा शाश्वत रहता है।
6. शरीर में एक से लगाकर पांच तक ज्ञानेन्द्रियां होती हैं। एकेन्द्रिय जीव में चेतना का स्तर निकृष्ट है और इन्द्रियों की वृद्धि के साथ चेतना एवं ज्ञान की भी वृद्धि होती है। जिन जीवों में मन और बुद्धि का अभाव है वे जीव स्वयं

तथा पर में भेद नहीं कर सकते, ऐसे जीव अभव्य जीव कहलाते हैं जिन्हे मोक्ष प्राप्त नही होता। मनुष्य सर्वाधिक विकसित पंचेन्द्रिय जीव है, जिसमें मन, बुद्धि और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं जिनके द्वारा वह केवलज्ञान प्राप्त कर सकता है।

7. एकेन्द्रिय जीव स्व-प्रयासों से मन और बुद्धि का विकास करते हुए मनुष्य भव को प्राप्त होता है। **सूत्र कृतांग सूत्र**[25] में स्पष्ट शब्दों में कहा है कि **जीव के मनुष्य जन्म प्राप्त करने से पहले निगोद व एकेन्द्रिय जीव ने बोध प्राप्त हेतु द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय तक विकास किया तथापि उसे अपने आत्म-स्वरूप का बोध नहीं हुआ। अतः उसने तिर्यंच पंचेन्द्रिय में जन्म ग्रहण किया परंतु द्रव्य-मन नहीं होने से वह स्पष्ट विचार नही कर सकता था। अतः असीम पुण्य कर्म एकत्रित होने पर उसे मनुष्य जन्म प्राप्त हुआ।** अनार्य क्षेत्र, अनार्य कुल, हिंसक वातावरण की प्रतिकूलता के कारण वश और वस्तुओं के प्रति मोह, ममत्व के कारण उसे आत्म-बोध में कठिनाई होती है।

8. मनुष्य जन्म मिला, उत्तम शरीर मिला, आर्यक्षेत्र, आर्यकुल, स्वस्थ इन्द्रियां, तन-मन-धन मिला तो भी आत्म बोध अत्यंत दुर्लभ है। इसी बोध को प्राप्त कर संपूर्ण कर्मों की निर्जरा कर आत्मा शुद्ध, बुध्द्, निराकार अविनाशी, अनन्त, ज्ञान-दर्शन-सुख-विर्य-सम्पन्न परमात्मा बन सकता है।

आध्यात्मिक शैली में प्रस्तुत भगवान महावीर के उपरोक्त सिद्धातों में जीव विज्ञान लाईफ सायन्स, जिनोमिक्स तथा फिजिक्स के अनेक सिध्द्रान्तों का समागम है। पुरुषार्थ द्वारा एकेन्द्रिय जीव का पंचेन्द्रिय जीव तथा मनुष्य भव तक के क्रम विकास के जैन

सिद्धान्त के समान डार्विन नामक वैज्ञानिक ने ई.स. 1871 में Biological Evolution[26] का सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। दोनों सिद्धान्तों में बहुत अधिक समानता है। जैन अवधारणानुसार जीव के शरीर विकास का उद्देश्य 'ज्ञानोन्द्रिय का विकास तथा आत्म ज्ञान में वृद्धि करना है। इसके विपरीत डार्विन मानते हैं कि 'जीव सभी प्रकार के अनुकूल और प्रतिकूल वातावरण में जीवित रहना चाहता है। जीवित रहने के लिए वह पुरूषार्थ (Struggle) द्वारा अपने शरीर तथा अंगों में परिवर्तन करता है। अतः डार्विन के सिद्धान्त को (Survival of the fittest) का सिद्धान्त भी कहा जाता है।

9. Spiritual Evolution के परिपेक्ष्य में आत्म-विकास तथा मोक्ष की अवधारणा

जैन मान्यतानुसार सभी जीव मोक्ष-गमन के इच्छुक हैं। जिन जीवों में मोक्ष-गमन की योग्यता है वे भव्य जीव कहलाते हैं। जिनमें यह योग्यता नहीं है, वे अभव्य जीव हैं[27]। मनुष्य, देव, नारक आदि में बुद्धि और मन का विकास हुआ है। ऐसे जीव समनस्क कहलाते है। जिनमें बुद्धि और मन का विकास आंशिक अथवा गौण है, वे अमनस्क जीव हैं[28]। निगोद जैसे अभव्य जीव मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते क्योंकि उनमें अन्य ज्ञानेन्द्रिय नहीं है। उन्हें आत्म ज्ञान नहीं होता। अतः एकेन्द्रिय जीव जिनमें केवल स्पर्शन्द्रिय है, स्वः प्रयास से सर्वप्रथम रसेन्द्रिय का विकास करते हैं। जिव्हा का विकास हो गया तो जीव आहार-प्राप्त हेतु घ्राणेन्द्रिय का विकास करते हैं। घ्राणेन्द्रिय के पश्चात् कर्णेन्द्रिय और वाणी का विकास होता है। घ्राणेन्द्रिय से प्राणी अपने आहार तक पहुँचने के प्रयासों में त्रस जीव बन जाता है। जीव ने तत्पश्चात् श्रोतेन्द्रिय प्राप्त किये जिससे ज्ञान प्रसारण सुविधा जनक बन गया।

डार्विन नामक वैज्ञानिक ने शरीर विकास को ई. सन् 1870 में वैज्ञानिक पद्धति से प्रस्तुत किया। दोनों प्रस्तुति में भेद केवल विकास के उद्देश्य के प्रति है, विकास की प्रक्रिया के प्रति नही। इसके अतिरिक्त विकास क्रिया के आंरभ के प्रति भी भेद है। जैन अवधारणा के अनुसार जीव के विकास की यात्रा 'एकेन्द्रिय' जीव से आरंभ होती है, परंतु वैज्ञानिकों के अनुसार जीव उत्पत्ति तथा विकास का आरम्भ स्पेस टाईम के क्षेत्र से होता है।

जैन और बौद्ध धर्म के अतिरिक्त संसार के लगभग सभी धर्म और दर्शन, ईश्वर और मनुष्य के मध्य 'स्वामि और सेवक' का संबंध मानते हैं। बौद्ध धर्म 'क्षणिक वादी' है। अतः उनकी दृष्टि में ईश्वर, आत्मा, मनुष्य तथा किसी भी वस्तु अथवा तत्व का शाश्वत अस्तित्व नहीं है। जैन दर्शन के विचार इन सभी से भिन्न हैं। जैन धर्म के अनुसार ईश्वर एक शुद्ध आत्मा है और मनुष्य अशुद्ध आत्मा है जो शुद्ध होने पर ईश्वर बन सकता है। **भगवती सूत्र** में कहा है **'एगो आया अनेको आया'** अर्थात् आत्मा एक है और अनेक भी है। शरीर से युक्त आत्माएँ अनेक हैं परंतु शरीर मुक्त आत्माएँ द्रव्य रुप हैं और वे सभी परमात्मा हैं। परमात्मा सृष्टि का निर्माता नहीं है। भाग्य विधाता नहीं है, सुख-दुःख और जन्म-मृत्यु का कारण भी नहीं है। वह एक ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग और चेतनापयोग से युक्त अविनाशी, शाश्वत, अरूपी अमूर्त शुद्ध तत्व है।

जैन शास्त्रों का कथन है कि मनुष्य संसार का सर्वाधिक विकसित जीव है जिसमें परमात्मा तक विकास करने के योग्य सभी साधन, ज्ञान तथा योग्यता है।

पंचेन्द्रिय जीवों में केवल मनुष्य, ज्ञान प्राप्ति के सभी साधनों से परिपूर्ण है। वह इंद्रिय तथा अतीन्द्रिय दोनों प्रकार से

ज्ञान प्राप्त कर सकता है। मनुष्य भव में जीव को पांच ज्ञानेन्द्रियाँ प्राप्त हैं और वह तप, साधना, संयम द्वारा छठे ज्ञानेन्द्रिय (Sixth sense) अर्थात् अतीन्द्रिय अवधि ज्ञान (Intuition) का विकास कर सकता है। पांच इन्द्रियां और दस प्राणों से युक्त तेरहवें गुण स्थान का मनुष्य अरिहंत कहलाता है[29]। रोग, दुःख, आहार, निद्रा, जरा, पसीना तथा दुर्गन्ध आदि दोषों से अरिहंत देव मुक्त रहते है[30]। उनके 10 प्राण, 6 पर्याप्तियां, और 1008 लक्षण होते हैं। सर्वांग में गोदुग्ध और शंख के समान शुभ्र, मांस और रूधिर है[31] इस प्रकार समस्त अतिशयों से युक्त, अत्यंत सुगंधित औदारिक शरीर अरहंतो का होता है[32]। औदारिक शरीर त्यागकर अरिहंत ज्ञान के सर्वोच्च शिखर अर्थात् 'केवल ज्ञान' और चौदहवें गुणस्थान के साथ सिद्ध, बुद्ध, परमात्मा रूप में लोक के अग्रस्थान पर स्थित हो जाते हैं। **भगवती सूत्र** में सिद्धि के मार्ग के प्रति कहा है-

सवणे णाणे य वि णाणे, पच्चक्खाणों य संजमे
अणव्ह मे तवेचेव बोदान अकिरिया सिद्धि

भगवती सूत्र 2/5

अर्थात् धर्म श्रवण से तत्व ज्ञान, तत्व ज्ञान से विज्ञान, विज्ञान से प्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान से संयम, संयम से अनास्रव, अनास्रव से तप, तप से निर्जरा, निर्जरा से निष्कर्मता, और निष्कर्मता से सिद्धि प्राप्त होती है।

जीव अज्ञानतावश जिस प्रकार के कार्य करता है, उन्हें भोगने के लिये उसी प्रकार के शरीर धारण करता है। जिस प्रकार जीव कर्म बंध में फंस जाता है उसी प्रकार उनसे मुक्त भी हो जाता है[33]। शास्त्रकार कहते हैं सर्वप्रथम बंध को समझो और समझकर फिर उसे तोड़ो[34]। बंध व्यक्तिविशेष होता है। अतः आत्मा

और बंध के स्वभाव को जानकर जो जीव बंधो से विमुक्त होता है, वह मोक्ष को प्राप्त होता है[35]। आत्मा और बन्ध पृथक-पृथक कैसे किये जाते है? आचार्य कुन्द कुन्द[36] कहते है आत्मा और कर्म, बुद्धि रूपी (ज्ञान रूपी) छैनी से विभक्त होते हैं। इस प्रकार जीव का क्रम विकास एकेन्द्रिय जीव से पंचेन्द्रिय जीव और मनुष्य तक शरीर विकास अर्थात् बायलाजिकल एवल्युशन द्वारा होता है। तत्पश्चात् मनुष्य ज्ञान, तप, साधना और संयम द्वारा सभी कर्मों का अर्थात् सभी प्रकार के पुद्गल शरीर का त्याग कर जीव को शरीर से मुक्त करता हैं जो चेतना की शुद्ध ज्ञानमय अवस्था है, जिसे जैन आगम केवल ज्ञान कहते हैं।

पाश्चात्य जगत मोक्ष, निर्वाण आदि में विश्वास नहीं करता, केवल वर्तमान में जीने की शिक्षा देता है। गत कुछ वर्षो से पाश्चात्य जगत में भी आध्यात्मिक जागृति हो रही है और कोहेन अण्ड्रयुज जैसे दार्शनिक कह रहे हैं कि ''केवल वर्तमान में जीना ही मनुष्य का उद्देश्य नहीं है, अपितु वर्तमान में रहते हुए उत्तम भविष्य का निर्माण करना भी आवश्यक है। जो विकास वर्तमान में संभव नहीं है, वह भविष्य में संभव हो जाएगा। बायलोजिकल एवल्युशन की अगली कडी स्पिरिच्युअल एवल्युशन (Spiritual Evolution) है अर्थात् मनुष्य से परमात्मा तक विकास है।''

जीव क्रम विकास का अंतिम लक्ष्य 'परमात्मा' है। जैन दर्शन के अनुसार आरंभ एकेद्रिय जीव से होता है। और डार्विन तथा अन्य पाश्चात्य दार्शनिकों के अनुसार इसकी प्रारंभिक दशा बिग बैंग है। इस पाश्चात्य अवधारणानुसार Matter emerged from nothing and from the dead matter emerged life and from the life emerged the mind by the evolutionary processes अर्थात् शून्य आकाश से द्रव्य की उत्पत्ति हुई। अजीव द्रव्य में जीव की उत्पत्ति हुई और जीव से मन का विकास हुआ।

अजीव द्रव्य से जीव की उत्पत्ति कैसे हुई? यह वैज्ञानिक नहीं जानते। वे केवल इतना जानते हैं कि जिस प्रकार उचित वातावरण में बीज अंकुरित हो जाता है, उसी प्रकार अमिनो एसिड उचित वातावरण में जीवन की आवश्यक क्रियाएँ करने लगता है। इस विषय पर विज्ञान जगत में अभी शोधकार्य चल रहा है।

10. उपसंहार

जैन आगमों में (Cosmic Womb) अर्थात् ब्रह्माण्ड के गर्भ का उल्लेख नहीं है परंतु यह कहा गया है कि अलोक बिना लोक का अस्तित्व नहीं है। वैज्ञानिक कहते हैं कि Universe has cosmic origin and not the Devine origin अर्थात् विश्व की उत्पत्ति आकाश में हुई है। वह ईश्वर द्वारा निर्मित नहीं है। भगवान महावीर का भी यही संदेश है। विश्व उत्पत्ति की दृष्टि से जैन दर्शन और विज्ञान में एक महत्वपूर्ण भेद है। जैन दृष्टि से द्रव्य की अपेक्षा विश्व अनादि और शाश्वत है अर्थात् जीव और अजीव द्रव्य अनादि है। विज्ञान के अनुसार रिक्त आकाश में बैंग नामक विस्फोट द्वारा अजीव द्रव्यों की उत्पत्ति हुई। एवल्युशन की प्रक्रिया से कुछ अजीव परमाणु ऐसे स्कन्ध बनाने में सफल हो गये जिनमें उचित वातावरण में जीवन क्रिया प्रारंभ हो गयी। यह उपपात गर्भ प्रक्रिया के समान है जिसके द्वारा देवों का जन्म होता है।

वैज्ञानिक यह नहीं जानते कि बिग बैंग के पहले क्या था? भगवान महावीर कहते हैं सबसे पहले आकाशास्तिकाय था और उसमें पाँच द्रव्य 'पंचस्तिकाय' के रूप में अवस्थित थे जिसका अनुभव जीव को धर्म, अधर्म, आकाश, जीव और पुद्‌गल के रूप में होता है। इस अवधारणा का वैज्ञानिक अब 'बायोसेन्ट्रिजम' की दृष्टि से अध्ययन कर रहे हैं। चूंकि वैज्ञानिक यह नहीं जानते कि

प्राणियों में चेतना की उत्पत्ति कैसे हुई, वे 'बायोसेन्ट्रिजम' के द्वारा इस गुत्थी को सुलझाने का प्रयास कर रहे हैं।

जीव विज्ञान के अनुसार दो प्रकार के जीव तत्व होते है- R.N.A और D.N.A। निगोध, वायरस, वनस्पति आदि जीवों में R.N.A होता है। D.N.A युक्त जीवों में बुद्धि और मन का विकास होता हैं जो जैन दर्शन के अनुसार संयम, तप, साधना, और मोक्ष के लिये आवश्यक है। अतः R.N.A युक्त जीवों को अभव्य और D.N.A। युक्त जीवों को भव्य जीव-कहा जा सकता है। **जीव के क्रम विकास में R.N.A का सर्वप्रथम D.N.A में परिवर्तन होता है। अर्थात् अभव्य जीव भव्य जीव राशि में प्रवेश करते हैं और तत्पश्चात् ज्ञानेन्द्रियों का विकास करते हुए मनुष्य भव को प्राप्त होते हैं। D.N.A के विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि पृथ्वी पर लगभग एक लाख बीस हजार वर्ष पूर्व पुरुष का उदय हुआ और उसके लगभग पचास हजार वर्ष पश्चात स्त्री का जन्म हुआ। इसके पूर्व कदाचित जीव की उत्पत्ति युगलिये के रुप में हुई होगी जैसा कि जैन आगमों में लिखा गया है।** मनुष्य भव में शरीर के कारण ज्ञान सीमित रहता है। सभी प्रकार के सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर के छूट जाने पर ज्ञान असीम हो जाता है जिसे केवल ज्ञान कहा गया है। केवल ज्ञान की अवस्था ही सिद्ध, बुद्ध परमात्मा की अवस्था है।

मोक्ष क्या है? मोक्ष जीवित अवस्था में प्राप्त होता है अथवा मृत्यु के पश्चात? जैन धर्म के अनुसार मोक्ष स्वर्ग प्राप्ति अथवा ईश्वर प्राप्ति नहीं है। केवल ज्ञान की अवस्था मोक्ष है। हमारा शरीर ज्ञान प्राप्ति का साधन है। अतः मोक्ष जिवित अवस्था में प्राप्त होता है। केवल ज्ञानि अघाति कर्मों का क्षय होने पर शरीर त्यागकर सिद्ध बन जाते हैं।

11. संदर्भ सूची

1. समयसार, गाथा 170
2. समयसार, गाथा 171
3. Biocentrism: How life and consciousness are the keys to understand the nature of the universe, Robert lanza & Bob Berman 2007
4. ज्ञाताधर्म कथा, सूत्र 1/2
5. समयसार, गाथा 13
6. समयसार, गाथा 27
7. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 2,सूत्र 31
8. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 2,सूत्र 34
9. दशवैकालिक सूत्र अध्याय 4
10. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 2, सूत्र 35
11. तत्वार्थ वर्तिका, अ–2/31
12. स्थानांग सूत्र, 5/103
13. उत्तराध्यायन सूत्र अध्याय 36 सूत्र 49
14. सर्वार्थ सिद्धी, 2/10/165
15. पंचास्तिकाय, गाथा 119
16. पंचास्तिकाय, गाथा, 120
17. भगवती सूत्र 578
18. अष्टपाहुड (बारसणुवेक्खा), गाथा 35
19. वही, गाथा 26
20. वही, गाथा 27
21. वही, गाथा 35

22. उतराध्यायन सूत्र, अध्याय 3, गाथा 1, 2, 3

23. पंचस्तिकाय, गाथा 19

24. वही, गाथा 128–130

25. सूत्र कृतांग सूत्रः प्रथम अध्याय, प्रथम उद्देशक, प्रथम सूत्र

26. The origin of life: Haldane & Operin

27. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 2, सूत्र 7

28. वही, सूत्र 11

29. बोधपाहुड, गाथा 35

30. वही, गाथा 36

31. वही, गाथा 37

32. वही, गाथा 38

33. औपपातिक सूत्र, गाथा 34

34. सूत्र कृतांग सूत्र 17/1/1

35. समयसार, गाथा 293

36. वही, गाथा 294

अध्याय 7

जैन आगमों में क्वांटम फील्ड थ्यौरी तथा क्वांटम फिजिक्स

Jain Concepts of Quantum Field & Quantum Phenomena

विषय अनुक्रमणिका

विषय	पेज न.
महावीर का परमाणु विज्ञान–कविता	215
Abstract	217
1. प्रस्तावना	221
2. द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरुप एवं क्वांटम फील्ड	225
3. द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप एवं क्वांटम फील्ड थ्यौरी का तुलनात्मक अध्ययन	233
4. परमाणु के गुण, लक्षण और कार्य	235
5. परमाणु, एटम और क्वांटा में तुलना	243
6. जैन दर्शन, गाड पार्टिकल और थ्योरी आफ एवरिथिंग	245
7. उपसंहार	247
8. संदर्भ सूची	248

महावीर का परमाणु विज्ञान

परमाणु का स्वरुप और उससे पदार्थ कैसे बनते
***Quantum Physics** की चर्चा पढ़लो उत्सुकता से पृष्ठ उलटते*

उर्जा और पदार्थ की भागीदारी जिन नियमों से होती
उन्हें जान लो, समझो क्यों चेतना अस्तिकाय होती

***Isotop** और महास्कन्ध के सहित गति परमाणु की*
इन पृष्ठों में हुई है तुलना एटम-क्वांटा-परमाणु की

***Molecule** क्यों और कैसे बनते, **Binding Energy** होती है क्या*
***Compression - Diffusion** दोनों द्रव्य की परिणमन प्रक्रिया*

***Theory of Everything** में, कार्मण शरीर को जानोगे*
महावीर क्वांटम वैज्ञानिक थे, इस अध्याय को पढ़कर मानोगे

ABSTRACT

Quantum physics is the Science of atoms and atomic wave functions. According to Einstein's theory of Relativity, the cosmic space is an infinite gravity field having dimensions in Space and Time. More than 97% of the space is empty and contains dark mass and dark energy. On the other hand quantum physicists say that space is a dynamic seat of nature due to the presence of quantum field. There is a disconnect between these two theories. Therefore the scientists proposed a link between the two though space particle called Higgs Boson, God Particle or Plank Length. This particle is supposed to impart mass to other fundamental particles by sticking on it like molasses. Presence of Higg's Boson or God Particle was experimentally established in the year 2012 for which Higgs and two other scientists received Nobel prize for the year 2013.

Several Centuries ago Mahavir made the same declaration namely that of space time continuum (Alok) and also the Quantum nature of Space. His language was religious and spiritual. His contemporary saints could hardly appreciate the significance of his declaration. Mahavir said the cosmic space is an infinite gravitation field (Avagahan Guna Dravya). He addressed it as Akashastikaya. It is made of infinite numbers of atomic size 'Akash Pradesha' what the scientists today call as Higg's Boson or God Particle. He further said the infinite space is empty but a small portion

of its contains five distinct quantum fields which make the visible universe. He called this universe as Panchastikaya. He said the Panchastikaya is made of five distinct quantum fields which appear as five distinct Substances namely- Akash, Dharma, Adharma, Jiva and Ajiva to human consciousness because humans perceive objects in the Space-Time domain.

Quantum physics tells us that small particles do not have definite existence including position and time until observed. Therefore the atom is represented in quantum physics by a Mathematical Wave Function which collapses into reality on observation. The same statement was made by Mahavir in 500 B.C. when he said the Atom is equivalent to one Akash Pradesh or field element. The Akash Pradesh is Similar to Atamic Wave Function. The probability of existence of a particle is called 'Principle of Uncertainty' in Quantum Physics. Its importance can be realized from the fact that this discovery was rewarded Nobel Prize.

Mahavir like a quantum physicist announced that two distinct and seemingly inconsistent elements of reality exist in a Complimentary way. This leads to the conclusion that non- material consciousness could be built in material quantum fields known as the Pauchastikaya which is the primary source of everything physical. **Thus Mahavir also laid the foundation of the quantum field theory.**

We visualize atom as the smallest material particle but in the larger context of cosmic space, it

is Akash Pradesh, an energy element. Even matter is energy which is programmed to behave like matter. Matter and energy are inter convertable. Matter is condensation of energy and energy is sublimation of matter', says Einstein. His formula $E = mc^2$ was existing in the universe long be fore he was born. For all other religions this was a miracle which they called as God. But for Mahavir, it is this universal consciousness (intelligence) built in the Astikaya nature of the matter that brings the order in the Universe. Even in recent times Spinoza called this universal consciousness as God. Thus the mathematical relation $E = mc^2$ is in fact what Mahavir called as Rational Nature of Reality. Matter and energy are thus connected through consciousness or Jivistikaya, which is the integral element of Panchastikaya Lok. In conclusion it is evident that

(1) Akashastikaya represents Vacuum Quantum Field (Space-Time Continuum) of Higgs Field.

(2) Panchastikaya represents Five distinct Material Quantum Fields.

(3) Akash Pradesh is equivalent to Higgs Boson or God particle.

(4) Parmanu Pradesh represents Atomic Wave Function.

जैन आगमों में क्वांटम फील्ड थ्यौरी तथा क्वांटम फिजिक्स

1. प्रस्तावना

परमाणु और परमाणु प्रदेश का विज्ञान वर्तमान समय में क्वांटम फिजिक्स कहलाता है। क्वांटम फिजिक्स का विकास ई. 1890 से 1945 के मध्य में हुआ जिसके फलस्वरूप विज्ञान में आविष्कारों की जो आंधी चली, उसके रुकने की कोई संभावना ही नहीं दिखाई देती। टेलीफोन, सेलफोन, टेलीविजन, कमप्युटर, इंटरनेट, बायोटेक्नालाजी, न्यानोटेक्नालाजी आदि क्वांटम फिजिक्स की देन हैं। क्वांटम फिजिक्स और कमप्युटर की सहायता से वैज्ञानिक ई. सन् 2050 के पश्चात् एक नये युग में प्रवेश करने जा रहे हैं जिसे वे 'क्वांटम और रिस्परिच्युएल मशीन' का युग कहते हैं। **वैज्ञानिकों का विश्वास है कि सन् २०३० तक वे मनुष्य की संपूर्ण चेतना (Consciousness) उसके व्यक्तित्व (Personality) सहित डिजिटल फार्म में कमप्युटर सी.डी. पर रेकार्ड करने में सफल हो जायेंगे। इस सी.डी. को मनुष्यनुमा रोबोट में फिट करने से रोबट, सजीव मनुष्य के सभी कार्य करने के योग्य होगा। इस प्रकार वैज्ञानिकों को पूर्ण विश्वास है कि सन् २०५० तक मनुष्य की आत्मा को प्लास्टिक अथवा धातुओं से बने रोबट में बंद कर वे मनुष्य को अमर बना देंगे।**

ई. सन् 1890 में हर्जबर्ग तथा मैक्स बार्न नामक वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया कि सूर्य प्रकाश, उष्णता, ध्वनि आदि उर्जा का प्रसारण अथवा एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमन, तंरगों (Waves) के रूप में होता है परंतु जब वे एक दूसरे से टकराते

हैं अथवा सम्पर्क में आते हैं तो यह टकराव दो पार्टिकल के टकराव के समान रहता है अर्थात् **गमन के समय एनर्जी वेव रूप में रहती है परंतु इटंरएक्शन के समय वेव, पार्टिकल में रूपांतरित हो जाती है। इसी प्रकार पुद्गल परमाणु में भी गमन करते समय 'वेव' के गुण लक्षण दिखाई देते हैं अर्थात् परमाणु में भी द्रव्य खण्ड और तरंग के गुण होते हैं। वर्तमान वैज्ञानिक अवधारणा के अनुसार 'काल' का द्रव्य रूप में अस्तित्व नहीं है। द्रव्य जिसे मैटर भी कहते हैं मूलतः ऊर्जा ही है। सभी मैटर का मूल स्वरूप एनर्जी फील्ड अथवा क्वांटम फील्ड है। काल एनर्जी नहीं है अतः द्रव्य भी नहीं है।**

ईसा पूर्व की छठी शताब्दी में भगवान महावीर ने जड़-चेतन द्रव्यों के 'अस्तिकाय' स्वरूप की घोषणा की जो वर्तमान समय के 'क्वांटम फील्ड' के समान है। भगवान महावीर ने भी वर्तमान समय के वैज्ञानिकों के अनुसार उद्घोष किया कि केवल पांच द्रव्य अस्तिकाय है और इन्हीं पांच द्रव्यों से लोक बना है[1]। 'काल' अस्तिकाय नहीं है और द्रव्य भी नहीं है। भगवान महावीर ने जिस पुद्गल शब्द का प्रयोग किया है उसमें 'मैटर' की तरह परमाणु और एनर्जी दोनों का समावेश है। महावीर के इन्ही भावों को आईन्स्टाईन ने ई. सन् 1915 में $E=mc^2$ के रुप में प्रस्तुत किया। 'पंचास्तिकाय' विश्व का मूल स्वरूप है जो (निरपेक्ष) सत् है जिसका ज्ञान केवल सर्वज्ञ को होता है। हमारी चेतना (Consciousness) द्रव्यों के 'अस्तिकाय' रूप को ग्रहण नहीं कर सकती। अर्थात हम क्वाटम फिल्ड को नही देख सकते। हम द्रव्यों के 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' गुण के कारण पंचास्तिकाय लोक में होने वाले परिणमन को द्रव्य पर्याय रुप में देख पाते है जो द्रव्यो का पार्टिकल रुप है। व्यवहार नय से उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य ही काल कहलाता है। अतः परिवर्तन अर्थात्

काल के कारण पांच अस्तिकाय द्रव्यों को हम आकाश (खोखला स्थान), धर्म (द्रव्य गति), अधर्म (द्रव्य स्थिति), जीव (सजीव प्राणी) तथा पुद्गल (मैटर) पृथक पृथक रूप में अनुभव करते है[2]। **यह विश्व का 'असत्' (सापेक्ष सत्) रूप है जिसे अन्य धर्म और दर्शन ईश्वर की माया' कहते हैं। इस प्रकार 'काल' मूल द्रव्य नहीं है अपितु जीव की 'ज्ञानोपयोग' शक्ति है जिसके द्वारा संसारी जीव द्रव्यों में भेद कर पाता है और पंचास्तिकाय को पांच भिन्न भिन्न द्रव्यों के रूप में देख पाता है।**

किसी भी अन्य धर्म अथवा दर्शन में विश्व के 'अस्तिकाय' स्वरूप का वर्णन नहीं है। निस्संदेह भगवान महावीर विश्व के प्रथम दार्शनिक हैं जिन्होंने विश्व के अस्तिकाय स्वरुप की घोषणा की और जन्म, मृत्यु, उत्पाद-व्यय, मोक्ष-निर्वाण आदि मानवीय जिज्ञासाओं का समाधान जिवास्तिकाय और पुद्गलस्तिकाय के भिन्न भिन्न प्रकार के बंध के माध्यम से किया। रूक्ष और स्निग्ध स्पर्शों के कारण दो अथवा दो से अधिक परमाणु में प्रदेश 'बंध' होता है जिससे स्कन्ध, महा स्कन्ध तथा विभिन्न प्रकार के जीव अजीव पदार्थ उत्पन्न होते हैं। आगमों में परमाणु और प्रदेश बंध के नियम दिये हैं जो विज्ञान स्वीकृत (Atomic Binding) के नियमों से भिन्न नहीं है। **यह कहना अनुचित नहीं होगा कि जैन आगम क्वांटम फिजिक्स के प्राचीन श्रृत और लिखित रेकार्ड हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से भगवान महावीर ऐसे प्रथम क्वांटम फिजिसिस्ट है जिनका नाम विज्ञान के इतिहास में नहीं लिखा गया क्योंकि उनका विज्ञान आगमों तक ही सीमित रह गया।** 'जंगल में मोर नाचा किसने देखा?' कहावत महावीर के संदर्भ में पूर्णतः सिद्ध होती है।

लगभग सभी धर्म और दर्शन परमाणु के सूक्ष्म, अविभाजित द्रव्य खण्ड के रूप से परिचित हैं परंतु उसके गुण, लक्षण, और

कार्य से वे अपरिचित हैं। **जैन धर्म में परमाणु का चिंतन क्वांटम पार्टिकल और वेव फंक्शन के रूप में हुआ है जिसका वर्णन केवल विज्ञान की पुस्तकों में ही पाया जाता है।** जैन आगमों में उन नियमों और सिद्धातों का वर्णन भी है जिसके अंतर्गत परमाणु द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार के पदार्थों का निर्माण होता है। कुछ प्रमुख नियम इस प्रकार हैं-

1. परमाणु शाश्वत है। उसकी न उत्पत्ति होती है और न ही विनाश होता है।
2. परमाणु द्रव्य खण्ड (पार्टिकल) है और एक प्रदेश (Wave function) भी है।
3. परमाणु में रूक्ष और स्निग्ध स्पर्श (Electric charges) होते हैं जिससे दो अथवा दो से अधिक परमाणु बंध कर स्कन्ध (Molecule) का निर्माण करते हैं।
4. परमाणु में शीत और उष्ण स्पर्श (Quanitised Energy States) होते हैं जिसके कारण प्रकाश, उष्णता, आतम, उद्योत अंधकार आदि की उत्पत्ति होती है।
5. जीव के प्रभाव से परमाणु में और परमाणु के प्रभाव से जीव में परिणमन होते हैं जिन्हें विस्रासित परिणमन कहते हैं और ये परिणमन सजीव सृष्टि के निर्माता हैं। जिन परिणमन में द्रव्यों का 'उत्पाद-व्यव-ध्रौव्य' कारण है और जीव का उनमें योगदान नहीं होता, उनसे अजीव सृष्टि की उत्पत्ति होती है।

उपरोक्त नियम क्वांटम फिजिक्स के भी नियम है। सभी प्रकार के भौतिक, जैविक और रासायनिक परिवर्तनों में परमाणु की सक्रिय भूमिका है। आगमों में इनका वर्णन 'परमाणु-परमाणु 'बंध' (Atomic Binding) अथवा प्रदेश 'बंध' (Binding Energy)

के रूप में किया है जो सिद्ध करते हैं कि जैन श्रमणों को परमाणु विज्ञान अथवा क्वांटम फिजिक्स का गहरा ज्ञान था। **इस अध्याय में जैन परमाणु विज्ञान को कवांटम फिजिक्स के परिप्रेक्ष में प्रस्तुत किया गया है।**

2. द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरुप एवं क्वांटम फील्ड

जैन दर्शन में मैटर और एनर्जी दोनों के लिये पुदग्ल शब्द का प्रयोग किया जाता है। जीव द्रव्य (आत्मा) तथा चेतना (Consciousness) के अतिरिक्त संसार में जो कुछ भी है, वह पुदग्ल है। आचार्य कुन्द कुन्द[3] कहते हैं कि, 'संसार में इन्द्रियों द्वारा जानने और भोगने योग्य सभी भौतिक वस्तुएँ मन, वाणी, कर्म सभी पुद्गल हैं। सभी प्रकार के ठोस तथा तरल पदार्थ, आकाश, प्रकाश, ध्वनि शब्द, अंधकार आदि पुद्गल हैं।

पुद्गल बहुप्रदेशी अस्तिकाय द्रव्य है। **तत्वार्थ सूत्र**[4] में पुद्गल को संख्यात असंख्यात तथा अनन्त प्रदेशी द्रव्य कहा है। **प्रवचनसार**[5] के अनुसार पुद्गल परमाणु का पिण्ड है। **इस प्रकार पुद्गल द्रव्य का अस्तित्व प्रदेशों से बनी काया** (Body/Field) **और परमाणु पिण्ड दोनों रूपों में है तथा 'एक परमाणु' एक आकाश प्रदेश के समान है। पुद्गल द्रव्य के इस प्राकृतिक स्वभाव को विज्ञान में डयुअल नेचर आफ मैटर** (Dual Nature of Matter) **कहा जाता है। पांच द्रव्य अस्तिकाय (Quantum Field) है, लोक व्यापी है, और एक क्षेत्र में अवगहित है। वे निरंतर एक दूसरे से मिल रहे हैं तथापि वे अपना स्वभाव नहीं छोड़ते**[6]**।**

न्यायकोष में कहा है कि पुद्‌गल का सबसे सूक्ष्म खण्ड परमाणु है और सबसे बड़ा खण्ड लोकव्यापी महा स्कन्ध है। इस प्रकार रूपी, अरूपी, मूर्त, अमूर्त सभी प्रकार के पुदग्ल के प्रदेश और परमाणु दोनों हैं। अरूपी और अमूर्त प्रकाश के परमाणु हैं। जीव के भी परमाणु है और प्रदेश भी है। प्रकाश, जीव उष्णता, विद्युत, मैग्नेटिक फील्ड आदि पुद्‌गल रुपी उर्जा को विज्ञान में विद्युत-चुम्बकीय उर्जा और उनके परमाणु को 'फोटोन' (Photon) कहा जाता है। सभी प्रकार के प्रेशर, हलन चलन, गमनागमन, मन, शब्द, कषाय, राग, द्वेष, सभी प्रकार की शारीरिक, वाचिक तथा मानसिक भाव आदि विज्ञान में मैक्यानिकल एनर्जी कहलाती है- और उसके परमाणु को 'फोनान (Phonon) कहा जाता है।

'कर्मबंध' जो आत्म प्रदेश और कार्मण वर्गणा के परमाणु का बंध है, वस्तुतः 'फोटान- फोनान' का बंध है। आगमों में कहा है कि कर्मबंध से आत्मा के निजी गुणों पर आवरण छा जाता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि इस फोटान- फोनान इंटरएक्शन से फोटान वेव का माडयुलेशन (Modulation) होता है। ध्वनि शारीरिक तथा मानसिक कार्य रेडिओ वेव अथवा मायक्रो वेव के माडयुलेशन द्वारा दूर दराज के क्षेत्रो में पहुँचाया जाता है। इस वैज्ञानिक अवधारणा के अनुसार कार्मण शरीर माडयुलेटेड आत्मा है। जिस प्रकार डीमाडयुलेशन (De-modulation) की प्रक्रिया से फोटान और फोनान अपनी पूर्व की मुक्त अवस्था प्राप्त कर लेते हैं उसी प्रकार सम्यक् आचरण द्वारा कार्मण शरीर का डीमाडयुलेशन होकर आत्मा निर्वाण को प्राप्त होती है।

जैन मान्यता है कि एक आकाश प्रदेश पर अनेक परमाणु एक ही समय पर रह सकते हैं। क्लासिकल फिजिक्स

के अनुसार यह असंभव है। एक आकाश प्रदेश पर अनेक तो क्या दो परमाणु भी नहीं रह सकते हैं। जब एक परमाणु ने एक प्रदेश को व्याप्त कर रखा है तो दूसरा वह स्थान तभी ले सकता है जब पहला परमाणु वहां से हट जाय। **क्वांटम फिजिक्स के अनुसार यह संभव है क्योंकि परमाणु तंरग रूप में भी रहता है और तंरग के रूप में अनेक परमाणु एक आकाश प्रदेश पर रह सकते हैं जैसे सिद्ध रहते हैं। जिस प्रकार 'जिवास्तिकाय' अवस्था में जीवों में भेद नहीं होता उसी प्रकार 'पुद्गलस्तिकाय' अवस्था में परमाणु में भेद नहीं रहता। ऐसी अवस्था क्वांटम फिजिक्स में 'बोस आइन्स्टाईन कान्डनसेट' कहलाती है। यदि जिवास्तिकाय जीव की मोक्ष अवस्था है तो पुद्गलस्तिकाय को परमाणु की मोक्ष अवस्था कहा जा सकता है।**

पुद्गल द्रव्य के चार भेद हैं[7]। महास्कन्ध (Plasma or Ionosphere), स्कन्ध (Molecule), स्कन्ध देश (Radical) तथा परमाणु (Atom)। पुद्गल का अस्तिकाय स्वरूप ही लोकव्यापी महास्कन्ध है। जैन आगमों में तमस्काय[8], कृष्णराजी[9] आदि महास्कन्ध ों का उल्लेख है जहाँ मेघ गर्जना करते हैं, वर्षा होती है, सूर्य रोशनी करता है, तथापि वहाँ अंधकार ही रहता है। द्रव्य रुप में पुद्गल के केवल दो भेद हैं- परमाणु और स्कन्ध[10]। महास्कन्ध में स्कन्ध स्कन्धदेश, परमाणु, परमाणु प्रदेश आदि का समावेश होता है। **इस अवस्था में पुद्गल जड़ गुणों वाला है। अस्तिकाय अवस्था में पुद्गल का परमाणु और स्कन्ध ऐसा भेद नहीं होता, पुद्गल द्रव्य का केवल प्रदेश रूप होता है। अतः पुद्गलास्तिकाय को जड़ भी नहीं कहा जा सकता। आगमों में 'प्रदेश' को न जड़ कहा है न चेतन। केवल परमाणु और परमाणु से बने पदार्थों को जड़ कहा है।** द्रव्य को प्रदेश में विभाजित नहीं किया

जा सकता परंतु द्रव्य को परमाणु में विभाजित किया जा सकता है। अतः एक प्रदेश का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। एक परमाणु का स्वतंत्र अस्तित्व है। **सर्वार्थसिद्धि**[११] में कहा है– **'प्रदिश्यन्ते इति प्रदेशः परमाणुवः** अर्थात् प्रदेश का अर्थ परमाणु है।

परमाणु, स्कन्ध, स्कन्ध देश और स्कन्ध प्रदेश ये चार प्रकार के पुद्गल रूपी हैं[12]। 'अस्तिकाय' पुद्गल द्रव्य की अरूपी, अमूर्त अवस्था है[13]। **तत्वार्थ सूत्र**[14] में शरीर, मन, मरण प्राण, वचन, स्वाच्छोस्वास, सुख, दुख, जीवन, मरण आदि को भिन्न भिन्न वर्गणा के पुद्गल परमाणु कहा है। **सर्वार्थ सिद्धि**[15] में कहा है कि पुद्गल परमाणु के स्निग्ध और रुक्ष गुणों के संयोग से आकाश में बिजली चमकती है।

सहज जिज्ञासा होती है कि वीतरागी मुमुक्षु आत्माओं को रिलेटिविटी थ्यौरी, स्याद्वाद, सप्तभंगी, क्वांटम फिजिक्स, कास्मालाजी का ज्ञान क्यों चाहिए? लोक-अलोक का धर्माचरण से क्या संबंध है? तप और साधना में व्यस्त, सामयिकी में मग्न जैन साध्वियों को भगवान महावीर ने शीत और उष्ण परमाणु, रूक्ष और स्निग्ध परमाणु, एक समय में लोकान्त तक पहुँचने वाला परमाणु आदि की देशना क्यों दी? वितरागी आत्मा को इनका ज्ञान क्यों चाहिये? परमाणु, स्कन्ध, स्कन्ध देश परमाणु प्रदेश और वैराग्य, तप, साधना, संयम, ब्रह्मचर्य आदि आध्यात्मिक विधियों में क्या कोई नाता है? तपस्वी, मुनि, साधु, साध्वि, आर्यिका, वैरागी, वैरागिनी, कर्मयोगी, ध्यान योगी आदि भव्यात्मा को काल के अस्तित्व को, नास्तित्व को, प्रदेश अथवा परमाणु स्वरूप को जानना क्यों आवश्यक है? परमाणु स्वयं गति करते हैं अथवा उन्हें धर्म द्रव्य की बैसाखी चाहिये? क्या यह ज्ञान मोक्ष प्राप्ति के लिए आवश्वक है?

उपरोक्त नीरस, बोरिंग, व्यर्थ से प्रतीत होने वाले विषयों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये भगवान महावीर ने राजपाठ, सुख-विलास को त्यागकर वनवास का मार्ग अपनाया। बारह वर्ष की कठोर तपस्या के पश्चात् उन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ और वे जान पाये कि वे कौन हैं? कौन थे? इस संसार में वे कहां से और कैसे आये? वे यहां से कहां जायेंगे? सर्वज्ञ देव ने इस संसार में स्वयं का मार्ग तथा स्थान निश्चित् किया और जन कल्याण हेतु मुमुक्षु आत्माओं को इस ज्ञान से आलोकित किया। भगवान महावीर ने कहा **'बंधप्पमोक्खो, अज्झत्येव**[16]**'** अर्थात् बंध और मोक्ष दोनों हमारे भीतर हैं। यदि मुक्ति चाहते हो तो -**बुज्झिज्जति तिउदिज्जा, बंधणं परिजायां**[17] -अर्थात् सर्वप्रथम बंध को जानो और तत्पश्चात् उसे तोडो'। बंध कर्मों का है। बंध कषाय भाव का है। बंध आत्मा और परमाणु का है। **जब तक आत्मा, परमाणु और बंध का सम्यग्-ज्ञान नहीं होगा तब तक सम्यग् आचरण भी नहीं किया जा सकता और आत्मा को मुक्ति भी नहीं मिल सकती।**

जीव अनन्त है। परमाणु भी अनन्त है। दो जीव समान नहीं होते। दो परमाणु भी समान नहीं होते। अतः जीव और परमाणु के बंध भी अनन्त प्रकार के हैं। जीव को अपने बंध का ज्ञान प्राप्त करना है तथा अपनी लेश्या के वर्ण को पहचानना है और तदनुसार धर्माचरण करना है। **भगवान महावीर ने परमाणु विज्ञान अथवा क्वांटम फिजिक्स के नियमों द्वारा 'बंध' प्रक्रिया को समझाया है और प्रदेश बंध, प्रकृतिबंध, स्थिति बंध और अनुभाग बन्धों को बंध की भिन्न-भिन्न प्राबबिलिटी डेन्सिटी के रूप में प्रगट किया जिसे सामान्य व्यक्ति बंध की तीव्रता, आस्रव, संवर, निर्जरा, मोक्ष आदि रूपों में जानता है। आस्रव की मात्रा अथवा परमाणु प्रवाह, कषाय की तीव्रता पर निर्भर है। जब तक प्राणी जीवित है, मन वचन और काय के कार्य**

चलते रहते हैं अर्थात् आस्रव अथवा परमाणु प्रवाह चलता रहता है। परंतु बंध ज्ञान और स्वयं के आचरण से बंध पर नियंत्रण किया जा सकता है। नियंत्रण ही संवर की प्रक्रिया है। बंध के कारणों का अभाव और परमाणु की निर्जरा ही मोक्ष है[18]**।**

'मैं आत्मा हूँ, मैं शरीर नहीं हूँ', यह ज्ञान नहीं है केवल इन्फरमेशन है। पुस्तकों से प्राप्त इस इन्फरमेशन से नालेज बढ़ता है, ज्ञान नहीं। स्वयं की आत्मानु भूति से ज्ञान प्राप्त होता है और जीव **'ज्ञानी'** कहलाता है। सभी प्रकार की शारीरिक, वाचिक और मानसिक क्रिया के परमाणु होते हैं जो रूक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण स्पर्शों के कारण आत्मा से बंध जाते हैं। बंध की शक्ति अर्थात् बाइंडिंग एनर्जी (Binding Energy) निगेटिव होती है। **साधक इसे अनुभव कर, पुरूषार्थ द्वारा पाजिटिव एनर्जी का विकास करता है और कर्म करते हुए भी वह कर्म-बंध से मुक्त रहता है। यह तभी संभव है जब साधक को परमाणु तथा उसके रुक्ष और स्निग्ध स्पर्शो का, उष्ण और शीत अवस्था का ज्ञान होता है। कषायों से मुक्त अवस्था में वह कार्मण परमाणु के बंध से भी मुक्त रहता है। परमाणु के बंध से मुक्त होने के कारण अरिंहतो का रक्त लाल नहीं होता अपितु व्हेल मछली की तरह सफेद रंग का व्हाईट ब्लड कार्पसेल्स (W.B.C.) से बना होता है। उनके शरीर में पसीने की गंध भी नहीं आती। आत्मा के साथ परमाणु का जो इंटरएक्शन होता है, उस पर वे नियंत्रण कर पाते है। आचरण की शिथिलता अथवा कठोरता, बंध के अनुसार बदलती है।**

समयमसार के अनुसार ज्ञान ही आत्मा है- **णांण विणु अप्पणो।** केवलज्ञानी चौदह गुण स्थानों वाले सिद्धात्मा हैं और

इससे कम गुण स्थानों वाला आत्मा संसारी आत्मा कहलाता है। अर्थात् घटता ज्ञान ही घटते गुण स्थानों का कारण है। द्रव्य और द्रव्य पर्यायों का हमारा ज्ञान हमारे पूर्वजों के ज्ञान से अधिक है। आज हमारे पास ऐसे औजार हैं जो परमाणु के गर्भ में प्रवेश कर सकते हैं। स्कन्धों से परमाणु को मुक्त भी कर सकते है। जिस प्रकार एक कुशल कुम्भकार मिट्टी से चाहे जैसी आकृति बना सकता है उसी प्रकार आज का वैज्ञानिक परमाणु को बांध सकता है, बंध से मुक्त कर सकता है और परमाणु को छिन्न भिन्न भी कर सकता है। लेजर टूईजर (Laser Twizer) नामक सूक्ष्म चिमटे से वह किसी भी परमाणु को पकड़कर अपनी इच्छानुसार स्कन्ध से बाहर अथवा अंदर कर सकता है। परमाणु प्रदेश पर नियंत्रण कर भिन्न भिन्न प्रकार की द्रव्य पर्याय बना सकता है जिनका प्राकृतिक निर्माण असंभव है। जीव वैज्ञानिक इस लेजर चिमटे द्वारा जीव कोशिका में तथा डी.एन.ए में मनचाहे परिवर्तन कर सकते हैं जिससे जीवों की नयी प्रजातियाँ अथवा पर्यायें बनाई जा सकती हैं।

जैन आगमों में जीव की विविधता का कारण जीव के कर्मो को माना गया है। आज वैज्ञानिक जेनेटिक कोड़ में परिवर्तन कर स्थावर वनस्पति जीव को त्रस में, सूक्ष्म जीव को विशाल कायोंवाला त्रस अथवा स्थावर जीव बना सकता है। अतः **जैन मान्यता के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि जीव के कार्मण शरीर में परिवर्तन करने में वैज्ञानिक सफल हो गये हैं। अर्थात् आस्रव, संवर और मोक्ष के लिये पारंपरिक तप, संयम, अपरिग्रह आदि आध्यात्मिक साधनों के साथ कुछ वैज्ञानिक साधन भी उपलब्ध हो गये हैं। पाश्चात्य् दार्शनिक स्वीकार करते हैं कि दोनों साधनों को मिलाकर आत्म विकास** (Spiritual Evolution) **संभव है।**

परमाणु के रूक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण स्पर्शों का ज्ञान प्राप्त कर उनमें बदलाव लाकर जीवों के घाति-अघाति कर्मों पर प्रभाव डाला जा सकता है जिसे आगमों में पुरूषार्थ कहा है। जब तक श्वास चल रहा है तब तक जीव कर्म करते ही रहता है परंतु संयम, अपरिग्रह, अहिंसा, परस्परोग्रह आदि मानवीय भावों से आस्रव पर भी नियंत्रण रखा जा सकता है। यदि आस्रव सीमित है तो निर्जरा के कार्य भी सुलभ हो जाते हैं। सम्यग्ज्ञानी यह निर्णय लेने में सक्षम है कि उसे बारह व्रतों का पालन कर जीवन यापन करना है अथवा मुनि का कठोर जीवन जीना है। **भगवान महावीर 'कर्म को धर्म' में परिवर्तन करने की कला और विज्ञान जानते थे। (Mahavir knew the art and science of how to raise all Karmas to the level of Dharma)**

महावीर का मोक्ष मार्ग बहुत ही सरल है। वे कहते हैं-

णाणस्य सव्वस्स पगासणाए, अण्णाण मोहस्स विवज्जणाए।
रागस्स दोसस्स य संखाएंणं, एगंतसोक्खं समुवेइ मोक्खं।।

-उत्तराध्ययन सूत्र 32/2

अर्थात् संपूर्ण ज्ञान के प्रकाश में, अज्ञान और मोह के वर्जन से, राग और द्वेष के सर्वथा क्षय से, जीव एकान्त सुख रूप मोक्ष को प्राप्त करता है।

इस सूत्र में कहीं पर भी कठोर संयम, वनवास, वैराग्य, कायक्लेष आदि का उल्लेख नहीं है। इसका संदेश है 'संसार में जीयो परंतु संसार से मोह मत करो।'

3. द्रव्यों का अस्तिकाय स्वरूप एवं क्वांटम फील्ड का तुलनात्मक अध्ययन

आगमिक मान्यता है कि अनन्त, असीम आकाश में अनादि काल से जीव-अजीव द्रव्यों का अस्तित्व है। आकाश के जिस क्षेत्र में द्रव्य है उस आकाश को आगमों में लोक कहा है। जहाँ जीव और अजीव का अस्तित्व नहीं है वह अलोक है[19]। अलोक असीम है और लोक सीमित है। लोक में पांच प्रकार के भिन्न-भिन्न द्रव्य हैं परंतु वे सभी असंख्यात् आकाश प्रदेशों से बनी एक काया से प्रतीत होते हैं। आगमों में इसे पंचास्तिकाय कहा है[20]।

मनुष्य (जीव) को आकाश एक असीम, खोखला, द्रव्य रहित स्थान प्रतीत होता है जिसमें सजीव और निर्जीव पदार्थ रहते हैं। **सर्वज्ञ भगवान महावीर कहते हैं कि आकाश खोखला रिक्त स्थान नहीं है अपितु एक अरूपी, अमूर्त आकाशास्तिकाय नामक द्रव्य है। इसके अनन्त प्रदेश हैं और द्रव्यों को अवगाहन देना इसका विशेष गुण है। विज्ञान में 'अवगाहन गुण' ही गुरूत्वा कर्षण 'शक्ति' कहलाती है।** सामान्य व्यक्ति पृथ्वी की गुरूत्वाकर्षण शक्ति से परिचित है जिसके कारण पृथ्वी पर जल, वायु, वनस्पति और अन्य जीव पाये जाते हैं। उसी प्रकार आकाश की गुरूत्वाकर्षण शक्ति के कारण आकाश में अनन्त तारे, सूर्य, चंद्र, ग्रह आदि अवगहित हैं। जैन मान्यतानुसार लोक द्रव्य 14 रज्जु ऊँचाई के क्षेत्र में फैला है। यह एक व्यवहारिक दृष्टि है। वस्तुतः आकाश भी एक लोक द्रव्य है जो लोक के अंदर और बाहर सभी दिशाओं में पाया जाता है। **अतः निश्चय नय से सम्पूर्ण आकाश विश्व है, लोक है अथवा ब्रह्माण्ड है। विज्ञान में भी सम्पूर्ण आकाश को युनिवर्स कहा जाता है और पंचास्तिकाय क्षेत्र को**

जैन दर्शन के 'लोक' शब्द के अनुसार आबजरवेबल स्पेस (Observable Space) कहा जाता है।

जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि यदि पंचास्तिकाय भी आकाशास्तिकाय ही है तो वह आकाश से भिन्न क्यों दिखाई देता है? समाधान यह है कि जल तरंगें जल ही है परंतु वे जलाशय से भिन्न दिखाई देती हैं। हवा या अन्य किसी बाहरी कारणों से जलाशय की उपरी सतह को गति मिलती है तो उपरी सतह का जल उपर उठ जाता है जिसे हम तरंग कहते है पंरतु वह जलाशय से विभक्त नहीं होती है। इसी प्रकार आकाशास्तिकाय में स्वाभाविक 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' गुणों के कारण पंचास्तिकाय रूपी पर्याय उत्पन्न होती है जिसकी प्रतीति जीव को पांच द्रव्यों के रूप में होती है विज्ञान की भी यही मान्यता है कि स्पेस एक क्वांटम फील्ड है और उसकी अनुभूति आबजर्वर (Observer) अर्थात् जीव को पार्टिकल के रूप में होती है। **इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि द्रव्यों के अस्तिकाय स्वरूप में और क्वांटम फील्ड' कोई भेद नहीं है।**

आगमिक मान्यतानुसार परमाणु की लम्बाई, चौड़ाई अथवा मोटाई नहीं है तथापि वह एक आकाश प्रदेश जितना क्षेत्र व्याप्त करता है अर्थात् परमाणु एक पार्टिकल है और एक फील्ड एलिमेन्ट अथवा वेव के समान है। परमाणु के डायमेन्शन नहीं है तथापि वह एक प्रदेशी है- इसका अर्थ है परमाणु एक आकाश प्रदेश के क्षेत्र में कही पर भी हो सकता है। विज्ञान में इस क्षेत्र को वेव फंक्शन कहा जाता है। 'एक प्रदेशी परमाणु' शब्द से क्वांटम फिजिक्स के (Uncertainty Principle) के सिद्धांत का बोध होता है।

4. परमाणु के गुण, लक्षण और कार्य

पुद्गल द्रव्य का सबसे छोटा, अविभाजित खण्ड, जैन दर्शन में परमाणु कहलाता है। **भगवती सूत्र**[21] में कहा है कि परमाणु अविभाज्य है, अच्छेद, अभेद, अदात्य और अग्राहय है। किसी भी उपाय, उपचार तथा उपाधि द्वारा उसका विभाजन नहीं किया जा सकता। शस्त्र इसे काट नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती और पानी आर्द्र नहीं कर सकता। **पंचास्तिकाय** में परमाणु की परिभाषा इस प्रकार है-

आदे समेत्तमुत्तो धादुचदुक्कस्य कारणं जो दु।
सो णेओ परमाणु परिणामगुणो समयसद्दो।।

-पंचास्तिकाय गाथा 78

अर्थात् जो पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु का कारण है, वह परमाणु है। परमाणु द्रव्य है। वह मूर्तिक है। वह अविभागी है क्योंकि उसका आदि, अन्त और मध्य नहीं है। वह परिमण है और शब्द रहित है।

नियमसार गाथा 26 में परमाणु की वही परिभाषा है जो इक्किसवीं सदी के विज्ञान में दी गयी है-

अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं णेव इंदिए गेज्झं
अविभागी जं दव्वं परमाणू तं वियाणाहि।।

-नियमसार गाथा 26

अर्थात् जो स्वयं ही आदि, स्वयं ही मध्य और स्वयं ही अंत रूप है जो इन्द्रियों द्वारा भी ग्रहण नहीं किया जाता उस अविभागी द्रव्य को परमाणु जानो।

वस्तुतः जैन दर्शन में **'परमाणु'** शब्द का प्रयोग एक द्रव्य ईकाई के रूप में उसी प्रकार हुआ है जिस प्रकार वैज्ञानिक **'क्वाटा'** शब्द का प्रयोग करते हैं। रूपी-अरूपी, मूर्त-अमूर्त, जीव-अजीव, सभी पदार्थों के परमाणु हैं। **भगवती सूत्र में द्रव्य परमाणु, क्षेत्र परमाणु, काल परमाणु और भाव परमाणु द्वारा द्रव्यों का निरूपण किया है।** परमाणु द्रव्य से विभक्त हो सकता है और नहीं भी। सभी अस्तिकाय द्रव्य के परमाणु हैं। यद्यपि **'काल'** पंचास्तिकाय लोक में नहीं है तथापि श्वेताम्बर परम्परा में काल को आकाशस्तिकाय में विलीन कर आधुनिक विज्ञान की भांति Space-Time क्षेत्र के रूप में स्वीकार किया है। **'अस्तिकाय' रूप में द्रव्यों के एकत्व का और परमाणु रुप में द्रव्यों की विभक्ति (Discontinuity) का आभास होता है। यही क्वांटम फिजिक्स की अवधारणा है।**

परमाणु की न लम्बाई है, न चौड़ाई है और न ही गहराई है। परमाणु पुद्गल की ईकाई है। परमाणु से छोटे पुद्गल द्रव्य का अस्तित्व नहीं है। परमाणु की उत्पत्ति नहीं होती। परमाणु का विनाश भी नहीं होता। वह सत् है, नित्य है, शाश्वत है। यही भाव आचार्य कुन्द कुन्द[22] के हैं जब वे कहते है, 'सब स्कन्धों का जो खण्ड है अर्थात् जिसका दूसरा खण्ड नहीं हो सकता, उसे परमाणु जानो। वह परमाणु नित्य है शब्द रूप नहीं है, एक प्रदेशी है, अविभागी है और मूर्तिक है।'

उपरोक्त परिभाषा के अनुसार अतिसूक्ष्म, अतीन्द्रिय, प्रदेश रूप परमाणु वस्तुतः अरूपी और अमूर्त होना चाहिये परंतु व्यावहारिक नय से परमाणु को मूर्त और रूपी कहा गया है क्योंकि वह मूर्तिक पुद्गल खण्ड है। पंचास्तिकाय में रूपी और मूर्त परमाणु का वर्णन इस प्रकार है-

एयरसवण्णागंधं दो फासं सद्दकारणम सद्दं।
खंधंधेतरिंद दव्वं परमाणुं तं वियाणेहि।।

–पंचास्तिकाय, गाथा 81

अर्थात्, जिसमें एक रस, एक वर्ण, एक गंध और दो स्पर्श हैं, जो शब्द की उत्पत्ति में कारण तो है किन्तु स्वयं शब्द का रूप नहीं है और स्कन्ध से जुड़ा है उसे परमाणु जानो।

जैन परमाणु का सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण उसका पार्टिकल और प्रदेश स्वरूप है। पुद्गल द्रव्य का परमाणु पार्टिकल है परंतु पुद्गलस्तिकाय का सूक्ष्मतम खण्ड एक 'प्रदेश' है अर्थात् जैन परमाणु में पार्टिकल और वेव दोनों के गुण पाये जाते हैं। आगमों में परमाणु के जिन गुणों का वर्णन है वे गुण इस प्रकार है–

1. परमाणु पुद्गल द्रव्य का शाश्वत सर्वाधिक सूक्ष्म खण्ड है। शाश्वत होने से परमाणु अविभाजित है।
2. परमाणु द्वारा निर्मित पुद्गल स्कन्धों में स्पर्श, वर्ण, गंध और रस पाये जाते हैं। अतः परमाणु भी एक वर्ण, एक रस, एक गंध और दो स्पर्श से युक्त कहा गया है। ये गुण एक अंश, दो अंश, तीन अंश आदि पूर्णाक (Integer) में होते हैं दशम लव (Fraction) में नही होते।
3. परमाणु में शीत या उष्ण स्पर्शों में से एक और स्निग्ध या रुक्ष स्पर्शों में से एक स्पर्श होता है। मृदु, कठोर, लघु, गुरू आदि गुण परमाणु में नहीं होते।
4. परमाणु में स्वयं की गति है। अन्य द्रव्य या तो स्थिर हैं अथवा परमाणु की प्रेरणा से गति करते हैं। परमाणु में अनेक प्रकार की गति है। देशांतर (Translation), कंपन (Vibration) और स्पंदन (Simple Harmonic

Motion or Rotation) परमाणु की मुख्य गति है **भगवती सूत्र**[23] में परमाणु की अनेक प्रकार की गति बतलाई है जो इस प्रकार है–

i. इयाई– एक स्थान पर कम्पन करना (Vibration/ Oscillation)

ii. अणुश्रेणी और विश्रेणी (Parallel and Opposite Direction)

iii. अविग्रह गति (Rectilinear Motion)

iv. विग्रह गति (Curvilinear Motion)

v. ऋजुगति (Straight Line)

vi. कुटिल गति (Zigzag Motion)

vii. प्रतिघाती गति (Scattering)

viii. स्प्रस्त गति (Tangential Motion)

ix. उर्ध्व गति (Vertically Upward)

x. अधोगति (Vertically Downward)

xi. त्रियंग गति (Horizontal Motion)

5. परमाणु जब स्कन्ध में बंधा होता है तो उसकी गति पर बंध तथा स्कन्ध के अन्य परमाणु का भी प्रभाव होता है। ऐसी अवस्थाओं में परमाणु गति के सात भंग संभव है। **भगवती सूत्र**[24] में कहा है कि कंपन (Vibration) के दो भंग (Degrees of Freedom) होते हैं। द्वि प्रदेशी स्कन्ध में तीन भंग, त्रिप्रदेशी में पांच भंग और चतुर्प्रदेशी स्कन्ध में छः भंग होते हैं। विज्ञान में भी मालेक्युलर वायब्रेशन (Molecular Vibration) के यही नियम हैं। विज्ञान में 'भंग' को Degrees of Freedom कहा जाता है। विज्ञान

में भंग की संख्या निकालने का एक फार्मूला है जो इस प्रकार है–

$$N = 2n - 1$$

इस फार्मूला में भंगों की संख्या को N से दर्शाया गया है और n परमाणु की संख्या है।

द्विप्रदेशी स्कन्ध में परमाणु की संख्या N = 2 है। अतः उपरोक्त फार्मूला के अनुसार भंगो की संख्या 3 बनती है जो **भगवती सूत्र** में दी गई संख्या के बराबर है। इसी प्रकार त्रिप्रदेशी स्कन्ध में N = 3 और चतुर्स्पर्शी भंग में N = 4 है। इन परमाणु सख्ंया के अनुसार त्रीप्रदेशी स्कन्ध के भंगों की संख्या पांच होती है और चर्तुस्पर्शी स्कन्ध में भंगों की संख्या सात होती है। इसमें दो भंग समान अथवा (Degenerate) होते हैं। अतः चतुर्स्पर्शी स्कन्ध में भंगो की संख्या छः हो जाती है।

6. परमाणु अप्रतिघाती है[25]। वह लोहे की दीवार से निकल सकता है। सुमेरू पर्वत भी उसकी राह नहीं रोक सकता परंतु यदि वह गति करते समय दूसरे परमाणु से टकराता है तो **स्थानांग सूत्र** के अनुसार इंटरएक्शन की तीन संभावनाएँ होती है।

   i. दोनों परमाणु की गति की दिशा बदल जाती है। विज्ञान में इसे Atomic Scattering कहा जाता है। परमाणु की यह दिशा–बदल Elastic Scattering कहलाती है।

   ii. परमाणु प्रतिहत होते हैं। यह Inelastic Scattering है।

   iii. परमाणु स्कन्ध में बदल जाते हैं। यह Atomic Bonds है।

परमाणु अप्रतिघाती है अर्थात् परमाणु को स्थिर नहीं किया जा सकता। यह जैन अवधारणा वर्तमान समय में विज्ञान का एक मूल सिद्धान्त है और विश्व की शाश्वतता का कारण है। भगवती सूत्र में कहा है कि जब तक जीव में गति है वह मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता।

7. परमाणु में एक अंश, दो अंश, तीन अंश आदि मात्रा में कृष्ण, नील, पीत, रक्त, और शुभ्र वर्ण होते हैं। विज्ञान में परमाणु वर्ण के स्थान पर (Atomic Spectrum) शब्द का प्रयोग होता है। आगमों में परमाणु के उन वर्णो का उल्लेख है जो आंखों से दिखाई देते हैं। विज्ञान में परमाणु के दिखाई देने वाले वर्ण Visible Spectrum कहलाते हैं।
8. परमाणु में स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श होते हैं। जिसके कारण दो अथवा दो से अधिक परमाणु स्कन्ध में बंध जाते हैं। इन स्पर्शों की सख्ंया को **प्रवचनसार**[26] में **'शक्तांश'** कहा है जो वैज्ञानिक शब्द Chemical Valency के समान है।
9. परमाणु के शीत और उष्ण स्पर्शो के परिणमन से उष्णता, प्रकाश शब्द, अंधकार, उद्योत, प्रभा, काया आदि की उत्पत्ति होती है। **विज्ञान की दृष्टि से परमाणु स्पर्श क्वांटम एनर्जी स्टेट है।**
10. परमाणु डायमेन्शनलेस है अर्थात परमाणु के कोई आयाम नही है। अत: उसका कोई क्षेत्र भी नहीं है। तथापि आगमों में कहा है कि परमाणु एक आकाश प्रदेश जितना क्षेत्र व्याप्त करता है। **सर्वार्थ सिद्धि** में तो स्पष्ट लिखा है- **'प्रदेश'** का अर्थ परमाणु है। **परमाणु का देशान्तर बहुत अधिक तीव्र गति से होता है। अत: परमाणु के निश्चित स्थान का अनुमान लगाना असंभव है। केवल उस**

लघुत्तम क्षेत्र का अनुमान किया जा सकता है जिस क्षेत्र में परमाणु के अस्तित्व की संभावना हो सकती है। वह क्षेत्र एक 'प्रदेश' कहलाता है। परमाणु प्रदेश की यह अवधारणा क्वांटम फिजिक्स का एक मूल सिद्धान्त है जिसे Uncertainty Principle **कहा जाता है जिसकी खोज के लिये 'पौली' नामक वैज्ञानिक को नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।** परमाणु प्रदेश जिसे वैज्ञानिक एटोमिक वेव फंक्शन (Atomic Wave-Function) कहते हैं जो परमाणु का विद्युत क्षेत्र अथवा इलेकट्रान क्लाउड है।

11. पुद्‌गल द्रव्य में पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध और चार स्पर्श होते हैं जिस कारण जैन दर्शन में पुद्‌गल परमाणु के $5 \times 5 \times 2 \times 4 = 200$ भेद कहे गये हैं। क्योंकि पुद्‌गल शब्द में 'एनर्जी' भी समाविष्ट है, जैन दर्शन में एनर्जी स्वरूप पदार्थों के भी भिन्न भिन्न वर्गणा के परमाणु कहे गये हैं। **भगवती सूत्र**[27] में औदारिक वर्गणा वैक्रिय वर्गणा, आहारक वर्गणा, तेजस वर्गणा, कार्मण वर्गणा, स्वासोच्छवास वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा आदि अनेक वर्गणा के परमाणु कहे गये हैं।

विज्ञान परमाणु के दो सौ भेदों का समर्थन करता है। रासायनिक प्रक्रिया की दृष्टि से विज्ञान में परमाणु के केवल 92 भेद कहे गये हैं। परंतु परमाणु के अनेक आईसोटोप (Isotopes) भी हैं। जिन्हें मिलाकर (यह संख्या लगभग 200 हो जाती है। इनके अतिरिक्त वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में कृत्रिम पद्धति से अनेक रेडियो एक्टिव परमाणु बनाये हैं जिनका जीवन काल (हाफ लाइफ) चंद सेकेन्ड का होता है। कुछ लांग-लाइफ परमाणुओं को

मिलाकर रासायनिक वैज्ञानिक 104 से 116 तक परमाणु की संख्या को स्वीकार करते हैं।

12. शब्द अंधकार उद्योत, प्रभा, छाया, आतप आदि परमाणु जनित पुद्‌गल[28] हैं। एकत्व, पृथकत्व, संख्या, संस्थान आदि परमाणु की पर्यायें है[29]।

13. परमाणु परिणामी नित्य है। **'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य'** परमाणु परिणमन का नियम है। परमाणु पर्यायों का जीवन काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात् समय तक रह सकता है[30]। परमाणु के परस्पर मिलने से स्कन्ध बनते हैं और स्कन्ध के टूटने से परमाणु बनते हैं[31]।

14. परमाणु तथा अन्य सभी द्रव्यों में दो प्रकार के परिणमन होते हैं- काल प्रेरित जो पर्यायों का स्वभाव है और **'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य'** प्रेरित। काल के निमित्त कारण से पुद्‌गल के वर्ण, रस, गन्ध, और स्पर्श में परिवर्तन होते हैं। रुक्ष, स्निग्ध, शीत, उष्ण और स्व-गति आदि परमाणु गुणों के कारण परमाणु स्कन्ध में बंध जाते हैं परंतु इस बंध का कारण काल नहीं है अपितु द्रव्यों का स्वाभाविक **'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य'** धर्म है। संसारी जीव के 'उत्पाद व्यय' का ज्ञान 'काल' द्वारा होता है।

15. जीव के निमित्त से भी पुद्‌गल परमाणु में परिणमन होते हैं। दो अथवा दो से अधिक परमाणु बंधकर सामान्यत: इनआरग्यानिक मालेक्युल (Inorganic Molecule) की उत्पत्ति होती है परंतु जीव के सहयोग से आरग्यानिक मालेक्युल (Organic Molecule) की उत्पत्ति होती है। आगमों में इसे विस्रासित परिणमन कहा हैं। जब तक जीव और पुद्‌गल साथ साथ रहते हैं, वे एक दूसरे को प्रभावित करते है। जैन आगमों[32][33] में परस्पर प्रभाव के कारण जीव

में और पुद्गल में दस-दस प्रकार के परिणमन माने गए हैं। इन परिणमन के कारण जीव औदारिका, वैक्रिय, आहारक, तेजस और कार्मण शरीर धारण करता है।

16. **तत्वार्थ सूत्र**[34] में कहा है- **'एक प्रदेशादिषु भाज्यः पुदग्लनाम्'** अर्थात् पुद्गल द्रव्य का अवगाहन एक प्रदेश से लेकर संख्यात् असंख्यात्, और अनन्त प्रदेशों में विभाजित है। अन्य जैन आगमों में इसे परमाणु का सूक्ष्म परिणमन कहा है जिसके कारण परमाणु का छोटा सा समूह विशाल आकाश क्षेत्र में फैल जाता है और वही समूह एक छोटे से आकाश क्षेत्र में समाविष्ट भी हो सकता है। यह द्रव्यों के कम्प्रेशन (Comprension) और डिफ्युजन (Diffusion) की प्रक्रिया है, **परंतु इस प्रक्रिया से एक आकाश प्रदेश में अंसख्यात् परमाणु नहीं समा सकते।** आगमों में पुद्गल द्रव्य के चार भेद कहे है। इस भेद के अनुसार पुद्गल एक प्रदेश, संख्यात और असंख्यात प्रदेशों में विभ्क्त है।

5. परमाणु, एटम और क्वांटा में तुलना

परमाणु, एटम और क्वांटा, तीनों की परिभाषा समान है और वे द्रव्यों के अंतिम सूक्ष्म अविभाजित खण्ड हैं। इनसे छोटे द्रव्य खण्ड का अस्तित्व नहीं है। परमाणु अथवा एटम को द्रव्य से विभक्त किया जा सकता है। परमाणु और एटम का स्वतंत्र अस्तित्व है परंतु प्रकृति में एटम स्कन्ध रूप में ही पाये जाते हैं।

द्रव्यों का मूल स्वरूप क्वाटम फील्ड (अस्तिकाय) है। अस्तिकाय द्रव्यों के सूक्ष्मतम अविभाजित एक आकाश प्रदेश को आगमों में परमाणु भी कहा है। एक आकाश प्रदेश का स्वतंत्र

अस्तित्व नहीं है। आकाश प्रदेश को विज्ञान में (Field Element) कहा गया है। परमाणु को भी एक 'प्रदेश' कहा जाता है। संसारी जीव को 'प्रदेश' का ज्ञान नहीं होता परंतु प्रदेशों से निर्मित काया के परिणमन से उसे 'प्रदेश' का आभास होता है। उसी प्रकार संसारी जीव को परमाणु का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता पंरतु परमाणु में होने वाले परिणमन और उससे निर्मित स्कन्ध, प्रकाश, उष्णता तथा अन्य कार्यों के द्वारा उसे परमाणु का अनुमान होता है।

विज्ञान के अनुसार एटम को तोड़ा नहीं जा सकता, एटम अविभाजित है। एटम से कम मात्रा में मैटर का अस्तित्व ही नहीं है। **इलेक्ट्रान, प्रोटान, न्युट्रान आदि द्रव्य खण्डों से एटम बना है पंरतु एटम की किसी भी प्रक्रिया द्वारा एटम को इन में विभक्त नहीं किया जा सकता, न ही किसी प्रक्रिया से इन द्रव्य खण्डों को एकत्रित कर एटम का निर्माण किया जा सकता है। एटम शाश्वत है और शाश्वत होने से वह अविभाजित है, अंतहीन है। एटम को तोड़ नहीं सकते परंतु उसे उर्जा (Energy) में परिवर्तित कर सकते हैं। इसी प्रकार एनर्जी को विभाजित नहीं कर सकते परंतु उसे एटम में परिवर्तित कर सकते हैं।** इन तथ्यों के प्रति आगमिक भाषा में कहा जाएगा की व्यवहारिक नय से मैटर और एनर्जी दो भिन्न द्रव्य हैं पंरतु निश्चय नय से दोनों एक ही द्रव्य है। मैटर का एनर्जी में और एनर्जी का मैटर में परिणमन संभव है। इस प्रकार एटम वस्तुत: एनर्जी है जिसमें आकाश के गुरूत्वाकर्षण शक्ति के कारण **'भार'** का अनुभव होता है। अत: एटम रूपी एनर्जी का विभाजन संभव नहीं है। **एटम की आंतरिक रचना के कारण, एटम विभाजित होगा यह अवधारणा मिथ्या है। जीव के प्रदेश होने से क्या जीव को प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है? सूर्य आग का गोला है तो क्या सूर्य से प्रकाश को विभक्त किया जा सकता है? दोनों प्रश्नों का उत्तर यदि नहीं है तो एटम का विभाजन भी अंसभव है।**

6. जैन दर्शन, गाड पार्टिकल और थ्योरी आफ एवरीथिंग

जैन दर्शन के अनुसार यह संसार जड़ और चेतन द्रव्य की माया है। दोनों द्रव्य बहुप्रदेशी अस्तिकाय हैं। आकाशस्तिकाय भी अनन्त प्रदेशी द्रव्य है। **जीवास्तिकाय, पुद्‌गलस्तिकाय और आकाशस्तिकाय के प्रदेशों में कोई भेद नहीं है। भेद प्रदेशों से बनी काया में है।** प्रदेश अरूपी, अमूर्त होते हैं और मूल द्रव्य से उन्हें विभक्त भी नहीं किया जा सकता।

पुद्‌गलस्तिकाय के प्रदेश मूर्त, रूपी परमाणु के रूप में विभक्त होते हैं। **परमाणु में भार भी होता है। परमाणु जो एक आकाश प्रदेश के समान है मूर्त और रूपी कैसे बन गया? उसमें भार (Mass) कहां से आया? इसी प्रकार यह जानने की जिज्ञासा होती है कि असंख्यात आकाश प्रदेशों से बनी आत्मा में चेतना क्यों है और उन्हीं असंख्यात आकाश प्रदेशों से बने पुद्‌गल में चेतना क्यों नही है?** इन प्रश्नों का जो समाधान आगमों में प्राप्त है लगभग उसी प्रकार का समाधान विज्ञान में भी प्राप्त है जिसे Theory of Everything कहा जाता है। फ्रैंक विलझेक नामक वैज्ञानिक को इस सिद्धान्त की खोज के लिये सन् 2004 का नोबल पुरस्कार दिया गया था।

आगम के अनुसार जीव अनादि काल से कर्मों से बंधा है अर्थात् अनादि काल से कार्मण वर्गणा के परमाणु का अस्तित्व है। जैन अवधारणानुसार कार्मण वर्गणा के परमाणु लोक में सर्वत्र पाये जाते हैं। कार्मण परमाणु के आत्मा प्रदेशों में बंध जाने से जीवात्मा अथवा 'कार्मण शरीर' की रचना होती है। कार्मण परमाणु जैसा भार रहित पार्टिकल जब आकाश प्रदेशों में गमन करता है तो आकाश प्रदेशों के साथ उसका बंध होता है जिससे उस पार्टिकल

का भार बढ़ जाता है। लगभग इसी प्रकार की थ्यौरी पीटर हीग्ज नामक वैज्ञानिक ने ई. सन् 1964 में प्रस्तुत की थी। इस थ्यौरी के अनुसार आकाश एक एनर्जी फील्ड है जिसे हिग्ज फील्ड भी कहा जाता है। जब कोई भारहीन पार्टिकल हिग्ज फील्ड में प्रवेश करता है तो फील्ड के प्रदेश पार्टिकल के साथ बंध जाते हैं और उससे पार्टिकल भारी हो जाता है। इसी प्रकार इलेक्ट्रान, प्रोट्रान, न्यूट्रान आदि सब एटामिक पार्टिकल हिग्ज फील्ड के कारण परमाणु में बंध जाते हैं। हिग्ज फील्ड अथवा आकाशास्तिकाय के एक प्रदेश जितने क्षेत्र में गुरूत्वाकर्षण शक्ति, विद्युत-चुम्बकीय शक्ति तथा नाभकीय शक्ति का बल एक समान होता है जिस कारण सबएटामिक पार्टिकल परमाणु रूप में बंध जाते हैं। हिग्ज फील्ड क्वांटा को अथवा **'आकाश प्रदेश'** को **'गाड-पार्टिकल'** कहा जाता है क्योंकि इसी के कारण एनर्जी **'पार्टिकल'** का परमाणु में परिवर्तन हुआ है। **'आकाश प्रदेश'** अथवा गाड पार्टिकल की सहायता से पुदग्लस्तिकाय का पुदग्ल परमाणु में परिणमन होता है परंतु जीव अथवा चेतन तत्व की उत्पत्ति कैसे होती है? इसका उत्तर वैज्ञाानिकों के पास नहीं है। शरीर में तथा न्युरान नेटवर्क में वे जीव की तलाश कर रहे थे। वे अपने प्रयासों में विफल रहे। अब वैज्ञानिक जीव की तलाश भी आकाशस्तिकाय में कर रहे हैं।

वैज्ञानिक यद्यपि शाश्वत जीव के अस्तित्व को अस्वीकार करते हैं तथापि **'स्पेस-टाईम'** क्षेत्र में वे चेतन तत्व को ढूँढ़ रहे हैं। वैज्ञानिक यह मानने को बाध्य हो गये हैं कि जिस क्वांटम फील्ड से पौद्गलिक पदार्थों की उत्पत्ति होती है, कदाचित वही चेतना का भी स्त्रोत हो। वैज्ञानिक जानते हैं कि परमाणु का मूल स्वरूप Energy wave है जो जीव अथवा Observer को पार्टिकल रूप में दिखाई देता है अर्थात् परमाणु का खण्ड रूप, जीव के

अस्तित्व पर निर्भर है। यदि जीव नहीं होगा तो परमाणु पार्टिकल भी नहीं होगा। यदि परमाणु अनादि है तो जीव भी अनादि होगा। यदि जीव की दृष्टि बदलती है तो परमाणु और विश्व का स्वरूप भी बदलता है। कर्मों के कारण जीव के ज्ञान और दृष्टि **(दर्शन)** पर आवरण होता है। तदनुसार विश्व का स्वरूप भी बदलता है। अत: वैज्ञानिक एक विश्व के स्थान पर अनेक विश्व (Multi universe) की संभावना से इन्कार नहीं करते। आगमिक दृष्टि कोण से इस वैज्ञानिक अवधारणा का अर्थ है कि पंचास्तिकाय लोक एक है परंतु द्रव्य दृष्टि से लोक अनेक हो सकते हैं जैसे मध्य लोक, उर्ध्व लोक, अधो लोक आदि।

7. उपसंहार

'मैं आत्मा हूँ। मैं शरीर नहीं हूँ' यह ज्ञान नहीं है अपितु इन्फरमेशन है जिसे ग्रहण कर व्यक्ति एक्सपर्ट बनता है। एक्सपर्ट टेक्नॉलाजी का विकास करता है और ज्ञानी सत् की खोज करता है। भगवान महावीर केवलज्ञानी थे जिन्होंने द्रव्यों के 'अस्तिकाय' और 'परमाणु' स्वरूप का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त किया और घोषणा की कि **'अस्तिकाय'** एकत्व का और परमाणु अनेकत्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। विज्ञान में द्रव्यों का एकत्व क्वांटम फील्ड द्वारा और उनका पृथकत्व द्रव्यों के कार्पस्कुलर नेचर द्वारा दर्शाया जाता है। इस प्रकार **जैन दर्शन में द्रव्यों का निरूपण द्रव्यों के वेव नेचर और पार्टिकल नेचर दोनों स्वरूप में किया जाता है जो वर्तमान समय में क्वांटम फिजिक्स के विषय हैं।**

जैनदर्शन, क्वांटम फिजिक्स की तरह प्राबबिलिटी (Probability) का विज्ञान है जिसमें अनेकान्त, सप्तभंगी, स्याद्व ाद, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के परिप्रेक्ष में सत् का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। द्रव्यों में परस्पर विरोधी गुणों के अस्तित्व को

जैनदर्शन और क्वांटम फिजिक्स दोनों ही स्वीकार करते हैं। विज्ञान में द्रव्यों के इस लक्षण को Principle of complimentarity कहा जाता है जिसकी खोज नोबल पुरस्कार विजेता निल्स बोहर ने की थी।

Mass **(जड़)** Energy **(चेतन)**, Quanta **(परमाणु)** **और** Quantum Field **(अस्तिकाय) आदि का जो कान्सेप्ट भगवान महावीर ने लगभग २६०० वर्ष पूर्व दिया था वो वर्तमान वैज्ञानिक कान्सेप्ट से भिन्न नहीं है जिसका आदि, मध्य और अन्त स्वयं वह परमाणु है जिसका अवगाहन क्षेत्र एक आकाश प्रदेश है। इस कथन के साथ भगवान महावीर ने क्वांटम फिजिक्स के** Wave Function **और** Uncertainty Principle **का प्रतिपादन किया है। क्वांटम फिजिक्स का विकास अनेक वैज्ञानिकों द्वारा लगभग १०० वर्ष की अवधि में किया गया। वह कार्य भगवान महावीर ने अपने जीवन काल में ही समाप्त कर दिया इसीलिये तो वे सर्वज्ञ कहलाते हैं।**

8. संदर्भ सूची

1. पंचास्तिकाय, गाथा, 5
2. पंचास्तिकाय, गाथा, 6
3. पंचास्तिकाय, गाथा, 82
4. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5,सूत्र 10
5. प्रवचनसार, अध्याय 2, गाथा 69
6. पंचास्तिकाय, गाथा, 7
7. पंचास्तिकाय, गाथा, 74
8. भगवती सूत्र 16/6
9. भगवती सूत्र 21/5

10. तत्वार्थ सूत्र 5/25

11. सर्वार्थ सिद्धि 2: 38 :192 :8

12. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36,सूत्र 10

13. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36,सूत्र 4,5,6

14. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 5,सूत्र 19, 20

15. सर्वार्थ सिद्धि- 5/24

16. अचारांग सूत्र 1/5/2

17. सूत्र कृतांग सूत्र 17/1/1

18. तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 10, सूत्र 5

19. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 2

20. पंचास्तिकाय, गाथा 4

21. भगवती सूत्र, 5/8, 9

22. पंचास्तिकाय, गाथा 77

23. भगवती सूत्र, 3/3/153

24. भगवती सूत्र, 5/7

25. स्थानांग सूत्र 3/498

26. प्रवचनसार (ज्ञेयतत्वाधिकार), गाथा, 72, 73

27. भगवती सूत्र 25/4/740

28. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 12

29. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 28, सूत्र 13

30. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 14

31. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्याय 36, सूत्र 11

32. भगवती सूत्र, 14/ 4/7

33. प्रज्ञापना पद- 13

34. तत्वार्थ सूत्र, 5/14

परिशिष्ट 1

अवलोकित ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. अनुयोग द्वार सूत्र भाग 1, 2 –श्री ज्ञान मुनी जी महाराज
2. द्रव्यानुयोग भाग 1, 2 और 3 –मुनी श्री कन्हैयालाल जी महाराज
3. जिनधम्मों –आचार्य श्री 'नानेश'
4. कर्म की दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विवेचन –उपाध्याय एलचार्य श्री कनक नंदी जी महाराज
5. जैन दर्शन : मनन की मीमांसा –आचार्य महाप्रज्ञ जी
6. जैन दर्शन और अनेकान्त –आचार्य महाप्रज्ञ जी
7. जैन दर्शन –डॉ. महेन्द्र कुमार जैन
8. जैन दर्शन में जीव तत्व –जैनसाध्वी डॉ. ज्ञानप्रभाजी महाराज
9. पदार्थ विज्ञान –जिनेन्द्र वर्णो
10. जैन दर्शन –आचार्य देवेन्द्र मुनीजी महाराज
11. जैन दर्शन स्वरूप और विश्लेषण –आचार्य देवेन्द्र मुनी शास्त्री
12. जैन दर्शन –मुनी श्रीन्याय विजय जी
13. जैन दर्शन के मूल तत्व –विजय मुनी शास्त्री
14. जैन धर्म-दर्शन –डॉ. मोहन लाल मेहता
15. हिन्दी साहित्य और दर्शन –आचार्य सुशील कुमार
16. जैन-दर्शन में नय की अवधारणा –डॉ. धर्मचन्द्र जैन
17. स्याद्वाद : एक अनुशीलन –राष्ट्रसंत आचार्य श्री आनन्द ऋषि
18. जैन-दर्शन में आत्म-विचार –डॉ. लालचन्द जैन
19. अनुमाण प्रमाण –डॉ. प्रद्युम्न शाह सिंह
20. सम्यक दर्शन –आचार्य श्री पुष्पदंत सागर
21. जैन-दर्शन वाटिका –डॉ. साध्वी श्री प्रियदर्शना श्री
22. श्री तत्वार्थ सूत्र –पंडित सुखलाल जी

23. तत्वार्थ सूत्र जैनागम समन्वय

–आचार्य सम्राट श्री आत्माराम जी महाराज

24. श्री अनुयोग सूत्र –श्री मधुकर मुनि जी महाराज

25. श्री भगवती सूत्र –श्री मधुकर मुनि जी महाराज

26. Scientific Secretes of Jainism

–मुनिश्री नन्दघोष विजयजी गनि

27. Scientific Contents in Prakrit Canons

-Dr. N. L. Jain

परिशिष्ट 2

आगमिक और समानार्थक वैज्ञानिक शब्दों की सूची (Cononical words & their equivalent technical words)

आगमिक शब्द	वैज्ञानिक शब्द
1. अस्तिकाय	-Isotropic, Homogeneous body (Field)
2. आकाशस्तिकाय	-Vacuum Quantum Field/ Potential Field
3. आकाश	-Cosmic Space
4. अधर्मास्तिकाय	-Ve Potential Field/Retarding Field
5. अधर्म द्रव्य	-State of Rest
6. धर्मास्तिकाय	+Ve Potential Field/Accelerating Field.
7. धर्म द्रव्य	-State of Motion
8. जीवास्तिकाय	-Electromagnetic Energy Field
9. जीव	-Living Matter/Body consciousness
10. अजीव	-Non Living Matter
11. पुद्गलास्तिकाय	-Material Quantum Field
12. पुद्गल	-Mixed State of Mass & Energy/ Plasma/Matter
13. लोक	-Observable Space/Universe
14. अलोक	-Empty space, Space-Time Continuum
15. जड़	-Inertial Mass
16. चेतन	-Consciousness/Awareness/ Natural Instinct

आगमिक शब्द	वैज्ञानिक शब्द
17. सत्	-Absolute Truth
18. असत्	-Relative Truth
19. मिथ्यात्व	-Falsehood
20. तत्व	-Elementary Matter/Constituent Element
21. द्रव्यों का 'परमाणु' तथा 'प्रदेश' स्वरूप	-Dual Nature of Matter
22. सामान्य गुण	-General Properties
23. विशेष गुण	-Characteristic Properties
24. गुण	-Properties
25. लक्षण	-Identity/characteristics
26. अवगाहन गुण	-Gravity
27. उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य	-Law of Conservation of Mass and Energy
28. गुरू-लघु गुण	-Elasticity
29. अगुरू-लघु गुण	-Plasticity
30. जीव ग्राह्य पुद्गल	-Organic Matter
31. जीव अग्राह्य पुद्गल	-Inorganic Matter
32. प्रयोग परिणत पुद्गल	-Catalytic Agent
33. विस्रसा पुद्गल	-Organic Compound
34. परमाणु	-Quanta
35. पुद्गल परमाणु	-Atom, Material Particle
36. चतु:स्पर्शी परमाणु	-Energy Quanta
37. अष्टस्पर्शी परमाणु	-Material Quanta
38. आकाश प्रदेश	-Field Element

आगमिक शब्द	वैज्ञानिक शब्द
39. परमाणु प्रदेश	-Atomic Wave Function/ Probability Density
40. कार्मण, ध्वनि, मन, बुद्धि श्वासोच्छ्वास वर्गता के परमाणु	-Phonon
41. प्रकाश, उष्णता, आतप, उद्योत आदि	-Photon
42. मूर्त	-Shape, Form
43. अमूर्त	-Shapeless, Formless
44. रूपी	-Colour Spectrum/Visible
45. अरूपी	-Colourless/Invisible
46. परमाणु स्पर्श	-Atomic Charges & Quantum Energy States
47. रूक्ष स्पर्श	-Neutral, Positively Charged
48. स्निग्ध स्पर्श	-Negatively Charged/Atomic
49. शीत स्पर्श	-Lower/Ground Energy States
50. उष्ण स्पर्श	-Higher/Excited Energy States
51. कर्म	-Work/Motion/Activity/Emotions
52. कर्म-बंध	-Photon-Phonon Interactions/ Binding Energy
53. उपयोग गुण	-Capacity to do work
54. ज्ञानोपयोग	-Ability to acquire knowledge
55. चेतनोपयोग	-State of Consciousness/Sensing Ability
56. स्कंध	-Molecule
57. स्कंध देश	-Radical

आगमिक शब्द	वैज्ञानिक शब्द
58. स्कंध प्रदेश	-Intramolecular distance/Bond Length
59. स्थूल-स्थूल	-Solids
60. स्थूल-तरल	-Liquids
61. स्थूल-सूक्ष्म	-Gas
62. सूक्ष्म-सूक्ष्म	-Colloidal/Nano Particles
63. सूक्ष्म-स्थूल	-Plasma
64. रस	-Taste
65. गंध	-Olefactory Property
66. वर्ण	-Colour Spectrum
67. स्पर्श	-Sense of touch, Status of Electric charge
68. वर्ण अंश	-Grey tone
69. ईकाई	-Unit
70. संस्थान	-Geometrical shapes & patterns
71. वृत्त	-Spherical
72. परिपण्डल	-Annular Ring
73. आयात	-Linear
74. संकोच-विस्तार	-Contraction (Compression) / Expansion
75. गति	-Motion
76. देशांतर	-Translatory Motion
77. कंपन	-Vibratory Motion
78. स्पंदन	-Rotation/Simple Harmonic Motion
79. विग्रह गति	-Curvilinear Motion
80. अविग्रह गति	-Rectilinear Motion

आगमिक शब्द	वैज्ञानिक शब्द
81. ऋजु गति	-Motion in Straight line
82. कुटिल गति	-Zig-Zag Motion
83. आत्मा	-Soul/spiritual element
84. परमात्मा	-Liberated Soul
85. वीतराग	-Renunciation
86. पर्याय	-Different Physical and Chemical Forms
87. नय	-Variables/Parameters/Reference System
88. पर्याय	-Eligible
89. अभव्य	-Ineligible
90. संज्ञी	-Intellect
91. अंसज्ञी	-Unintellect/witthout intelligence or brain
92. अतीन्द्रिय	-Insensible
93. स्थूल	-Macro
94. सूक्ष्म	-Micro
95. औदारिक वर्गणा के पुद्गल	-Organic & Inorganic Matter
96. वैक्रिय शरीर	-Transformable body
97. तेजस् शरीर	-Luminous body
98. काल	-Time
99. प्रमेयत्व	-Density
100. निक्षेप	-Correlation